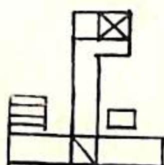


राजकमल प्रकाशन

दिल्ली-६ पटना-६

रिश्ता और अन्य कहानियाँ





गिरिराज किशोर

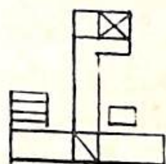
मूल्य : ~~४.५०~~

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
८ फैज बाज़ार, दिल्ली-६

मुद्रक : नवीन प्रेस, यूनिट-२
ओखला-नयी दिल्ली-२०

सज्जा : श्री सुखदेव दुग्गल

क्रम



रिश्ता और अन्य कहानियाँ

शीर्षकहीन

उससे मेरी अचानक मुलाकात हो गयी थी। उस समय वह मुलाक़ात कोई ख़ास अहमियत नहीं रखती थी। सिर्फ़ एक पुराने दोस्त से नयी मुलाक़ात कही जा सकती है। दरअसल, मैं इनकमटैक्स की तारीख़ में गया था। खड़े-खड़े काफ़ी देर हो गयी थी, मामला पेश होने की कोई उम्मीद नज़र नहीं आ रही थी। ऊबकर लपचकनों की तरह इधर-से-उधर घूम रहा था। अपने दफ्तर में मैं चाहे 'बॉस' हूँ लेकिन यहाँ गरज़मंदों से भी गया-बीता था।



काफ़ी देर बाद मुझे उसका पता चला। लोगों ने बताया कि यहाँ एक वर्मा बाबू हैं, उनसे जाकर मिलिए, शायद वे कुछ करा सकें। उसके बारे में बहुत-सी बातें कही गयीं, लेकिन सब बातें मुझे फालतू लगीं। सिर्फ़ यही समझ में आया कि वह केस की

जल्दी पेश करा सकता है । मैं उसी धुन में उसके कमरे में दाख़िल हुआ । मेरा दाखिल होना एक रोटीन था । मैं पूरी तरह से यही सोच-कर गया था अगर दस-पाँच रुपये ख़र्च भी हुए, तो कोई बात नहीं । उससे मैं यही कहूँगा कि इस मामले को वह जल्दी निबटवा दे, क्योंकि मुझमें इतना धैर्य नहीं था, ख़ैर मैं गया । उसकी सीट खाली थी । पता चला साहब की पेशी में है । मुझे खयाल आया मेरे दफ्तर में भी लोग क्लर्कों की सीट पर से अनुपस्थित होने पर इसी तरह की बात करते होंगे । हालाँकि अपने बारे में साहब शब्द मैं अक्सर सुना करता था । अपने साथ इस शब्द को जोड़कर प्रसन्न होने की कोई बात नहीं थी । लेकिन यह बात सोचकर मैंने फुरफुरी महसूस की कि लोग पेशी वाली बात मेरे बारे में भी करते होंगे ।

वह साहब के पास से लौटा तो उसकी गर्दन नीची थी और तीन-चार फ़ाइलें बगल में दबाये झपटा चला आ रहा था । मुझे लगा वह अधेड़ उम्र का कोई आदमी है । कुर्सी पर बैठकर भी उसने मेरी तरफ़ नहीं देखा । बल्कि दूसरी तरफ़ बैठे एक बाबू को पुकारकर कहा, 'राम-आसरे बाबू, शाम को जाते समय साहब से मिल लेना ।'

वह क्लर्क लपककर आया, 'क्यों ?' उसके चेहरे पर भय-मिश्रित जिज्ञासा थी। उसने काफ़ी तटस्थता से कहा, 'कुछ नहीं, कोल डिपो वाली फ़ाइल के बारे में कुछ पूछना है ।'

वह अपनी सफ़ाई देने लगा, 'वर्मा साहब, आपने तो नोट देखा है, मैंने उसमें सही-सही बात लिख दी है । यह ज़रूर है कि उसके एकाउंट में थोड़ी-सी भूल है । लेकिन वह आइटम छूट गया था, जानकर कुछ नहीं किया ।'

उसने कोई ध्यान नहीं दिया । काफ़ी ठंडेपन से कहा, 'मिल लेना ।' वह बड़बड़ाता चला गया, 'यह भी कोई बात है, कितनी भी ईमानदारी से काम किया जाए···साहब बुला रहे हैं । बड़ा साहब बना फिरता है···। अपने-आप तो चाहे पूरी कुतुबमीनार चढ़ा जाए, दूसरा सुई की नोक

भी दबा ले तो मिर्च लग जाती है।'

उसकी बात का मुझ पर विशेष असर नहीं हुआ। सिर्फ़ इतना ही लगा सभी अफ़सरों के बारे में इसी तरह की बातें होती होंगी। मैंने गर्दन हिलाकर नकारना चाहा। लेकिन मुझे लगा कोई चीज़ गोंद की तहर चिपक गयी है।

अनजाने ही दोनों हाथ मलने लगा। मेरी नज़र उसकी तरफ़ गयी, वह भी मुझे देख रहा था। उसकी आँखों में अनिश्चयात्मक परिचितता थी। मेरे मुँह से अचानक निकल गया, 'अरे तुम ?' शायद उसके मुँह से भी कुछ ऐसी ही बात निकली थी। मेरा खयाल है, उसने तुम की जगह आप कहा था। इस बात से मुझे प्रसन्नता हुई।

मैंने उसकी कौली भर ली। कौली भरते समय मुझे लगा—लोग देख रहे हैं। लोगों के देखने के प्रति मैं इतना अधिक सचेत हो गया कि मैंने जल्दी से उनकी पीठ पर से अपने हाथ हटा लिये।

मैंने उससे पूछा, 'तुम यहाँ कब से हो ?'

उसने एक क्षण रुककर कहा, 'तभी से। अब ऑफ़िस सुपरिंटेंडेंट हो गया हूँ।' यह बताने में उसने काफ़ी जल्दी की।

शायद मैंने इसीलिए पूछा था कि वह मेरे बारे में भी वही बात पूछे। बाद में अपने को ही लगा मैं थोड़ी जल्दी कर रहा हूँ। यह स्वाभाविक था कि वह मेरे बारे में भी पूछता। आखिर में पूछा भी, 'और आप ?'

उसके आप कहने से मुझे यही ख़याल हुआ कि वह मेरे व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित हुआ है और वही उसे आप कहने के लिए मजबूर कर रहा है। जिस तरह की दोस्ती थी उसके आधार पर उसे तू कहना चाहिए था। पहले भी वह यही कहता था। मैंने जानकर कुछ इस तरह बताया कि वह यह अनुभव करे कि मैं एक अफ़सर हूँ और वह क्लर्क। थोड़ा झिझकते हुए कहा, 'भई मेरा क्या, रोटी कमा-खा रहा हूँ, सिविल डिफ़ेंस में हूँ।' उसके चेहरे पर चमक-सी महसूस हुई। कुछ रुककर

मैंने बताया, 'डिप्टी कंट्रोलर'। उसने कुछ इस तरह देखा कि वह यह कहते-कहते रुक गया है—यह तो मैं पहले से ही जानता था कि तुम इसी तरह का कोई ओहदा बताओगे। धीरे-धीरे वह सुस्त पड़ता गया।

मैंने उससे यह भी कहा, 'मैं यहाँ इनकमटैक्स के मामले में आया था, लेकिन पता चला कि तुम यहीं हो, बस काम-वाम छोड़कर तुम्हारे पास चला आया। काम तो ज़िन्दगी-भर होता रहता है। यार से कब-कब मिलना होता है !' मेरी बात से उसकी आँखें नम हो गयीं। उसकी आँखों में वास्तविकता और गहराई थी। मैंने दूसरी तरफ़ गर्दन घुमा ली और अनुभव किया कि स्नेह की वास्तविकता और गहराई को बहुत देर तक बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। हालाँकि मुझे याद आ गया, हॉस्टल से चलते समय मैं ही बहुत रोया था। तब यही खयाल था शायद हम लोग एक-दूसरे के बिना रह नहीं सकेंगे। इस तरह की बातें शायद हम लोग इसलिए सोचते हैं कि कोई खास फर्क नहीं पड़ता। सब सोचना मुझे छोटापन लगा, उसकी आँखों में अभी भी वही बात थी। हमने साथ-ही-साथ एक-दूसरे की ओर देखा।

मैंने उससे पूछा, 'तुम तो यार, काफी सफ़ेद हो गये।'

वह केवल हँसा, कुछ देर बाद बोला, 'आप तो काले हैं!' इस वाक्य ने मुझे अधिक प्रसन्न नहीं किया। मुझे उसे टोक देना पड़ा, 'यह आप-आप क्या लगायी है? उसने मेरे टोकने पर काफ़ी संजीदगी के साथ कहा, 'हर तरह के अफ़सर को आप कहने की आदत पड़ गयी है।'

मैं हँस दिया और पूछा, 'क्यों, तुम मुझसे इसी तरह बात करोगे? मैंने तेरे साथ क्या अफ़सरी झाड़ी!'

वह बोला, 'नहीं यार, तुम्हारे अफ़सरी झाड़ने की बात नहीं, हम लोगों की क्लास ही ऐसी है, हर अफ़सर खुदा दिखायी पड़ता है।' मैं फिर हँस दिया। बीवी-बच्चों के बारे में पूछा तो बोला, 'किसी दिन तुम आओ या हम लोग आयें।'

मैंने आँख दबाकर कहा, 'पहले तुम लोग आओ, अपने का क्या,

अपन तो फकद्दम हैं—आज हाज़िरी लगा चले ।'

उसने उसी संजीदगी के साथ कहा, 'मैं जानता था तुम यही कहोगे··· ख़ैर, मेरी पत्नी तुम्हारे यहाँ आकर बहुत ख़ुश होगी । उसे बड़े आदमियों के घर जाना काफ़ी पसंद है ।'

मैंने थोड़ी नाराज़गी के साथ कहा, 'तुम बड़े आदमी—बड़े आदमी क्या लगाये हो ! मैंने तुमसे कभी भेद-भाव किया है ! तुम इस तरह की बातें करोगे तो ठीक नहीं होगा ।'

वह मुस्करा पड़ा । थोड़ी देर बाद उसने अपने-आप ही पूछा, 'तुम आये कैसे ?'

मैंने सब कागज़ निकालकर उसके सामने रख दिये । उसने पढ़ा, फिर बोला, 'अच्छा तुम जाओ, मैं देख लूंगा ।'

'और पेशी ?' उसने मेरे सवाल का जवाब बड़े तीखेपन से दिया, 'जो काम तुम अफ़सर लोग नहीं कर सकते, वही हम लोग करते हैं ।' मैं उठकर चला तो वह बाहर तक छोड़ने आया । मैंने चलते समय फिर पूछा, 'अच्छा तो भाभी को लेकर कब आ रहे हो ?'

'अरे, आ ही जायेंगे ।'

मैंने चुटकी ली, 'यार, तुम इतना मत डरो । मैं अकेला ज़रूर हूँ पर तुम्हारी श्रीमतीजी को कोई ख़तरा नहीं । वैसे तो तुम उस जमाने में संयुक्त-पत्नी वाला दर्शन बघारते थे और अब ऐसा परहेज़ करते हो ।'

वह हँसकर बोला, 'अरे, आप लोगों का हिस्सा तो हम लोगों की पत्नियों में सदा ही होता है ।'

मैंने उसके चेहरे की तरफ़ ग़ौर से देखा, वह हद से ज्यादा ठंडा था । मैंने फिर पूछा, 'अच्छा तुम यह बताओ कि तुम्हारा घर कहाँ है ? कब मिलते हो ? क्योंकि तुम्हारा आना तो मुझे संभव नहीं लगता ।'

वह तुरंत बोला, 'अरे नहीं यार, हम लोग ज़रूर आयेंगे···भला तुम्हारे यहाँ नहीं आयेंगे ?' पहली बार उसके चेहरे पर भावनाओं की गर्मी महसूस हुई । मैंने सोचा शायद उन दोनों के लिए इतना ही काफ़ी

होता है। मैंने फिर कहा, 'तारीख तय करो।'

उसने सोच-विचारकर इतवार बताया। मैंने उससे कहा, 'अगर इतवार को आने की बात है तो सवेरे दस बजे आना, दोपहर का खाना भाभी अपनी देख-रेख में बनवायेंगी और हम लोग खायेंगे।' इस बात से वह सुस्त हो गया, फिर बोला, 'अच्छा यही प्रोग्राम सही, हमारी पत्नी को यह सब बहुत पसंद है। शायद यही आदत उसके पिता की थी। मुझे लगता है तुमसे मिलकर वह बहुत खुश होगी।'

मैं चलने लगा तो वह बोला, 'किसी और को न बुलाना, हम लोग फ्री फ़ील नहीं करेंगे।' वह कुछ और भी कहना चाहता था लेकिन चुप रहा। मैंने चलते हुए कहा, 'अच्छा तो इतवार को पक्का!'

उसने गर्दन हिला दी। फिर बोला, 'बच्चों को भी लेते आयें?' मैंने छूटते ही कहा, 'यह भी कोई पूछने की बात है?'

'नहीं, मैंने वैसे ही पूछा, बच्चे घर को अव्यवस्थित कर देते हैं। वैसे भी हम लोग अपने बच्चों को बहुत अच्छी तालीम नहीं दे पाते··· सब कामचलाऊ रहता है।'

मैंने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, 'अरे नहीं यार, कैसी बातें करते हो···बच्चों में कोई फर्क नहीं होता, सब बच्चे एकसे होते हैं।' मेरी इस बात पर जाने क्यों वह हँस दिया।

●

मैं बराबर उसके बारे में सोचता रहा। मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह इतना दब जाएगा। वह काफ़ी मुँहफट और अलमस्त था। लेकिन अब वह ज़िंदगी के लिए काफ़ी ठंडा पड़ गया था। हम ऐसे लोगों को मज़ाक में 'इंटेलेक्चुअल' कहा करते थे। मुझे बाद में लगा मैंने उसे इंटेलेक्चुअल क्यों नहीं कहा, शायद उसे बीते हुए दिन याद आ जाते और वह कुछ देर के लिए उस दबाव से बाहर निकल सकता।

न चाहते हुए भी मैंने सोचा शायद वह अपनी पत्नी से खुश नहीं रहता, मेरे मन में उसकी पत्नी से मिलने की इच्छा हो आयी और मैं

उसकी शक्ल-सूरत के बारे में सोचने लगा। मुझे लगा उसकी पत्नी से मेरा परोक्ष रूप से परिचय हो गया है। किसी के बारे में इतना अधिक सोचना और दिमाग में उसकी कोई तस्वीर बना लेना प्रत्यक्ष परिचय से कम नहीं होता। उस दिन के बाद भी मेरे दिमाग में कई बार उसका और उसकी पत्नी का ख़याल आया और मुझे उसकी पत्नी से मिलने की उत्सुकता को दबाना पड़ा।



इतवार को मेरे पास सवेरे से ही लोगों का ताँता लगा हुआ था। अकेलों के बारे में लोगों का खयाल होता है उनको इतवार की क्या ज़रूरत ! पत्नी और बाल-बच्चे वाले लोगों को ही इतवार मिलना चाहिए।

मैं सामने वाले कमरे में लोगों से मिल रहा था। एक रिक्शा आकर रुका तो काफ़ी देर तक वह रुका रहा। गेट से उसके पहिये दिखायी पड़ते रहे। सवेरे से उन लोगों का ध्यान बना था। मुझे ख़याल हुआ कहीं वे लोग किसी संकोच के कारण बाहर ही तो नहीं रह गये। मैं उठकर गया तो उसकी मिसेज़ बड़े ज़ोरदार शब्दों में कह रही थी, 'आपके दोस्त हैं या अफ़सर, इस तरह संकोच कर रहे हैं ?'

उसका ख़याल था, 'नहीं, इस समय वह लोगों से मिल रहा है, बेकार उसे असुविधा होगी। चलो, इस बीच कहीं और हो आते हैं।'

जाकर मैंने उसका कान पकड़ लिया, 'क्यों तेरा दिमाग खराब तो नहीं, इस तकल्लुफ़ का क्या मतलब! अब तू मेरी सुविधा-असुविधा का ख़याल करेगा ? हॉस्टल में तो एक मिनट के लिए भी पीछा नहीं छोड़ता था।' उसे मेरा कान पकड़ना शायद पसंद नहीं आया। मुझे भी लगा शायद मैंने यह ज़्यादती की है। ऐसा मैंने उसकी पत्नी पर प्रभाव डालने के लिए किया था जिससे कि वह यह समझ ले, हम लोग अभिन्न मित्र थे। मैंने उसकी परवाह न करके उसकी पत्नी से कहा, 'माफ़ किजिए, मैंने आपके श्रीमान् जी के साथ ऐसा सलूक किया, दरअसल आपके आ जाने से यह ऐसा हो गया है, नहीं तो यह बड़ा फक्कड़ था'। मेरी बात से उसके चेहरे पर

कुछ हल्कापन आया। उसने खुलकर मेरी ओर देखा।

लेकिन उसकी पत्नी तुरन्त बोली, 'वाह, आप भी अपने दोस्त की तरफ़दारी करने लगे। ये तो कभी भी फक्कड़ नहीं थे, जब से मैं आयी हूँ, तब से ये ऐसे ही हैं। मैं तो खुद ऐसा ही फक्कड़पन पसंद करती हूँ। मेरे पिताजी भी अपने दोस्तों से इसी तरह मिलते थे। मैं स्वयं ऐसे वातावरण में पली हूँ·· यहाँ आकर···' उसने वाक्य पूरा नहीं किया, जीभ दबाकर चुप हो गयी।

उसकी पत्नी की बात मुझे बहुत अच्छी लगी। उसकी आँखें बड़ी-बड़ी थीं और अपने पति के बारे में बात करते समय उन आँखों में चमक आ गयी थी। मैंने उम्र का अन्दाज़ लगाना चाहा। मेरे दोस्त के मुकाबले वह काफ़ी जवान और ताज़ा लग रही थी। मैंने पूछा, 'अरे, बच्चे कहाँ हैं ?'

मेरे पूछने पर पत्नी ने पति की ओर देखा। मैंने फिर सवाल दोहराया, तो वह मुस्करा दी और बोली, 'इनकी चाची के घर गये हैं।'

'क्यों ?'

इस बार वह बोला, 'दरअसल, मैंने सोचा तुम्हारे यहाँ बच्चे-वच्चे तो हैं नहीं, बेकार सब परेशान करेंगे।'

मैंने गुस्से में आकर कहा, 'तुम आदमी हो या पाजामा, तेरे बच्चे क्या मेरे बच्चे नहीं ?'

उसने बड़े ठंडेपन से कहा, 'यह बात इनसे पूछो।' उसकी इस बात से मैं क्षण-भर के लिए हतप्रभ हो गया। मुझे लगा उसका यह मज़ाक ठीक नहीं, लेकिन उसकी पत्नी ने एक नज़र डालकर कहा, 'इसमें क्या बात है, पिता और चाचा में कोई फर्क होता है ?'

मैं ज़ोर से हँस दिया। हँसते हुए कहा, 'कहो बच्चू, अब क्या कहना है।' वह चुप रहा। उसकी पत्नी का यह अन्दाज़ मुझे बहुत अच्छा लगा।

दूसरे कमरे में लोग बैठे थे। उन्हें बैठा छोड़कर ही मैं गया था। उन लोगों को निबटाने के लिए उसी कमरे में फिर लौट आया। ज़्यादातर लोग

किसी-न-किसी काम से आये थे, उनकी बातों में मुझे मज़ा नहीं आ रहा था। मैं चाहता था वे लोग जल्दी चले जायें। उन लोगों से बात करते हुए मैं बराबर उन दोनों के बारे में सोच रहा था। उसकी पत्नी के बारे में सोचते समय मुझे ज़्यादा ज़ोर नहीं पड़ता था। लेकिन उसका चेहरा मुझे काफ़ी भरा-भरा और तना हुआ मालूम पड़ता था। मैं समझ नहीं पाता था कि वह अपनी पत्नी की तरह सहज क्यों नहीं है।

लोग अपनी-अपनी बातें कह रहे थे। मैं हूँ-हाँ करता जा रहा था। बीच-बीच में लोगों से कह भी देता था, 'अच्छा और कोई काम ?' मेरे इस तरह पूछने से उन लोगों को अपने जाने का ख़याल हो आता था और वे एक-दो मिनट इधर-उधर करवट बदलकर चल देते थे। उन सब लोगों को बिदा करने में मुझे अतिरिक्त मेहनत पड़ी। जब मैं उनके पास वापस पहुँचा तो उसकी पत्नी उससे कह रही थी, 'आपने एक बात देखी, आपके ये दोस्त बिल्कुल बाबूजी की तरह हँसते हैं, बातें भी उसी तरह करते हैं। अपने दोस्तों के साथ भी बिलकुल उसी तरह बेतकल्लुफी से पेश आते हैं।'

उसने उसी ठंडेपन के साथ 'हूँ' किया।

मुझे देखते ही वह उठ खड़ा हुआ। मैंने उसके कंधों पर हाथ रखकर दबा दिया, 'यह क्या हिमाकत, आप खड़े क्यों हो गये···तुझे क्या हो गया है, हर वक्त दफ्तर के ही मूड में रहता है।' वह बैठ गया।

मैंने उसकी पत्नी से पूछा, 'घर में भी यह इसी तरह उठता-बैठता है ?'

वह ज़ोर से हँस पड़ी, 'नहीं, घर में हम सबको अपना असिस्टेंट समझते हैं।' उसके चेहरे पर हल्की-सी सख्ती आ गयी। मैं जानकर ज़ोर से हँस पड़ा, फिर बात टालने के लिए कहा, 'फिर तो रोटी को यह फ़ाइल समझता होगा···थाली को नोट शीट।' मैंने उसी की तरफ़ देखकर पूछा, 'क्यों ?' वह क्षण-भर रुककर बोला, 'यह भी इन्हीं से पूछ लो।' उसकी पत्नी थोड़ी गंभीर हो गयी।

मैंने वातावरण बदलने के लिए कहा, 'अच्छा एक बात बताओ !

तुम्हें कभी रानी की याद नहीं आती ?'

वह हल्का-सा मुस्कराया। मुझे उसके मुस्कराने से लगा आदमी चाहे ज़िदगी के किसी भी दौर में हो, साथ पढ़ी लड़कियों का नाम आते ही लड़का बन उठता है। वह शरमाता हुआ बोला, 'यार छोड़ो, मैं तो तब भी उसमें कोई इन्टरेस्ट नहीं लेता था···तुम्हीं गली के मोड़ पर खड़े रहते थे, मैं तो तुम्हारा साथ देने के लिए चला जाता था।'

उसके चेहरे से लगा कि वह काफ़ी सहज हो गया है। टाँग फैलाकर बैठ गया और धीमे-धीमे मुस्कराने लगा। मैंने बात को और आगे बढ़ाया, 'यह तुम झूठ बोलते हो। कमरे में आकर तुम क्या-क्या किया करते थे···उसका नाम भी नापाक कर देते थे। उस बार उस बेचारी की कापी छूट गयी थी, उसी पर तुमने दुनिया का नक्शा बना दिया था।'

उसने मेरी कमर पर हाथ मारकर कहा, 'क्या बक रहे हो···उस सबके पीछे तुम थे, तुमने ही मुझे चढ़ाया था।'

मैं तुरंत बोला, 'अभी तुम्हारी श्रीमतीजी के सामने कच्चा चिट्ठा खोल दूंगा। उस रोज़ गंगा किनारे तुम पहुँचे थे या मैं ? पता चल गया आज वह अपने घर वालों के साथ बोटिंग के लिए जा रही है, तो तुम भी जा डटे। उसने 'आउट ऑफ़ कर्टसी' तुम्हें भी बुला लिया था और और तुमने···?'

वह बहुत खुश हो गया और बड़ी मुश्किल से अपनी खुशी को जब्त करता हुआ बोला, 'अच्छा, अब ज़्यादा मत बको।'

उसकी पत्नी ने तुरंत पूछा, 'फिर क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं, उसके घर के चक्कर लगाने शुरू कर दिये और एक दिन डाँटकर निकाल दिये गये।'

वह तुरंत बोला, 'झूठ मत बोलो। डाँट कब लगी। मैंने खुद ही जाना बंद कर दिया था। उसका बाप तो जब भी मिलता था, आने के लिए कहता था। मैंने ही सोचा बेकार उस बेचारी को क्यों बदनाम किया जाये। फिर बड़े बाप की बेटी जानकर पत्थर के नीचे उँगली

फँसाने से क्या लाभ ! फँस जाये तो बात दूसरी।' उसने पत्नी की तरफ़ देखा।

मैंने बात खत्म करने के लिए कहा, 'अमा यार, बनो मत, मुझे सब मालूम है। खैर छोड़ो···अच्छा, यह बताओ तुम इतने बदल कैसे गये ? यह तो ठीक है कि उम्र के साथ आदमी बदलता जाता है, लेकिन इतना नहीं···कहाँ तूफ़ान मचाये रहते थे और कहाँ बिल्ली बन गये।'

यह कहकर मुझे लगा इस बात को इस समय नहीं उठाना चाहिए था। वह फिर गंभीर हो गया। उसके बदले चेहरे से लगा—दो मिनट पहले उसकी जगह कोई और था। उसने साँस छोड़ते हुए कहा, 'यार छोड़ो, हम लोगों की बात तुम नहीं समझ सकते · अफसर हो न।' अपनी बीवी की तरफ़ देखकर बोला, 'ये भी नहीं समझतीं, ये अफ़सर की बेटी है। जो इनके पिता हैं वह मैं नहीं हूँ···वैसे मैं यही मानता हूँ जिस ज़िंदगी में आदमी रहे, उसी के अनुसार बनकर भोगना चाहिए। क्लर्की करते हुए अफ़सर बनकर कैसे जी सकता हूँ।'

मैंने उसकी पत्नी की तरफ़ देखा, वह चुप थी। उसकी चुप्पी मुझे बहुत पसंद नहीं आयी। कुछ ऐसा महसूस हुआ, उन दोनों के चेहरे अलग-अलग दिशाओं में हैं। क्षण-भर के लिए लगा उस कमरे की दीवारें अपनी जगहों से हटकर हम लोगों के बीच आ गयी हैं और उन्हीं दीवारों ने हम सबकी आवाज़ें सोख ली हैं।

मैंने बहुत हिम्मत करके उसकी पत्नी से कहा, 'आपका तो वायदा था, अपने हाथ से खाना खिलायेंगी ··चलिए खाना तैयार कराइए। हम जैसों को आपके हाथों का बना खाना कहाँ नसीब होता है।' उसकी पत्नी ने मेरी तरफ़ भरपूर नज़र से देखा, फिर बोली, 'नहीं, अब तो छुट्टी दीजिए। बच्चे भी दूसरी जगह हैं, उनको भी लाना है।'

उसने अपनी पत्नी की तरफ़ देखा और गर्दन झुका ली। मैंने झटके के साथ कहा, 'यह कैसे हो सकता है, मैंने तो इससे यही कहा था आप लोग

दिन-भर रहेंगे··यहीं खाना होगा।' एकाएक यह परिवर्तन कैसे हो गया।

'नहीं भाई साहब, इस समय जाने दीजिए···छुट्टी का दिन है। घर की देखभाल के लिए भी आज का ही दिन मिलता है। आप किसी दिन हमारे यहाँ खाना खाइए···जो आपको पसंद होगा, वही बनाकर खिलाऊँगी।' उनकी बातों ने मेरे दिमाग में काफ़ी तनाव पैदा कर दिया था। मैं समझ नहीं पा रहा था इस बात का क्या जवाब दिया जाये। मैंने उसी से पूछा, 'क्यों यार, हम क्या इसी व्यवहार के काबिल हैं! आप लोग पहली बार आये और बिना खाये-पिये लौट जायें···इसका मतलब तो यह यह हुआ कि आप लोग मुझसे नाराज़ हैं।'

उसने मेरी तरफ़ देखकर कहा, 'यह बात तो तुम इन्हीं से पूछो, मुझे तुम्हारे घर खाने में क्या एतराज़ हो सकता है। ये मेरे साथ आने-जाने में असुविधा अनुभव करती हैं। बताओ, मेरे ही हाथ में क्या है···जो भगवान् ने बना दिया, उसे कैसे बदल सकता हूँ।'

पत्नी का चेहरा तमतमा आया और पाँव पंजों के बल खड़े हो गये। एड़ी पर सलवटें नज़र आने लगीं। क्षण-भर को लगा दोनों के बीच काफ़ी कहा-सुनी हो जायेगी। हालाँकि मेरे लिए यह पहला अनुभव होता। धीरे-धीरे उसकी बीवी के चेहरे की लाली कम होने लगी और पाँव ज़मीन पर टिकने लगे। वह बिना बोले उठी, फिर बैठ गयी। वह बाहर की तरफ़ देख रहा था। मैंने पहली बार महसूस किया पानी की सतह खतरे के निशान तक कैसे पहुँचती है और बिना बाढ़ के उतर जाती है। कुछ देर बाद वह उठी और मुझसे बोली, 'आपकी रसोई कहाँ है?'

मैंने अतिरिक्त प्रसन्नता दिखलाते हुए कहा, 'यह हुई न बात, हम तो तीन रोज़ से आस लगाये बैठे थे—भाभी आयेंगी, अपने हाथ से बनाकर खाना खिलायेंगी। आपको यह भी तो सोचना चाहिए, इसे तो रोज़ पूरी-पकवान बनाकर खिलाती हैं, कभी-कभी हम जैसे लावारिसों को भी पूछ लें।' वह हँस दी। उसके हँसने में अभी तक सहजता नहीं आ पायी थी। मैंने उसके पति से कहा, 'अभी भी बाहर ताक-झाँक करने की आदत नहीं गयी। अब वह ज़माना खत्म हो गया, हॉस्टल की खिड़की

में बैठा रहता था। किसी दिन कोई 'माल' नहीं दिखलायी पड़ता था, तो उपले बेचने वाली को ही छेड़ देता और गाली खाता था। इस बात पर वह फिर हँस दिया। लेकिन तुरंत ही बोला, 'वे सब बातें याद न दिलाया करो, क्योंकि अब मैं उस ज़माने की बात नहीं सोचता। न वह ज़माना मेरे पास लौटकर आ सकता है और न मैं उसके पास जा सकता हूँ।'

मैं उसकी पत्नी को रसोई में ले गया। नौकर खाना बनाने में लगा था। मैंने उससे कहा, 'देखो, सब चीज़ें मेम साहब से पूछकर तैयार करना···मेम साहब बहुत बढ़िया खाना बनाती हैं। इनको पसंद नहीं आया, तो फिर कभी तुम्हारे हाथ का खाना नहीं खायेंगी और न अपने हाथ का हमको खिलायेंगी।'

मैंने उसकी तरफ़ देखा तो वह आँखें फैलाये मेरी तरफ़ देख रही थी। मेरे देखते ही उसने आँखें झपका लीं। फिर बोली, 'बिलकुल आपकी तरह ही हमारे पिताजी भी हैं। इसी तरह मज़ाक करना, लोगों को हँसाना···मैं हमेशा सोचा करती थी पिताजी जैसा कोई आदमी हो सकता है ? आपका कमरा देखकर भी मुझे उनकी याद आयी थी। वे भी अपना कमरा इसी तरह करीने से रखते हैं। जिस तरह आपको हाथीदाँत के 'शो पीसेज़' रखने का शौक है, उनके कमरे में भी इसी तरह 'शो पीसेज़' रखे रहते हैं। पलंग के बराबर वाला 'पेडेस्टल लैंप' भी बिलकुल वैसा ही है।'

मैं हँस दिया। उसकी बातों से मुझे प्रसन्नता हो रही थी। मैंने उससे कहा, 'चलिए, आपको पूरा घर घुमा दूँ···इसी बहाने आप और तारीफ़ करेंगी।'

मेरी स्टडी में मेरे बहुत-से चित्र लगे थे। सब चित्र अलग-अलग पोज़ों में खिचवाये थे। दरअसल मुझे फोटो खिंचवाने का बहुत शौक है। उन चित्रों को देखकर वह बच्चों की तरह बोली, 'वंडरफुल ! यू आर वेरी मच लाइक माई फ़ादर···' उसके मुँह से अंग्रेज़ी का वाक्य सुनकर मैं थोड़ा-सा चौंका। वह बोलती गयी, 'आप जानते हैं बाबूजी के कमरे

में भी उनकी हर उम्र के अलग-अलग पोज़ों में खिंचे बहुत-से फोटो लगे हैं—एक-से-एक नायाब···अम्मा के साथ भी उन्होंने अलग-अलग पोज़ में कई फोटो खिंचवाये थे···यहाँ तक कि 'किस' करते हुए। उसके चेहरे पर क्षण-भर के लिए हल्की-सी लाली आ गयी। वह तुरन्त बोली, 'पत्नी के साथ इतना फ्री व्यवहार कोई पति नहीं कर सकता! इतना कंसीडरेट होना मुश्किल है। ज़्यादातर पति लोग चाहते हैं उनके सब 'व्हिम्स' का ख़याल रखा जाए, जबकि पत्नी का एक भी 'व्हिम' बर्दाश्त नहीं होता।' वह खुलकर हँसी और बोली, 'मेरा ख़याल है आप भी वैसे ही पति बनेंगे—ऐसा पति किस्मत से ही मिलता है।'

मुझे एकाएक ख़याल आया शायद वह कमरे में अकेला बैठा होगा। मैंने उसकी शक्ल की कल्पना करनी चाही। उसके तनावपूर्ण चेहरे की कल्पना करके मुझे अजीब-सा लगा। मैं सोच नहीं सका वह ऐसा क्यों हो गया है। ऐसी पत्नी के साथ रहकर उसे खुश रहना चाहिए था। वह बोली, 'मैं छोटी थी तो पिताजी अक्सर पूछा करते थे कि तू किसके साथ शादी करेगी?' फिर काफ़ी देर हँसने के बाद कहा, 'मैं कहती थी आपके साथ—' पिताजी खूब हँसते थे। उसकी बात पर मैं भी हँस दिया। हँस लेने के बाद मैंने उससे कहा, 'अब चलिए, हमारा यार सोच रहा होगा—पता नहीं मेरी बीवी को कहाँ उड़ा ले गया। हालाँकि हॉस्टल में यही तय हुआ था कि दोनों ज्वाइंट पत्नी रखेंगे—उस साले ने पहले ही शादी कर ली।' मेरी इस बात पर वह खुलकर हँसी, फिर बोली, 'आप अपने दोस्त के पास बैठिए, मैं रसोई में जाती हूँ।'

मैंने उससे बहुत कहा, 'अरे नहीं, वह अकेला बना लेगा।' लेकिन वह चली गयी।

कमरे में पहुँचा तो वह काफ़ी तेज़ी से टहल रहा था। मैंने पीछे से कंधे पर हाथ रखकर कहा, 'क्या बवासीर है, बैठता क्यों नहीं?' वह कुछ बोला नहीं। मैंने फिर चुटकी ली, 'सोच रहा होगा, मेरी बीवी ले उड़ा···क्यों?'

मेरी तरफ़ देखे बिना बोला, 'तुम्हारे साथ वह खुश रहती।'

उसकी बात में मुझे अजीब तल्खी-सी मालूम पड़ी। मैंने हँसकर कहा, 'मुझ जैसे फक्कड़ के साथ कोई खुश रह सकता है? हॉस्टल में तूने तो साथ रहकर देख लिया, तू ही कभी-कभी नाराज़ हो जाता था।'

वह एकाएक बोला, 'तुम समझते नहीं, औरत उस आदमी के साथ खुश रहती है, जो किसी-न-किसी बात में उसके बाप को मात दे सकता हो। मेरे साथ यही तो मुश्किल है। किसी तरह घिसट-घिसटाकर सुपरिंटेंडेंट बना हूँ। उनके पिता उससे दुगनी पैंशन पाते हैं, जितनी मुझे तनख्वाह मिलती है। कार, बंगला, नौकर-चाकर सब-कुछ है। मैं क्लर्क आदमी, ज़िन्दगी 'सर-सर' करते गुज़र गयी।'

उसकी बात बीच ही में काटकर कहा, 'चलो, तुम्हें अपने घर की सैर करा दूँ, क्योंकि मेरा घर,-घर न होकर सैरगाह ही है। घर के लिए तो और बहुत-सी चीज़ों की ज़रूरत होती है।'

वह संकोच के साथ उठा। मैंने उसके कंधे पर ज़ोर से हाथ मारकर कहा, 'तुम कैसे दोस्त हो, तुम्हें तो खुद ही जाकर घर-भर का चक्कर लगा आना चाहिए था, मैं कह रहा हूँ तब भी दुल्हन की तरह उठ रहे हो।' उसने बड़े धीमे से कहा, 'आदत बहुत बुरी चीज़ होती है।'

रसोई में उसकी पत्नी ज़ोर-शोर से खाना तैयार करने में लगी थी। काम करते हुए नौकर से पूछ रही थी 'साहब नाश्ते में क्या लेते हैं?' वह बता रहा था, 'एक हाफ़ बायल्ड अंडा, कार्न फ्लेक्स विटामिन की गोली।'

'और खाने में?'

नौकर फिर बताने लगा, 'दो चपाती, थोड़े चावल, सलाद···' वह तुरंत बोली, 'हमारे पिताजी भी दो ही चपाती लेते हैं···चावल अब बंद कर दिये।'

मैंने उनकी तरफ़ देखा। वह चुपचाप दूसरी तरफ़ देखता रहा। हम लोग स्टडी में चले गये। उसने एक उचटती हुई नज़र दीवारों पर

डाली और मेज़ के पास जाकर खड़ा हो गया। पेन उठाकर घुमाता रहा। मैंने उसे कॉलेज टाइम का ग्रुप दिखाया, "देख अपनी शक्ल, उस समय क्या बात थी···अब मनहूस चेहरा बनाये रहता है।'

वह मुस्करा दिया। मैं एक-एक फोटो दिखाकर उसके बारे में बताता जा रहा था। वह चुपचाप पीछे-पीछे चल रहा था। उसकी पत्नी खाने के लिए कहने वहीं चली आयी। दो-चार मिनट देखती रही, फिर बोली, 'चलिए, खाना खा लीजिए।' फिर मेरी तरफ़ देखकर कहा, 'आप अपने दोस्त को नहीं जानते, इन्होंने शादी के बाद किसी बच्चे तक का एक फ़ोटो नहीं खिंचवाया··पिताजी भी इन्हें फोटो दिखाते हैं तो ये चुपचाप इसी तरह चलते रहते हैं। बस इन्हें फ़ाइलों के सिवाय दूसरी चीज़ नहीं सूझती।'

उसने हल्का-सा मुस्कराकर कहा, 'ये ठीक कह रही हैं, मैं इन चीज़ों को क्या समझूँ!' वह निढाल-सा हो गया।

मैं बिना कुछ कहे उसका हाथ पकड़कर खाना खाने के लिए चल दिया। मेज़ काफ़ी अच्छीतरह सजी हुई थी। मेरा नौकर रोज़ाना सजाता था क्योंकि बिना मेज़ लगे मुझे खाना अच्छा नहीं लगता। लेकिन आज की मेज़ में ज़्यादा नफ़ासत थी। हर चीज़ पर एक पॉलिश-सी नज़र आ रही थी। मैंने कहा 'यार, भाभी तो बहुत माहिर हैं। सब चीज़ें कितने करीने से लगायी हैं।'

वह उसी ठंडेपन के साथ बोला, 'अब तो कभी-कभी इन्हें मौका मिलता है।' यह बात उसे अच्छी नहीं लगी। नज़रों में थोड़ी सख्ती-सी आ गयी। लेकिन कुछ कहा नहीं। थोड़ी देर बाद शायद बात बदलने के लिए अपने पति से कहा, 'आपके मित्र अकेले होते हुए भी बिना पूरी मेज़ लगवाये नहीं खाते··इनका नौकर बता रहा था, अगर मेज़ पर खाना लगाने में ज़रा-सी भी गलती हो जाये, तो खाने से उठ जाते हैं।'

उसने गर्दन उठाकर मेरी तरफ़ देखा, फिर बोला, 'इसके पिताजी

की भी यही हालत है।' उसने जिस तरह कहा था मुझे लगा उसकी पत्नी तिलमिला गयी है। वह उठकर रसोई में चली गयी। उसके जाने के बाद भी वह चुपचाप बैठा रहा। वह चपाती लिवाकर लौटी तो मुझे उसका चेहरा काफ़ी खामोश लगा। खाना खाते समय मैंने वातावरण को हल्का करना चाहा। वह चुपचाप खाती रही। खाना खा लेने के बाद मैंने काफ़ी प्रसन्न मुद्रा में कहा, 'आपने आज इतना बढ़िया भोजन कराया···जन्म-जन्मांतर के लिए आत्मा तृप्त हो गयी। मैंने अपने दोस्त की तरफ़ देखकर पूछा, 'क्यों ?'

उसने सिर्फ गर्दन हिला दी। लेकिन उसकी पत्नी ने काफ़ी मुस्कराकर कहा 'आप मज़ाक न कीजिए, सब-कुछ तो आपके नौकर ने तैयार किया था···मैं तो बस छूने-भर की गुनहगार हूँ।'

मैंने फिर मज़ाक किया 'छू देने भर का तो यह आलम है, बनाती तो क्या होता।' इस बात पर वह भी मुस्करा दिया।

●

चलते समय उसकी पत्नी ने पूछा, 'आप हमारे यहाँ कब आ रहे हैं ?'

उत्तर के लिए पति ने भी मेरी तरफ़ देखा। मैंने हँसकर कहा 'अब आप देखिएगा, यह हालत होगी कि आपको मुझसे यह पूछना पड़ेगा अब आप किस दिन नहीं आयेंगे।' वह हँस दी। उसके चेहरे पर भी हल्की-सी मुस्कराहट दिखायी दी, लेकिन कुछ रुककर बोला 'हम लोग ऐसा कैसे सोच सकते हैं···हमारे लिए तो तुम जैसे लोगों का आना सौभाग्य की बात है।'

मैंने उसकी पीठ पर एक धौल जमा दी 'तेरा दिमाग तो खराब नहीं है, तुझे इस तरह की बातें करते शर्म नहीं आती। तू मेरा दोस्त है या···मुझे लगता है तुझे बीच-बीच में इस तरह की बातें कहने की आदत पड़ गयी है।'

उसने बहुत धीमे से कहा 'नहीं यार। मुझे चुप देखकर वह काफ़ी

संजीदगी से बोला 'मेरा एक बहुत गलत ख़याल बन गया है, मैं हर अफ़सर और हर क्लर्क को पहले अफ़सर और क्लर्क मानता हूँ, बाद में दोस्त, भाई या ससुर।' उसकी बात से मैंने तिलमिलाहट महसूस की। लेकिन बात को टालने की गरज़ से मैंने उसका हाथ पकड़कर अपने पास खींच लिया और काफ़ी प्यार से कहा 'तुम्हारा तो दिमाग़ खराब हो गया है।' इससे आगे मैं कुछ नहीं कह सका।

चलते समय उसकी पत्नी ने फिर कहा 'आप आइए ज़रूर···' मैं मुस्करा पड़ा।

उनके जाने के बाद हर कमरे में मैंने एक तनाव महसूस किया।

●

अगले दिन दफ्तर से सीधे मैं उसके घर पहुँचा। उस समय तक वह लौटा नहीं था। उसकी पत्नी खाना बनाकर इंतज़ार कर रही थी। बच्चे अपनी माँ के चारों तरफ़ बैठे थे और स्लेट पर किरम-काँटे बना रहे थे। उनमें से सिर्फ एक बच्चा स्लेट पर लिख रहा था। मोटर से उतरते ही उसके दोनों छोटे बच्चे चिल्लाये 'मामा कार, मामा कार!' मुझे कार से उतरते देख वह बाहर आ गयी। मैंने उससे कहा 'देखिए, मैं पहुँच गया या नहीं, आपने सोचा होगा कम-से-कम दो-तीन दिन तो नहीं ही आऊँगा।' वह काफ़ी अपनेपन के साथ हँसी और बोली 'नहीं, मैं सोचती थी अगर आपको फ़ुरसत मिली, तो शायद आप बच्चों से मिलने आज ही आ जायें।'

मैंने दबी नजर से उसके चेहरे की तरफ़ देखा। एकदम सुथरा था। बच्चों के लिए मैं टॉफ़ी और बिस्कुट के डब्बे ले गया था। बच्चे काफ़ी प्यारे और साफ थे। घर में भी तरतीब थी। वह घर क्लर्क का उतना अधिक नहीं लगता था। मैंने बच्चों को प्यार किया और सबको एक-एक डब्बा दे दिया। डब्बा लेने से पहले बच्चों ने अपने मामा की तरफ़ देखा। उसने हँसकर कहा 'ये चाचा हैं, पापा के बड़े गहरे दोस्त।'

मँझले बच्चे ने तुरत पूछा 'ये भी पापा की तरह दफ्तर में काम

करते हैं।'

मेरे हाँ कहने से पहले उसकी मम्मी ने ही कहा 'नहीं नाना की तरह।'

'तो फिर इनके पास कोठी भी होगी, नाना की तरह बैरा भी होगा।' मैंने बातें बदल दीं 'हाँ बेटे, तुम चाचा के घर आओ ··वह तुम्हें बहुत-सी टॉफी देंगे, मोटर में सैर करायेंगे।'

वह बीच ही में बच्चों से बोली 'हमने तुम्हें क्या सिखाया था, बड़ों के बीच नहीं बोलना चाहिए। जाओ, पापा के कमरे में बैठकर पढ़ो।' बच्चे चले गये। बच्चों के चले जाने से उसके चेहरे पर गर्व-मिश्रित संतोष दिखलायी पड़ा।

मैंने औपचारिकतावश कहा 'आपने बच्चों को वेकार भेज दिया। बच्चों के साथ तो अच्छा लगता है।'

वह तुरंत हँसकर बोली 'तो फिर क्या देर है···कर डालिए।'

उत्तर देने से पहले क्षण-भर के लिए रुका फिर कहा 'आपके लिए आपके पापा का आदर्श था और मेरे लिए आपका।' वह एकदम से हँस दी। बात कह लेने से मुझे काफ़ी अच्छा लगा।

मैंने पूछा 'कहिए, हमारा मित्र कब आयेगा, छह तो बज गये ?'

'अरे, उनकी मत पूछिए, कभी सात बजे आते हैं, कभी आठ बजे और कभी नौ भी बज जायें तो कोई मुज़ायका नहीं।'

'आप उन्हें डाँट-डपटकर रखा कीजिए।'

'अरे बाबा नहीं, उनसे कुछ कहो तो वे कहते हैं मैं अफ़सर नहीं, क्लर्क हूँ··· अफ़सर तो पतलून की जेब में हाथ डालकर चल देते हैं, उनकी बेगार हम लोगों को भुगतनी पड़ती है। ज्यादा कहो तो बाबूजी तक पहुँच जाते हैं।'

मैंने उसकी बात को हँसकर टालना चाहा 'आपस में लड़ाई न हो तो पति-पत्नी का संबंध मज़बूत कैसे हो।'

उसने भी काफ़ी हल्के मूड में कहा 'आपको यह सब कैसे मालूम ?'

मुझे और कोई जवाब नहीं सूझ पड़ा। मैंने यही कहा 'मित्र, पत्नियों की मेहरबानी है।'

उसने काफ़ी बड़ी आँखों से देखकर कहा 'अच्छा ऽऽ !' उसके अच्छा कहने में मुझे कुछ भिन्नता का आभास हुआ। वह शायद बदली-बदली नज़र आयी। मैंने वातावरण में और अधिक आत्मीयता लाने के लिए उसके पिता के बारे में बात करनी शुरू की। हालाँकि बात करते समय भी मैं यही सोचता रहा कि अपने दोस्त के बारे में बात न करके, पत्नी के पिता के बारे में बातें करना कहाँ तक उचित है। लेकिन इस प्रश्न का उत्तर शायद मेरे माफिक न पड़ता। इसलिए उसके बारे में सोचना मैंने उचित नहीं समझा।

वह कहती रही 'मैं तो शादी करना चाहती ही नहीं थी, मैंने बाबूजी से साफ कह दिया था इतने वर्ष आप जैसे आदमी के साथ रहकर किसी और के साथ नहीं रह सकती। हम तो उनके बच्चे थे लेकिन मामा के साथ भी उनका बिलकुल दोस्तों वाला संबंध था। कई बार हम लोगों के सामने मामा की कमर में हाथ डालकर नाचने लगते थे···आपस में बच्चों की तरह खेलते थे। मैं तो सोच ही नहीं सकती थी कि ऐसे आदमी के साथ रहना होगा···वैसे शुरू में ये भी काफ़ी मस्त थे, लेकिन इनको तो क्लर्की खा गयी। मैंने कई बार कहा—इसे छोड़ दो, बाबूजी बुला चुके हैं, वहीं रहेंगे··उनके बहुत ज़रिये हैं, वहीं कुछ करा देंगे।'

मैंने हँसकर कहा 'इसमें क्या बात है, कोई काम बुरा नहीं होता, अब सुपरिंटेंडेंट हो गया··कुछ दिनों में ऑफ़िसर्स ग्रेड में आ जायेगा।'

उसने काफ़ी संजीदगी से कहा 'नहीं, काम का साइकोलॉजी पर तो असर पड़ता ही है···आप चाहें जिस स्थिति में रहें, लेकिन आपकी साइकोलॉजी अफ़सर वाली ही रहेगी, बात भी करेंगे तो कान्फ़ीडेंस के साथ, बाद में अफ़सर बनकर वह बात नहीं आती।'

मैंने साधारण रूप में कहा 'अरे नहीं, आप कहाँ की बात करने लगीं,

कुर्सी सब सिखा देती है।'

वह तुरन्त बोली 'बाबूजी भी इसी तरह की बातें करते रहते हैं···उन्होंने एक बार दलील दी थी कि आदमी के काम को देखना चाहिए, जो काम उसके सुपुर्द है, वह उसे कितनी खूबी से करता है। ये बातें मन समझाने की होती हैं। मैं अक्सर सोचती हूँ, बाबूजी कभी गवर्नर तक की परवाह नहीं करते थे। लेकिन इनको देखती हूँ, हर आदमी से मिलते हुए झिझकते हैं। मैं तो अभी भी कहती हूँ, बाबूजी जैसा आदमी दूसरा मिल ही नहीं सकता।'

बड़े मज़े में मैंने पूछा 'मैं भी नहीं ?'

वह हँस दी। फिर बोली 'यही तो मैं सोचती हूँ, आप उस समय कहाँ थे। यही बात अपने पतिदेव के समक्ष कहूँगी तो वे पता नहीं क्या कह डालें। जब गुस्से में आते हैं तो रिक्शा-ताँगे वालों की तरह बकने लगते हैं। एक बार कह रहे थे अगर तुम्हें अपने बाप इतने ही पसंद थे, तो उनसे ही क्यों न कर ली। आप उनके दोस्त हैं इसलिए कह रही हूँ। भला यह कहने की बात थी ? अगर उनसे शादी कर सकती, तो इनसे क्यों करती।'

मैंने घड़ी की तरफ देखा, सात बजने को थे। उसकी बात का जवाब दिये बिना ही पूछा 'पता नहीं, मेरा यार कब तक आयेगा। फिर कहेगा बिना मिले चला गया।'

वह तुरन्त बोली 'तो हममें कोई रुचि नहीं, अपने दोस्त के बिना बेचैनी हो रही है।'

मैंने स्पष्टीकरण देने के ढंग से कहा 'नहीं, यह बात नहीं, आप ही के कारण तो यहाँ आया हूँ।' उसने जवाब नहीं दिया। कुछ देर तक ख़ामोशी रही। मैंने महसूस किया बातों का सिलसिला टूट गया है। शायद अब कभी इस तरह की कोई बात नहीं होगी।'

लेकिन चलने की इजाज़त माँगी, तो उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। वह स्थिति मेरे लिए सर्वथा अपरिचित थी। मुझे लगा मेरे अन्दर के

प्रवाह को एकाएक रोक दिया गया है। मैं उसी तरह बैठा रहा। शायद इंच-भर भी हिलना मेरे लिए संभव नहीं था। कुछ देर बाद उसने अपने-आप ही कहा 'आप नहीं जानते मैं यहाँ किस तरह रहती हूँ···कभी बाबूजी के पास चली जाती हूँ तो वहाँ से लौटकर यहाँ रहना मेरे लिए असंभव हो जाता है। उनकी हर चीज़ याद आती है···छूना तक। अब आप भी यहीं आ बसे···समझ नहीं आता क्या करूँ।' अंतिम वाक्य उसने बहुत धीमे-से कहा और डूब-सी गयी।

●

कमरे में एक स्थिरता-सी महसूस की, वहाँ की सब चीज़ें मुझे तराशी हुई-सी लगीं। उस स्थिरता को तोड़ना चाहा। लेकिन मुझे महसूस हुआ शायद बोलना मना है। कुछ देर बाद वह एकाएक बोली 'आप अब जायें, पता नहीं वे कब आयेंगे।' मुझे लगा अब उसके कह देने पर भी मैं नहीं जा सकूँगा। बड़ी मुश्किल से कह पाया, 'जहाँ इतनी देर इंतज़ार किया है, कुछ देर और कर लेता हूँ।'

वह कुछ देर चुप बैठी रही, फिर हाथ पकड़कर बोली 'चलिए!' मैंने महसूस किया इतनी जल्दी कोई निर्णय लेना मेरे लिए संभव नहीं है। उसकी हथेली के बीच मेरा हाथ पिघल रहा था।

क्लर्क

मि० सिंह डाइरेक्टर के कमरे से निकले तो उनकी आँखों की पपोटियाँ फैली हुई थीं। अपने कमरे में जाकर काफ़ी देर तक वे कुर्सी को चकफेरी देते रहे और क़लम को उठाते-रखते रहे। लाल पेंसिल से टेबिल-ग्लास पर अपना नाम लिखा। खफ़ीफ़-सी लाइनें शीशे पर चमक आईं। झुककर पढ़ना चाहा फिर मिटा दीं। कुछ देर तक वे अपनी गर्दन किसी फ़िल्मी गाने की धुन पर हिलाते रहे। एकाएक चारों तरफ़ देखा और गर्दन ठहरा ली। मि० सिंह का हाथ घंटी पर जाकर क्षण-भर को रुक गया फिर ज़ोर से दबा दी। जब चपरासी आया तो वे फ़ाइल देख रहे थे। फ़ाइल पर गर्दन झुकाये-झुकाये ही उन्होंने कहा, 'बड़े बाबू···!' चपरासी के चले जाने के बाद वे फिर कागज़ के एक टुकड़े पर किरम-काँटे खींचने लगे।

बड़े बाबू के आने पर भी मि० सिंह फ़ाइल में मशगूल रहे। दो-चार क्षण खड़े रहने के बाद बड़े बाबू ने कहा 'आपने याद किया था ?'

'ओह हाँ, बैठिये-बैठिये।'

बड़े बाबू बैठ गये। उसके बाद भी दो-चार मिनट मि० सिंह फ़ाइल उलटते-पलटते रहे, फिर बोले 'कहिये, आप ठीक हैं ?'

बड़े बाबू ने आँखों को फैलाकर बड़ी शाइस्तगी से कहा 'नवाज़िश है।' उन्होंने फिर पूछा 'काम ठीक चल रहा है ?'

बड़े बाबू की आँखें इस बार छोटी हो गईं। उन्होंने और अधिक मुलायमियत के साथ कहा 'हुज़ूर की मेहरबानी है।' मि० सिंह थोड़ा गम्भीर हो गये। कुछ देर गंभीर बने रहने के बाद बोले 'डाइरेक्टर साहब कुछ दिनों के लिए बाहर तशरीफ़ ले जा रहे हैं, उन्होंने मुझे काम देखने के लिए कहा है।'

बड़े बाबू ने काफ़ी अदब के साथ कहा 'मुबारक हो !' मि० सिंह ने गर्दन हिला दी।

'आप कल से सब फ़ाइलें मेरे पास भेजें।' बड़े बाबू कुछ देर चुप रह-कर बोले 'तो बड़े साहब से आर्डर ले लिया जाय ?'

मि० सिंह को यह बात ज़्यादा पसन्द नहीं आई। उन्होंने बड़े बाबू की इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर बाद मुलायम आवाज़ में ही बोले 'बड़े साहब वर्मा बाबू से क्यों नाराज़ हैं ? हर बार तो वर्मा बाबू ही 'ऑफ़िशियेट' करते थे ?' फिर कुछ ठहरकर कहा 'और वैसे भी इसी दफ़्तर की प्रोडेक्ट हैं, क्लर्क से यहाँ तक पहुँचे हैं। आपके तो साथियों में होंगे ?' कहकर ज़ोर से हँस दिये, बड़े बाबू हल्की-सी मुस्कराहट चेहरे पर ले आये। मि० सिंह को खुद-ब-खुद महसूस हुआ वे ज़रूरत से ज़्यादा हँस दिये हैं। एकाएक गंभीर होकर बोले 'अच्छा आप जाइये ! कल से सब फ़ाइलें मेरे पास भेज दिया करें। इधर नोटिंग बड़ी गड़बड़ आ रही है। किसी बात का पता ही नहीं चलता। थोड़ी देखभाल रखा कीजिये।' बड़े बाबू चले गये।

बड़े बाबू के जाने के बाद मि० सिंह ने मि० वर्मा को फोन किया 'कहिये वर्मा साहब, क्या हो रहा है ? आप भी छुट्टी जा रहे हैं ?'

... ...

'मैं यही समझा था शायद इसीलिए मुझे ऑफ़िशियेट करने के लिए कहा गया है।'

... ...

'नहीं-नहीं, आप क्यों मैं ही आ जाता हूँ !'

... ...

'जैसा आप चाहें।' कहकर मि० सिंह ने रिसीवर रख दिया और कुर्सी पर बैठे-बैठे चक्कर लगाने लगे।

कुछ देर बाद वर्मा आ गये। सिंह ने तपाक से हाथ मिलाया। उन्होंने आते ही कहा 'सिंह साहब मुबारक ! अब बूढ़ा हो चला हूँ इसी दफ़्तर में ज़िन्दगी काट दी। अब आप जैसे नौजवान अफ़सर आ गये है.....!' नौजवान शब्द से मि० सिंह के माथे पर सलवटें पड़ गयीं।

मि० सिंह ने तुरन्त कहा 'ग़नीमत है आपने नौजवान ही कहा, लोग तो अपनी उम्र का फ़ायदा उठाकर सीधे लौंडा ही कहते हैं।'

मि० वर्मा ने तुरन्त कहा 'नौजवान से मेरा मतलब आप ज़्यादा काम कर सकते हैं। इनिशियेटिव ले सकते हैं। हम बूढ़े हो चले, साल-भर में रिटायर हो जायेंगे।'

'अरे साहब, आपके अनुभव को कौन पहुँच सकता है। आपने इस दफ़्तर को हर रंग में देखा है। कहकर मि० सिंह हँसे। मि० वर्मा उत्साहित होकर अपना इतिहास बताने के मूड में आ गए 'मैं ही पहला आदमी था जो मि० प्राइस के साथ आया था। प्राइस क्या आदमी था। दरअसल अफ़सरी तो अंग्रेज़ कर गया। आजकल अफ़सर आते हैं, न कोई बैकग्राउण्ड होती है न स्टेटस। प्राइस ऐसा आदमी था उसके बारे में जो न कहा जाए वही कम है। यही वजह थी अंग्रेज़ इतने साल हिन्दुस्तान पर राज कर गया। मैं पी० ए० ही तो था लेकिन इतना ख़याल रखता था

कि कोई क्या रख सकता है ।'

डाइरेक्टर साहब का चपरासी दरवाज़ा खोलकर अन्दर आया और मि० वर्मा को सलाम दिया 'आपको साहब याद कर रहे हैं ।' मि० सिंह क्षण-भर उस चपरासी को देखते रहे, जाने लगा तो बोले 'सुनो !' वह घूमकर खड़ा हो गया, 'तुम बदतमीज़ हो । बिना इजाज़त अन्दर चले आये । डाइरेक्टर साहब के चपरासी हो इसलिए दिमाग खराब हो गया? तबीयत ठिकाने आ जाएगी । जाओ !' उसने एक बार मि० सिंह की तरफ़ देखा और गर्दन झटककर बाहर निकल गया ।

मि० सिंह ने उसी तैश में कहा 'देखा आपने यहाँ के चपरासी इतने बदतमीज़ और नामाकूल हैं ! इन सबको निकाल बाहर करना चाहिये । डाइरेक्टर साहब के साथ क्या अटैच हो गये अपने को अफ़लातून समझते हैं ।'

मि० वर्मा ने अलगाव के साथ कहा 'यह भी मि० प्राइस के वक्त से है । इस आदमी को ऐसी कला मालूम है कि हर डाइरेक्टर को खुश कर लेता है । अब आप ऑफ़िशियेट करेंगे तो देखेंगे कि आप भी इसके मुरीद हो गये हैं ।'

सिंह थोड़ा उखड़कर बोले 'आइ विल किक हिम आऊट···डेमफूल !' मि० वर्मा मुस्कराकर चुप हो गये । कुछ देर तक दोनों चुपचाप बैठे रहे । सामने की दीवार पर घूमते पंखे की परछाईं से लग रहा था कमरा एकदम खाली है ।

मि० सिंह कुछ देर बाद बोले 'मेरी समझ में यह नहीं आता इतने बड़े-बड़े डाइरेक्टर्स इस दफ़्तर में रह गये हैं लेकिन हालत ज़रा नहीं सुधरी । एक ड्राफ़्ट तक ठीक नहीं आ पाता । एक महीने के लिए दफ़्तर मेरे सुपुर्द कर दिया जाए तो सब सेट कर दूँ ।'

मि० वर्मा ने बड़े शांत स्वर में कहा 'पन्द्रह रोज के लिए तो यह दफ़्तर आप ही के सुपुर्द है !' सिंह ने वर्मा की तरफ़ देखा । वर्मा के

चेहरे पर किसी तरह का कोई भाव नज़र नहीं आया। मि० सिंह इस बार तनिक दबंगयी से बोले 'तो आप क्या समझते हैं, मैं सिर्फ़ दस्तखत ही किया करूँगा !'

मि० वर्मा हँसते हुए उठ गये 'अच्छा, मि० सिंह, अब इजाज़त दें। साहब ने याद किया है।'

मि० सिंह कुर्सी से थोड़ा उचके और बैठ गये। मि० वर्मा दरवाजा खोलकर बाहर चले गये। मि० सिंह कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे फिर उठकर कमरे का चक्कर लगाने लगे। थोड़ी देर बाद चपरासी को बुलाकर पूछा 'वर्मा अभी तक बड़े साहब के कमरे में हैं ?' वह देखने गया और लौटकर बताया, 'जी हाँ।'

वे जाकर कुर्सी पर बैठ गये और कुर्सी पीछे को झुकाकर आँखें बन्द कर लीं। पीछे झुक जाने के कारण पंखे की पंखुड़ी का एक छोटा-सा हिस्सा बार-बार उनके माथे पर से गुज़रने लगा। जब-जब पंखुड़ी गुज़रती थी उनका माथा स्याह पड़ जाता था। एकाएक वे सीधे हो गये। उनके चेहरे पर कठोरता के साथ-साथ अतिरिक्त गंभीरता आ गयी। घंटी बजाकर चपरासी को बुलाया। आजाने पर पहले तो वे चुप रहे फिर बोले 'एक गिलास पानी लाओ।' चपरासी पानी लेने चला गया। वे टहलने लगे।

●

अगले रोज मि० सिंह दफ़्तर के लिए तैयार होने लगे तो उनमें एक तरह की फुर्ती थी। पहनने के लिए कपड़े भी अपने-आप ही निकाले। नाश्ते पर बैठकर उन्होंने अपनी पत्नी को बताया, नाश्ते में क्या-क्या होना चाहिये। लगभग पाँच मिनट तक मि० सिंह इसी बारे में अपनी पत्नी को बताते रहे 'जो लोग दिमाग़ी काम करते हैं वे इतना नाश्ता नहीं करते। आदमी जैसे-जैसे बड़े पद पर पहुँचता जाता है वह उतना ही देखभाल कर खाने-पीने लगता है। हमारे डाइरेक्टर साहब सवेरे थोड़ा-सा पोरिज लेते हैं। एक टोस्ट, फ्रूट्स, एक अण्डा और एक कप चाय या दूध।

इससे बहुत हल्कापन रहता है । सुना है वर्मा सवेरे ही पूरा खाना खाकर चलता है इसलिए थुलथुल हो गया है । दरअसल क्लर्की की आदत छूटती थोड़े ही है ।' उस दिन मि० सिंह ने नाश्ते के लिए रखे पराँठे छुए तक नहीं । श्रीमतीजी के आग्रह करने पर उन्होंने जवाब दिया 'आज काम बहुत है, अगर ये सब आड़-कबाड़ खा लिया तो काम नहीं होगा । हमारे डाइरेक्टर साहब फुर्ती से काम करते हैं, अगर उसमें ज़रा भी कमी आई तो दफ़्तर के लोग क्या सोचेंगे, पहला-पहला चार्ज है ।'

मि० सिंह ठीक पौने दस बजे दफ़्तर पहुँच गये । कारीडोर से तेज़ी के साथ निकलते समय उनकी नज़र रास्ते में मिलने वाले लोगों पर थी । दफ़्तर के लोगों के चेहरे से कोई ख़ास बात महसूस नहीं हुई । उन्हीं लोगों ने सलाम किया जो रोज़ किया करते थे । वे सीधे डाइरेटर के चेम्बर पहुँचे । चेम्बर का ताला बन्द था और डाइरेक्टर का चपरासी बाहर बैठा सुर्ती फाँक रहा था । मि० सिंह कमरे के सामने रुके तो वह स्टूल से थोड़ा उठा और बैठ गया । बैठा ही रहा । मि० सिंह ने पूछा 'कमरा नहीं खोला ?'

'जी, आज साहब नहीं आयेंगे ।'

मि० सिंह थोड़ा उखड़ गये 'तुम्हें मालूम नहीं, आज डाइरेक्टर हम हैं! '

'जी, साहब ने तो कुछ कहा नहीं था ।'

'हम कह रहे हैं ।'

'तो वर्मा साहब या बड़े बाबू से कहला दें ।'

मि० सिंह काफ़ी नाराज़ हो गये 'डाइरेक्टर हम हैं, वर्मा या बड़े बाबू कौन होते हैं ! '

'वर्मा साहब ही तो हमेशा डाइरेक्टरी करते हैं ।'

'अच्छा बक-बक मत करो, कमरा खोलो ।' मि० सिंह इतनी ज़ोर से चिल्लाये कि जो लोग दफ़्तर में थे बाहर निकल आये । चपरासी ने आँखें तरेरकर जवाब दिया 'बिना इजाज़त साहब का कमरा नहीं खुलेगा ।' मि० वर्मा भी बाहर निकल आये । उन्होंने बाहर खड़े बाबुओं से डाँटकर

कहा 'आप लोग अन्दर जाइये, यहाँ क्या तमाशा हो रहा है!' बाबू लोग मुड़-मुड़कर पीछे देखते हुए चलते गये। मि० वर्मा मि० सिंह का हाथ पकड़कर अपने कमरे में ले गये 'अरे बैठिये, आप कहाँ इन लोगों के मुँह लग रहे हैं। आप मुझे बताइये क्या बात है, अभी सब ठीक किये देता हूँ।'

मि० सिंह क्षण-भर चुप रहकर बोले 'यह दफ़्तर है या कबाड़-खाना! यहाँ पर इतने नामाकूल किस्म के चपरासी हैं यह मैं नहीं जानता था। यह आदमी डाइरेक्टर का चपरासी होकर अपने को क्या समझता है। मैं आज ही इसे डिसमिस करूँगा।'

मि० वर्मा के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट आई, लेकिन तुरन्त ही गंभीर होकर बोले 'आप बात बतायें, मैं अभी उसे बुलाकर डाँटे देता हूँ। इतना पुराना आदमी है, हमेशा डाइरेक्टरों के साथ रहा है। कहीं से कोई शिकायत नहीं आई। अब इतना बदतमीज़ हो गया। आपके साथ गुस्ताख़ी करने लगा।'

मि० सिंह कुछ खिसियाकर बोले 'मैंने डाइरेक्टर वाला कमरा खोलने के लिए कहा तो मना कर दिया। आप खुद ही समझें जो लोग डाइरेक्टर से मिलने आयेंगे उन्हें कितनी परेशानी होगी। इसीलिए मैंने सोचा था कि उन्हीं के कमरे में बैठूंगा।'

मि० वर्मा ने बड़े आश्चर्य के साथ कहा 'अच्छा ऽऽ। उसे कमरा खोल देना चाहिये था। लेकिन उसकी भी कोई ख़ता नहीं, डाइरेक्टर साहब पसन्द नहीं करते कि उनके पीछे उनके चेम्बर में कोई जाए। शायद इसलिए उसने मना कर दिया। लेकिन उसे ऐसा नहीं करना चाहिये था। दरअसल मुँह चढ़े चपरासियों का ऐसा ही हो जाता है। डाइरेक्टर साहब को आने दीजिये मैं उनसे बात करूँगा।'

मि० सिंह ने तुरन्त कहा 'मैं उसे इसी समय बर्खास्त नहीं कर सकता?'

मि० वर्मा ने बात बदलकर कहा 'कर तो क्यों नहीं सकते। लेकिन ऽऽ

अच्छा यही है कि यह काम डाइरेक्टर साहब के द्वारा ही कराया जाये।'

मि० सिंह को यह बात पसन्द नहीं आई। वे चुप रहे। मि० वर्मा ने सलाह के तौर पर कहा, 'मेरी राय तो यही है कि आप अपने ही कमरे में बैठें। बेकार यह चपरासी बदतमीज़ी करेगा। जो लोग डाइरेक्टर से मिलने आयेंगे उन्हें आपके पास भेजने का इन्तज़ाम किये देता हूँ। वैसे भी डाइरेक्टर साहब कह गये हैं कि आप अभी नये हैं मैं आपकी मदद करता रहूँ।'

मि० सिंह के जाने के बाद मि० वर्मा ने डाइरेक्टर साहब के चपरासी को बुलाया 'क्यों यार, तुमने सिंह साहब से क्या कह दिया?'

'अरे साहब, पता नहीं कहाँ से अफ़सर बन-बनकर आ जाते हैं, बात करने की तमीज़ नहीं होती। हम तो पहले ही समझ गये थे बहुत छोटी तबीयत का आदमी है। कल जब आपको बुलाने गये तो हम पर गुर्रा पड़ा। हमने साहब से साफ़-साफ़ कह दिया···! भला कोई बात हुई, आपके होते हुए यह लौंडा डाइरेक्टरी करे। हम अपने साहब की कुर्सी पर इसको कैसे बैठने देते। कहता था कमरा खोलो।'

'अच्छा-अच्छा, पर अफ़सरों से इस तरह बात नहीं करनी चाहिए। थोड़े दिन में यही डाइरेक्टर हो जाएगा।' मि० वर्मा की बात सुनकर वह तुरन्त बोला 'अरे साहब, यह क्या डाइरेक्टर बनेगा! उससे पहले ही छुट्टी हो जायेगी।' जब हमने डाइरेक्टर साहब से बताया कि यह इस तरह गुर्राकर पड़ा तो वे काफ़ी नाराज़ हुए और बोले 'अच्छा, जब सिंह बात करने का तरीका ही नहीं जानता तो क्या डाइरेक्टरी करेगा।'

'तुम्हें ऐसी बात नहीं करनी चाहिए थी। अभी लड़के ही तो हैं। ठीक हो जाएंगे। जब तुम नये-नये आये थे तुम ही कौन डाइरेक्टर के चपरासी हो गये थे। इसी तरह दूसरे के बारे में भी सोचना चाहिए। यह तो उनकी ग़लती है कि तुम्हें नाराज़ कर लिया। नहीं तो तुम ही डाइरेक्टर साहब से उनकी सिफ़ारिश करते। मि० सिंह दिल के बुरे नहीं हैं, आदमी अच्छे हैं। [illegible] बोला,

आप तो हमें शुरू से देख रहे हैं, हम तो सच्ची बात कहते हैं। जो नहीं समझता नुक़सान उठाता है।'

मि० वर्मा हँसकर बोले 'अच्छा चौधरी साहब, अब आप बड़े बाबू को भेज दें। आते ही चूतिया-चक्कर में उलझ गया! दफ़्तर का भी कुछ काम किया जाए या नहीं।'

बड़े बाबू के आने पर वर्मा ने कहा 'देखा शशि बाबू, ये ससुरे यूनिवर्सिटी से निकलकर सीधे अफ़सर बन जाते हैं, दीन-दुनिया कुछ पता नहीं होता। आज सवेरे-सवेरे सारे दफ़्तर में भिनकन फैला दी। कोई उस बेवकूफ़ से पूछे, अबे डायरेक्टर के कमरे में बैठकर क्या सचमुच डायरेक्टर हो जाएगा।' बड़े बाबू हें-हें करके हँस दिये।

मि० वर्मा कहते रहने के मूड में थे 'मैंने सोचा भई वर्मा तुम तो छः महीने में रिटायर हो जाओगे, इसलिए सिंह को ही इस बार डायरेक्टरी का चार्ज दिलवाओ। इसको भी तो अनुभव होना चाहिए। डायरेक्टर अच्छे-खासे सहमत हो गये थे लेकिन इन महाराज का दिमाग ही ख़राब हो गया। डाइरेक्टर के कमरे से निकलकर जमाने लगे रोब और कुछ न हुआ उनके चपरासी को ही डाँट लगा दी। वह कहने को चपरासी है लेकिन अच्छे-अच्छे के डंडा कर देता है। बस थोड़ी देर बाद डाइरेक्टर ने बुलाकर कहा 'मि० वर्मा आप चार्ज सँभालेंगे। मैंने बड़ी मुश्किल से समझाया, साहब इस बार आप कह चुके हैं उन्हें ही करने दीजिये, वैसे मैं देखता रहूँगा।'

बड़े बाबू ने बड़ी मुश्किल से अपनी खी-खी रोककर कहा 'क्या बताएँ साहब, आपने तो उनके लिए इतना किया। वे मुझसे कह रहे थे वर्मा तो क्लर्क से अफ़सर हुआ है हम सीधे अफ़सरी पर आये हैं। हमारे और वर्मा के स्टेटस में बहुत फर्क है। सब फ़ाइलें मेरे पास भेजना। मैंने साफ़ कह दिया हमेशा तो वर्मा साहब ही ऑफ़िशियेट करते हैं हम तो उन्हें ही जानते हैं। भला बताइये जुम्मा-जुम्मा सात रोज़ तो काम करते हुए और कहते हैं डाइरेक्टरी करेंगे।' मि० वर्मा चुप रहे। बड़े बाबू

उनका चेहरा ग़ौर से देख रहे थे। मि० वर्मा कुछ देर बाद बोले 'उस साले की तबीयत तो चौधरी ने ठीक कर दी है। मैं न पहुँचता तो वह इस साले के ऊपर चढ़ बैठता। अबे क्लर्क से आये हों या अफ़सरी से, तेरी क्यों जलती है। तेरी तरह लुंडिहारपन से तो काम नहीं करते। हमारे सामने चपरासी ज़रा ज़बान तो हिला दे, ज़बान खींच लें। कह रहा था मैं तो अभी इसे डिसमिस करूँगा। साले को यह तक तो पता नहीं कि डिसमिस करना खेल नहीं। आगा-पीछा एक हो जाता है।'

चपरासी ने दरवाज़ा खोला तो मि० वर्मा की बात बीच ही में रह गई। चपरासी ने कार्ड रखा, 'साहब आपसे मिलने आये हैं।' मि० वर्मा ने कार्ड देखकर कहा, सिंह के पास ले जाओ वही डाइरेक्टरी कर रहे हैं।'

चपरासी ने थोड़ा झिझकते हुए कहा 'साहब, चौधरी कह रहे हैं कि डाइरेक्टर वर्मा साहब हैं, सब मिलनेवाले उन्हीं के पास जायेंगे।'

मि० वर्मा हँस दिये 'अच्छा बुलाओ।'

चपरासी के जाने के बाद बड़े बाबू भी उठने लगे। मि० वर्मा ने बड़े बाबू से कहा 'जब सभी लोग मेरे पास आ रहे हैं तो फ़ाइलें भी मेरे पास भेज देना। बाद में उनके पास चली जायेंगी। देख लेंगे।' बड़े बाबू चले गये। बड़े बाबू के चले जाने पर मि० वर्मा ने मि० सिंह को फोन लगाया 'मि० सिंह, मैंने बड़े बाबू से कह दिया है आपको बहुत ज़रूरी मामलों में ही परेशान किया जाये, वह भी सिर्फ़ पॉलिसी मेटर्स में, बाकी सब मैं देख लूँगा।'

मि० सिंह ने पूछा, 'क्या SS ?'

मि० वर्मा ने बताया 'डाइरेक्टकर साहब भी यही करते थे। उन्हें सिर्फ टॉप-प्राइरिटी जाती थी या पॉलिसी के मामले। बाकी काम हम लोग निबटा लेते थे।'

मि० सिंह ने इस बात को पसन्द नहीं किया, वे तुरन्त बोले 'मुझे भी तो पता चलना चाहिये। आखिर डाइरेक्टर को क्या-क्या करना होता

है। डाइरेक्टर मुझसे आकर पूछेंगे फलाँ केश में क्या किया तो मैं क्या कहूँगा।'

'अरे नहीं, डाइरेक्टर साहब आपको परेशान नहीं करेंगे। सब कुछ हमसे ही पूछा जायेगा। आप निश्चित रहें।' वर्मा के इस उत्तर से सिंह बौखला गये 'मुझे समझ नहीं आ रहा आखिर क्या गोल-माल है। डाइ-रेक्टर साहब चार्ज मुझे दे गये हैं और फाइलें आपके पास जायेंगी।'

मि० वर्मा ने कहा 'अच्छा, मैं बड़े बाबू से बात करता हूँ।' और फोन काट दिया।

मि० सिंह कुर्सी से खड़े हो गये। उनके होंठ फड़फड़ा रहे थे। उन्होंने घंटी बजाकर चपरासी को बुलाया और कहा 'जो मिलने वाले हों उन्हें भेज दो।'

चपरासी चुपचाप खड़ा रहा। मि० सिंह कुछ तेज़ आवाज़ में बोले, 'तुमने सुना नहीं, मिलने वाले लोगों को भेज दो।' उसने झिझकते हुए कहा, 'मिलने वाले लोग तो वर्मा साहब के पास जा रहे हैं।'

'उनके पास किसने भेजा?'

'बड़े साहब का चपरासी कहता है कि बड़े साहब से मिलने वाले सब लोग वर्मा साहब से ही मिलेंगे। वर्मा साहब ही डाइरेक्टर हैं।'

मि० सिंह धम्म से बैठ गये। कुछ देर तक चुप रहकर ज़ोर से चिल्लाये, 'बड़ा साहब का चपरासी!' कुछ देर बाद कहा, 'बड़े बाबू···!'

चपरासी चला गया। उन्होंने फोन उठाया और रख दिया। मि० सिंह को लगा पंखा रुक-रुक कर झटके के साथ चल रहा है। उनका मन हुआ वे उसे तेज़ चला दें। उन्होंने सोचा शायद पंखा ख़राब है। उन्होंने फिर घंटी बजाई, चपरासी दरवाज़ा खोलकर अन्दर आ गया। वे दरवाज़े की तरफ देखने लगे। दरवाज़ा पूरा बन्द नहीं हुआ था। वे समझ नहीं पाये आख़िर यह ऑटोमेटिक दरवाज़ा खुला क्यों रह गया है। चपरासी ने कहा 'साहब बड़े बाबू कुछ ज़रूरी काम कर रहे हैं। खत्म करके आयेंगे।'

मि० सिंह ने धीमे से दोहराया 'बड़े बाबू ज़रूरी काम कर रहे हैं ··· हूँSSS।' फिर बोले 'यह पंखा कब से खराब है ? ठीक नहीं कराया गया ?' चपरासी ने ऊपर देखकर कहा, 'पंखा तो ठीक है साहब।'

मि० सिंह ने देखा पंखा अभी भी बहुत मरियल तरह से चल रहा था। उन्होंने चपरासी से कहा 'इसे फुल पर कर दो।' चपरासी ने उसे फुल पर खोल दिया। सिंह साहब की मेज़ पर रखे कागज़ फरफराकर उड़ने लगे। उन्होंने नाराज़गी के साथ पंखे की तरफ़ देखा और उठकर कम कर दिया। पंखा कम करने के बाद उन्हें गर्मी महसूस होने लगी। वे कमरे से बाहर निकल आये।

डाइरेक्टर साहब के कमरे के सामने कई लोग इकट्ठे थे। उनमें दो-तीन बाबू भी थे। डाइरेक्टर साहब का चपरासी ज़ोर-ज़ोर से कह रहा था 'हमने बड़े-बड़े लोगों की अकिल ठिकाने कर दी। दो अच्छर ज़्यादा पढ़कर ये अफ़सरी करने आते हैं। हम अभी भी अफ़सरी करना सिखा सकते हैं। बड़े साहब इस लौंडे को डाइरेक्टरी का काम दे रहे थे। हमने फ़ौरन बड़े साहब से कहा किस कबाड़िये को चारज दे रहे हैं। कहाँ वर्मा साहब, कहाँ ये लौंडा। कल तक नीचे लेटता था आज अफ़सर हो गया।' सब लोग ज़ोर से हँस दिये। उनमें से एक बाबू ने कहा 'चौधरी ये बात तो तुमने लाख रुपये की कही, लौंडा है तो माशूक।'

चौधरी ने हो-हो करके हँसते हुए कहा 'कहो तो बाबू, तुम्हारे घर भिजवा दूँ ! ना साले का पजामा खुलवाया तो मेरा नाम चौधरी नहीं। इसने समझ क्या रखा है। साला ऐरा-गैरा चपरासी समझता है।'

तीसरा बोला 'चौधरी तुम्हारी क्या बात है, तुम्हारी-सी सूझ-बूझ किसी में हो सकती है। लेकिन ये छोटी लाइन का मामला है। इसकी जोरू क्या कम हसीन है; कहो तो उसे तुम्हारी नज़र करें !' नज़र करें कुछ इस तरह खींचकर कहा कि सब लोगों को हँसी आ गई। चौधरी की भी बाछें खिल गईं।

मि० सिंह के पाँव थर-थर काँप रहे थे। उनका मन हुआ वे उन लोगों के सामने जा खड़े हों और सबको दो-दो चपत जड़ दें। लेकिन उन पर एक भी कदम आगे नहीं चला गया। अपने कमरे में वापस घुस गये। कमरे में घुसते समय उनको एक क़हक़हा सुनाई पड़ा। वे अपनी कुर्सी पर न बैठकर मेज़ की दूसरी तरफ़ मिलने वाले लोगों के लिए पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ गये। उन्हें लगा उनकी मेज़ में भी एक तरह का कंपन-सा है। मेज़ पर दोनों हाथ रखकर अपना सिर टिका लिया। उन्हें बार-बार लगता रहा ये सब लोग उन्हीं के कमरे के दरवाज़े के सामने इकट्ठे हो गये हैं और दरवाज़े को धक्का दे रहे हैं। एकाएक ख़याल आया कहीं ये लोग उसकी कोठी न चले जायें। वहाँ पत्नी अकेली होगी! वे तेज़ी से उठे और बाहर निकल आये। चौधरी अकेला रह गया था और सुर्ती फाँक रहा था। वे अपने कमरे में लौटने लगे तो उन्हें लगा चौधरी उनको देखकर हँस रहा है। वे लौटे और चौधरी की तरफ़ बढ़ गये। चौधरी ने मुँह फेर लिया।

मि० सिंह को महसूस हुआ उन पर चला नहीं जा रहा। वे और तेज़ी से चलने लगे। मि० सिंह पसीने से सराबोर हो गये। उनकी साँस फूलने लगी। उन्हें अपने जूतों की खट-पट साफ़-साफ़ सुनाई पड़ने लगी। वे यह सोचकर और घबरा गये कि उनके जूतों की आवाज़ किसी लुंज-पुंज आदमी की बैसाखियों की खटखट की तरह है।

एकाएक चौधरी ने मुँह खोलकर ज़ोर की जँभाई ली और सुर्ती मुँह में रख ली। उन्हें लगा वह अभी उनकी तरफ़ बढ़ेगा ज़मीन पर पटककर नंगा कर देगा और उन पर चढ़ बैठेगा। उनका हाथ उठा और एक ज़ोर का चपत लगा दिया। चौधरी ने उनकी कौली भर ली और चिल्लाने लगा। सब लोग चारों ओर इकट्ठे हो गये थे। मि० वर्मा भी कमरे से निकल आये थे। उन्होंने चौधरी को डाँटकर अलग किया। मि० सिंह की आँखें तरतरा गई थीं और छोटी पड़ गई थीं। उनके पैरों के पास एक छोटी और मरी हुई-सी परछाईं पड़ी रह गई थी।

मि० वर्मा मि० सिंह का हाथ पकड़कर उनके कमरे में ले गये। अपने कमरे में जाकर मि० सिंह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। थोड़ा शान्त होने पर मि० वर्मा ने पूछा 'चौधरी की इस गुस्ताखी से मैं बहुत दुखी हूँ, लेकिन बात क्या हुई थी ?'

मि० सिंह ने इस बात का जवाब नहीं दिया। कुछ देर बाद अपने को सँभालते हुए कहा 'मि० वर्मा मैं इस समय घर जा रहा हूँ। आ'म सॉरी फॉर दिस बिहेवियर ऑफ़ माइन···आ'वाज़ प्रोवोक्ड।'

मि० सिंह मि० वर्मा को बैठा छोड़कर तेज़ी के साथ कमरे से निकल गये। दफ़्तर से निकलते हुए शायद वे नंगे थे।

'धर्मयुग'

रेप

कुर्सियाँ ख़ाली थीं। एक बैरा थाली में राखदानियाँ इकट्ठी किये मेज़ों पर रखता घूम रहा था। पोंछा लगने के कारण फ़र्श गीला था। पंखे पूरी रफ़्तार पर खुले थे। काउन्टर-मैनेज़र कागज़ सँभालता हुआ आँखों को तेज़ी से इधर-उधर घुमा रहा था और कॉफ़ी पी रहा था।

वे तीनों हॉल में घुसे। मि० ख़न्ना काफ़ी ज़ोर से ही-ही करते हुए दाँत फाड़ रहे थे। चूँकि कुर्सियाँ ख़ाली थीं उनकी हँसी कुर्सियों पर से गुज़र गयी। अलबत्ता मैनेजर ने कॉफ़ी का प्याला उठाने और होंठों से लगाने के बीच उन तीनों को देखा। देवकुमार ने ज़ोर से पूछा 'कहिये मैनेजर साहब ···?' उसने वाक्य पूरा होने से पहले सामने उठे हुए दाँत निकाल दिये। देवकुमार ने मुश्किल से तमाम हँसी रोकते हुए अपनी बात पूरी की 'इडली-विडली मिलेगी ?'

मैनेजर ने आँख नचाते हुए गर्दन को झटके देकर मद्रासी लहजे में कहा 'अबी ऽ पाँच ऽऽ मिनट ऽ।' वे तीनों सामने दीवारघड़ी के नीचे जाकर बैठ गये।

मि० खन्ना का चेहरा मुस्कराता हुआ था। अधिक होंठ फैलाकर कहा, 'यार श्रीवास्तव···!' 'साहब' रुककर कहा। फिर बड़ी धीमे-धीमे अपनी बात शुरू की 'एक बात तो बताओ। हर प्रदेश में दो-दो गुट बन गये हैं—मिनिस्टिरियलिस्ट और डिसिडेन्ट। इसे खत्म करने के लिए अपनी स्टेट ने प्रयोग करके देखा। राजनीति का सेक्स बदल दिया गया। लेने-के-देने पड़ गये।'

मि० श्रीवास्तव बिना उन दोनों की ओर देखे हुए बोले 'एक और जीव बचा है उसे भी बनाकर देख लिया जाये।' उन दोनों को हँसी आने को हुई लेकिन मि० श्रीवास्तव ने बिना किसी ओर ध्यान दिये कहा 'महाभारत-काल में तो उनको बाक़ायदा राजनीति में स्थान मिलता था।' श्रीवास्तव साहब के चेहरे पर गहरी निराशा व्याप गयी। उन दोनों ने हँसना जारी कर दिया। मि० श्रीवास्तव ने इस तरह देखा —आप ही-ही कर रहे हैं यहाँ जान पर बनी है। उस नज़र के बाद भी उन दोनों के हँसने में कोई अन्तर नहीं आया। श्रीवास्तव साहब ने दूसरी ओर मुँह घुमा लिया और सिगरेट के तम्बाकू का बटुवा निकालकर दोनों हाथों से सिगरेट रोल करने लगे।

चन्द्रिका बाबू अन्दर घुसे। दरवाज़े पर ठहरकर इधर-उधर नज़र डाली और उन्हीं लोगों की ओर बट गये। श्रीवास्तव साहब ने चन्द्रिका बाबू को अपनी बराबर में बैठते हुए देखकर भी सिगरेट की ओर से बिना ध्यान हटाये हुए कहा 'चन्द्रिका बाबू, आप एम० एल० ए० हैं, हम लोगों की समस्या का समाधान कीजिए।'

चन्द्रिका बाबू तनिक औचकपने से बोले 'अरे भई, आप बुद्धिजीवियों के बीच नहीं पड़ते। बाद में कहेंगे यह घुसपैठिया यहाँ भी आ मरा। जब हम कुछ कहा करते थे पुलिस वाले नाला रहते थे। हमने

बोलना बन्द कर दिया । अब देखिये भले घर की लड़कियों के साथ दिन-दहाड़े क्या हुआ है । पब्लिक जाने या पुलिस ! हमें क्या लेना-देना ।'

श्रीवास्तव साहब ने धीरे से कहा 'फिर आप ज़रूर बोलते रहिये ।' कहकर दियासलाई की सींक से सिगरेट में तम्बाकू ठूँसना जारी रखा । श्रीवास्तव के कहने के ढंग से चन्द्रिका बाबू थोड़ा शरमा गये 'नहीं मेरा मतलब यह नहीं था··· ।'

मि० खन्ना और देवकुमार गंभीर हो गये । उन दोनों ने चन्द्रिका बाबू की ओर बड़ी सहानुभूति के साथ देखा । उनकी बात को आगे बढ़ाने की गरज़ से खन्ना साहब ने कहा 'कल चर्च के पास दो लड़कियाँ टहलरही थीं । एक लड़का साइकिल पर आया और एक लड़की का दुपट्टा लेकर येज्जा-वोज्जा ।'

श्रीवास्तव ने सिगरेट जलाते हुए धीरे से कहा 'बस ।'

खन्ना साहब कुछ कहने को हुए । चन्द्रिका बाबू ने पहले ही बोलना आरंभ कर दिया । खन्ना साहब ने नाराज़ी से उनकी ओर देखा और गर्दन घुमा ली । चन्द्रिका बाबू का कहना था 'यहाँ रहते थे कभी ऐसा नहीं हुआ । यही एक शहर था जहाँ लड़कियाँ बेधड़क घूमा करती थीं । मजाल थी नज़र उठाकर भी देख ले ।'

मि० श्रीवास्तव इस बार चन्द्रिका बाबू की ओर देखकर बोले, 'चन्द्रिका बाबू, आप लखनऊ रहने लगे । अब फिर यहीं आकर रहने लगिये । क्षण-भर को चन्द्रिका बाबू चक्कर काट गये लेकिन तुरन्त ही सँभलकर बोले 'हम लोग कुछ कहेंगे तो गृहमंत्री सदन में वक्तव्य दे देंगे—सब विरोधी दल की कारस्तानी है । आप बुद्धिजीवी ही कुछ आवाज़ उठायें तो बात बने ।'

खन्ना साहब के चेहरे पर संवेदना के चिह्न थे । थोड़ी भरी आवाज़ में बोले, 'चन्द्रिका बाबू, आप सही कह रहे हैं, ज़रा कल्पना करके देखिये उन लड़कियों पर क्या बीती होगी ? अपनी मर्जी से यह सब हो तो

बात दूसरी है, लेकिन······।' थोडा मुस्कराकर बोले 'किसी छोटे-से टापू पर हज़ार मेगाटन का बम विस्फोट कर दिया जाये......चिथड़े-चिथड़े उड़ जायेंगे। एक पर तीन-तीन, चार-चार, क्या हालत हुई होगी।' चन्द्रिका बाबू ने कानों पर हाथ रखकर दो-तीन बार 'राम-राम' का सुमिरन किया।

श्रीवास्तव ने संजीदगी बरतते हुए कहा 'सही है! फ़र्क इतना ही है बम-विस्फोट के बाद गर्मी पैदा होती है। यहाँ ठंडक!'

देवकुमार श्रीवास्तव साहब की तरफ़ देखकर मुस्कराये। चन्द्रिका बाबू ने अपनी बात पर ज़ोर देते हुए कहा, 'आपने बहुत ठीक कहा, आप लोग आवाज़ उठायें। यहाँ के एस० पी० का तबादला फ़ौरन हो जाना चाहिये। बड़ा अन्याय है। बहू-बेटियाँ सबके हैं।' अन्तिम वाक्य कहते-कहते चन्द्रिका बाबू थोड़ा उत्तेजित हो गये।

श्रीवास्तव ने कहा, 'बुद्धिजीवियों के ज़्यादा।'

'जी हाँ, इसीलिए तो आपसे कह रहा था आप लोग आवाज़ उठायें। इस सरकार के कानों के पास ढोल न बजायें तो यह सरकार जागती ही नहीं।' बैरा के आ जाने से चन्द्रिका बाबू की बात अधूरी रह गयी। बैरा बार-बार कह रहा था, 'हाँ साऽब?'

मि० खन्ना ने उन दोनों की तरफ़ देखा। श्रीवास्तव साहब गर्दन झुकाये बैठे थे। देवकुमार खन्ना साहब के चेहरे की ओर टुकुर-टुकुर देख रहे थे। खन्ना साहब ने बैरा से धीमी आवाज़ में कहा 'तीनों के लिए एक प्लेट इडली, दो औंस मक्खन। चन्द्रिका बाबू आप?'

'अरे साहब जो आप खायेंगे वही हम, आपसे अलग थोड़े ही हैं।'

बैरा से बोले, 'हमारा मक्खन अलग ही लाना।' बैरा चला गया।

देवकुमार ने पूछा, 'चन्द्रिका बाबू, आपको तो पूरा किस्सा मालूम होगा?'

'अरे साहब, उसमें क्या हाथी-घोड़े जुतते हैं। सच पूछिये तो सब पुलिस वालों की लापरवाही है। मज़ा मारते हैं।'

श्रीवास्तव ने उसी मुद्रा में कहा 'इसीलिए तो दूसरों से मरवाते भी हैं।' चन्द्रिका बाबू ने उनकी ओर देखा ही नहीं, अपनी बात जारी रखी, 'ये लोग थोड़ा होशियार रहें तो भला पत्ता हिल सकता है। अरे साहब परिन्दा पर नहीं मार सकता। अब यहाँ किसी की बहू-बेटी सलामत नहीं।'

देवकुमार ने तनिक तेज़ आवाज में कहा 'चन्द्रिका बाबू, यह तो मैं भी जानता हूँ, उसमें हाथी-घोड़ों की ज़रूरत नहीं पड़ती। आदमी ही काफ़ी होता है। मैं तो यही पूछ रहा था कि हुआ कैसे?'

'कोई पूछने की बात है। होना क्या था, अगर आप लोग रोक-थाम नहीं करेंगे तो दूसरे मुल्कों की तरह यहाँ भी रोजमर्रा हुआ करेगा। अरे जनाब, इस एस० पी० का तबादला करवाइये। आवाज़ बुलन्द कीजिये।'

श्रीवास्तव ने चन्द्रिका बाबू की ओर न देखकर देवकुमार से कहा 'एक-आध वक्तव्य दे दो। न हो तो चन्द्रिका बाबू से कहो, जहाँ से अपने लिए मँगवाते हैं एक-आध तुम्हारे लिए भी मँगा देंगे।'

चन्द्रिका बाबू का चेहरा तमतमा आया। मि० खन्ना ने तुरन्त बात सँभालते हुए कहा 'कॉफ़ी हाउस रूल नम्बर दो! कोई भी कॉफ़ी-हाउस का मेम्बर किसी की बात को गम्भीरतापूर्वक लेकर बुरा नहीं मानेगा। वरना एक हफ्ते के लिए हुक्का-पानी बन्द!'

चन्द्रिका बाबू मुस्करा दिये। उनका मुस्कराना गरम रबड़ खिचने की तरह लगा। बैरा इडली ले आया। चन्द्रिका बाबू का मक्खन भी देवकुमार की तरफ रखा जाने लगा तो उन्होंने तुरन्त कहा 'हमारा मक्खन इधर रखो, हाँ ऽऽ।

श्रीवास्तव साहब ने चम्मच उठाकर उनके मक्खन में डाल दी। अपना मक्खन पहले ही मिला चुके थे। चन्द्रिका बाबू के चेहरे पर तनाव आ गया, लेकिन औपचारिकतावश कहा 'लीजिए और लीजिए, संकोच की क्या बात है।'

मि० श्रीवास्तव ने आधे से अधिक मक्खन एक बार में ही खींच लिया और मिलाते हुए बोले ‘हाँ-हाँ, आप, बेफिक्र रहे, मैं ले लूंगा। आप नहीं लेंगे ?’

चन्द्रिका बाबू ने सब लोगों की तरफ देखकर कहा ‘देखिये साहब मेरा ही तो मक्खन है और मुझसे ही पूछ रहे हैं आप नहीं लेंगे।’

श्रीवास्तव ने इस बार नज़र उठायी, उनके कान के पास मुँह लाकर कहा ‘यह सब एस० पी० का ट्रान्सफ़र न होने की वजह से है।’ चन्द्रिका बाबू ने बिना मक्खन लगाये इडली खाना शुरू कर दिया। ‘आप इसमें से लीजिये।’

चन्द्रिका बाबू ने जवाब नहीं दिया।

दो-चार सेकण्ड चारों लोग चुपचाप खाते रहे। हॉल में बैठे लोगों की आवाज़ें उभरने लगीं। देवकुमार ने फिर सवाल दोहरा दिया ‘चन्द्रिका बाबू, आपने वाक़या नहीं बताया, दरअसल हुआ क्या ?’

रवि, देवकुमार के पीछे आकर खड़ा हो गया था। बुलन्द आवाज़ में बोला ‘अच्छा तो वही चर्चा यहाँ भी है।’

चन्द्रिका बाबू ने बाहर की तरफ़ झाँककर देखा और किसी को तलाशने की मुद्रा में उठकर बाहर चले गये। खन्ना साहब ने मायूसी से उन्हें जाते हुए देखा। बाक़ी सब एकाग्रचित इडली खाते रहे।

रवि ने पूछा ‘गुरू क्या कह रहे थे ? वही कह रहे होंगे एस० पी० का ट्रांसफ़र कराओ। पिछली हड़ताल में एस० पी० ने खूब ठुकाई करा दी थी। तब से यही एक राग है।’ श्रीवास्तव साहब ने एक आँख तिरछी करके रवि की ओर देखा।

देवकुमार ने वही बात रवि के सामने भी दोहरा दी ‘यार तुम तो काफ़ी पहुँच के आदमी हो, तुम ही बताओ हुआ क्या ?’

रवि के होंठों की नोकें गालों में धुस गईं। मुदित भाव से बोला ‘तुम अभी बच्चे हो क्या करोगे जानकर।’

देवकुमार का चेहरा खिंच-सा गया। रवि हँस दिया ‘पगले हो तो

बताये देता हूँ। दो लड़कियाँ दो लड़कों के साथ फ़िल्म 'आओ जी' का शूटिंग कर रही थीं। विलियन ने एन्ट्री की। हीरो पिट गया। बस यही बात फ़िल्मी कोड ऑफ़ कन्डेक्ट के विरुद्ध हो गयी।'

श्रीवास्तव साहब ने बड़ी गंभीरता के साथ सब लोगों के हँसते हुए चेहरों की तरफ़ देखा, फिर बोले 'फ़िल्मी हीरोइनों की तो कोई बात नहीं, जो पार्ट मिलेगा करना पड़ेगा…' पर एकाएक नाराज़गी की हद तक गंभीर होकर कहा 'लेकिन उन लड़कियों को भी हीरोइनें समझा गया, यह सरासर ज़्यादती है।'

रवि ने समझा बात गंभीर है। उसने दूनी गंभीरता के साथ हाँ-में-हाँ मिलायी, 'जी हाँ, उन लोगों पर क्या बीती होगी।' फिर गर्दन नीची करके गोपनीय ढंग से बताया 'एक मेडिकल अफ़सर यह बता रहे थे जब लायी गयीं बदहवासी की हालत में थीं…' अपने हाथों को सीने पर रखकर इशारा करते हुए बोला 'छातियाँ नीली काँच हो गई थीं!'

मि० खन्ना ने गर्दन हिलाते हुए कहा 'वहाँ होता ही क्या है! खून जम गया होगा।' अपने हाथ की उँगलियाँ हथेली से मसलते रहे।

रवि ने अपनी बात जारी रखी, 'उनमें से एक चूड़ीदार पाजामा पहने थी। फाड़ डाला गया। चिथड़े-चिथड़े उड़ गये। जब उन दोनों लड़कियों से पूछ-ताछ की जा रही थी, एक तो बिलकुल कोल्ड बनी बैठी थी। जैसा सवाल पूछा जाता था बिना किसी शर्म-लिहाज़ के वैसा ही जवाब दे देती थी। उसे पूछा गया कैसे-कैसे हुआ, उसने सब बता दिया—ऐसे-ऐसे! खड़े हुए आदमियों की गर्दन नीची हो गयीं। दूसरी रोती जा रही थी। वह बड़ी मुश्किल से हूँ-हाँ करती थी।'

आवाज़ में और अधिक गोपनीयता बढ़ाकर कहा 'जाँघें तक भँभोड़ डालीं। वे दोनों हीरो सामने बँधे देखते रहे बेचारे!'

क्षण-भर को सबका चेहरा दूसरा गया। खन्ना साहब का ऊबड़-खावड़ चेहरा [illegible] होता गया। [illegible] की आँखों में और चेहरे

पर संवेदना उभर आयी।

देवकुमार ने ही कहा 'उस वक्त वहाँ जाने को किसने कहा था!'

मि० खन्ना तुरन्त अलिफ़ हो गये 'अपने हिन्दुस्तानीपन पर आगये न। उन हरामज़ादों को कुछ नहीं कहा गया! तुम तो उन्हीं लोगों की तरफ़ हो—मौज-मज़े से मतलब!'

रवि का दिमाग चालू था 'ज़िन्दगी-भर के लिए फ्रिजिड हो जायेंगी। और साहब आज-कल के ज़माने में आप कहें उस समय लड़कियों को जाना चाहिये और इस समय नहीं। यह कहीं हो सकता है।' हँसकर बोला अजी साहब अभी तो एसेम्बली में बूढ़े-बूढ़े सदस्य, 'रेप' का मज़ा लेंगे और निचोड़ पेश करेंगे। सरकार पर भी ज़ोर आज़मायश का मौका मिलेगा।'

देवकुमार ने भी सहारा दिया 'यह बात बुरी होगी। लड़कियों की कुलियाँ उजाली जायेंगी। एक-दो एम० एल० ए० बाहर फेंके जायेंगे। विरोधी दल अबलाओं की रक्षा करने का पूरा-पूरा नाटक करेगा। और सरकार से माँग करेगा मौक़ा-मुआयना की सुविधा दी जाये।'

मि० खन्ना ने तुरन्त सवाल किया 'तो आप लड़कियों की तरफ़ हैं।' देवकुमार क्षण-भर को सकपका गया। बात को टालते हुए बोला 'आप बताइये, आप किसकी तरफ़ हैं?'

'ऐसेम्बली वालों से लेकर जनता तक सबकी तरफ़! इन लड़कियों ने सरकार, अफ़सर, विरोधी दल और जनता सबको अपनी-अपनी बात कहने का मौका तो दिया। इस बहाने पुलिस वालों को भी पता चलेगा, सरकार का रुख अभी उनकी ओर से बदला नहीं।'

बैरा आकर कॉफ़ी का आर्डर ले गया। बात का सिलसिला बीच ही में टूट गया। श्रीवास्तव साहब ने बहुत धीमे से बात शुरू की 'मैं सोचता हूँ लड़कियों को रिवाल्वर दे दिये जाएँ।'

रवि ने बड़ी ज़ोर से हाँ मिलायी, 'रिवाल्वर चलाना मुश्किल थोड़े ही है।'

मि० खन्ना ने हँसकर कहा 'शादी के बाद पतियों की रूह भी कब्ज़ रहेगी। हर वक़्त कॉफ़ी हाउस में बैठे रहते हैं। क्यों श्रीवास्तव साहब ?'

'जी नहीं, उधर डोला उठा इधर रिवाल्वर मालखाने में जमा। शादी से पहले उसकी ज़रूरत होती है।'

ज़ोर का क़हक़हा लगा। इस बार मि० श्रीवास्तब के होंठ फैल गये। हॉल में बैठे लोग उन्हीं की तरफ़ देखने लगे। मैनेजर के उठे हुए दाँतों पर आकर होंठ कट गये। उसने हॉल के चारों तरफ़ देखा और काउंटर से हटकर उनके पास आ खड़ा हुआ।

श्रीवास्तव साहब ने मैनेजर की तरफ़ देखकर धीमे से कहा, 'शहर में एक इन्टेलेकच्युअल घटना घट गयी है। उसी पर इन्टेलेकच्युअल डिसकशन हो रहा है।' मि० खन्ना ही-ही करके हँसने लगे।

मैनेजर साहब के चेहरे पर सख़्ती की मात्रा थोड़ी बढ़ गयी। श्रीवास्तव साहब ने कहा 'शायद आप इन लोगों के ज़ोर-ज़ोर से हँसने पर नाराज़ हैं। आप जानते नहीं ऐसी घटना चाहे चुपचाप घट जाय पर उसकी बातचीत बिना शोर के नहीं होती।' श्रीवास्तव ने दाँतों को हल्का खोल कर मैनेजर को चले जाने का इशारा कर दिया।

इस तरह काट दिया जाना मैनेजर को काफ़ी बुरा लगा।

श्रीवास्तव ने उसी अन्दाज़ में कहा, 'ऐसे मौके पर जब लोग इन्टेलेकच्युअल घटनाओं और चर्चाओं का महत्त्व न समझते हों ···' तो आँख दबाकर धीमे से बोले, 'नौ-दो-ग्यारह हो जाना चाहिये।'

सब लोगों ने कुर्सियाँ खिसकायीं और उठ गये। मि० खन्ना रुक गये।

'विग्रह', दिसम्बर १९६६

गाउन

दरवाज़ा ढुका था। खोलने से पहले सुनीताजी ने कान्ता की तरफ़ देखा। कान्ता ने फुसफुसाते हुए कहा 'अम्मा, नॉक तो कर लीजिये।'

यह बात सुनीताजी को पसन्द नहीं आई। एक नज़र कान्ता पर डालकर पूरा दरवाज़ा खोल दिया और धड़धड़ाती हुई घुस गई। कार्ली शमीज़ में ही ड्रैसिंग टेबिल के सामने खड़ी थी। काले रिबन से बाल पीछे बँधे थे। चेहरे पर लगा 'वेस' गीला था। कार्ली के मुँह से एकाएक, 'औउऽऽ' निकला। झपटकर स्टूल पर रखा किमोना लपेट लिया। उसका चेहरा तन गया था। कान्ता दरवाज़े में ही खड़ी दूसरी तरफ़ देख रही थी। कार्ली ने मुस्कराकर जर्मन उच्चारण में 'प्लीज़' कहा और अपेक्षा-भरी दृष्ट से देखने लगी। कान्ता को सुनीताजी से कहना पड़ा 'कहिये अम्मा, भाभी

को ड्रेस करने दीजिये।'

सुनीताजी ने कान्ता की बात पर ध्यान नहीं दिया। कार्ली को सम्बोधित करके बोली 'अरे आपस में क्या शर्म, तुम लोग तो मर्दों से भी शर्म नहीं करतीं।' कार्ली ने कान्ता से टूटी-फूटी अंग्रेज़ी में पूछा, 'क्या कह रही हैं?'

कान्ता का चेहरा सुर्ख़ हो गया। उसे बताना पड़ा। कार्ली की आँखें सिकुड़-सी गयीं। उसने सुनीताजी की तरफ़ आश्चर्य से देखा, फिर धीरे से मुस्कराकर बोली 'हमारे देश में मेकअप के लिए भी उतना ही एकान्त चाहिये जितना सहवास के लिए आवश्यक होता है।' कार्ली ने वाक्य तोड़-तोड़कर कहा। कान्ता के चेहरे पर गहरा संकोच उभर आया। सुनीताजी ने पूछा 'कार्ली क्या कह रही है?'

कान्ता बिखर गई 'अम्मा, आख़िर आप समझती क्यों नहीं? उनको मेकअप करने दीजिये। यहाँ बैठकर आपको क्या मिल रहा है?'

सुनीताजी ने बड़ी बेपरवाही से कहा 'मुझे तेरा लेक्चर नहीं सुनना, बता, कार्ली क्या कह रही है?'

झुँझलाहट से कान्ता का चेहरा असंयत हो गया। झटके से घूमकर बोली 'मैं तो जा रही हूँ, आप बैठी रहिये!'

कार्ली ख़ामोश खड़ी देख रही थी। कान्ता का बिगडना कार्ली के चेहरे पर भी था। उसकी आँखों के नीचे की खाल हल्की-सी खिंच गई थी।

सुनीताजी ने कान्ता की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। कार्ली के वेनिटी-बॉक्स की ज़िप खोलने-बन्द करने लगीं। कार्ली अभी तक किमोना लपेटे खड़ी थी, उसकी नंगी टाँगें नीचे से झाँक रही थीं। वेनिटी-बॉक्स उठाते ही उसके पैरों में हरकत हुई। लेकिन वह उसी जगह खड़ी रही। होंठ खुलते-खुलते रह गये। कान्ता के बाहर चले जाने से कार्ली कुछ भी कह पाने में असमर्थ थी। सुनीताजी ने वेनिटी-बॉक्स रख दिया। मेज़ पर रखी हो लिपस्टिक एक साथ उठाकर देखने लगीं। कार्ली को लगा

सुनीताजी लिपिस्टिक होंठों से लगा लेंगी। उसके मुँह से पुनः, 'प्लीज़' निकला। चेहरे पर बेचारगी झलक आई। सुनीताजी लिपिस्टिक अपनी उँगलियों पर लगा दोनों रंगों का मिलान करने लगीं। एक मेज़ पर रख दी। दूसरी हाथ में दबाकर कान्ता को पुकारा।

कान्ता अभी तक सहज नहीं हुई थी। आकर दरवाज़े पर खड़ी हो गई। कार्ली ने कुछ कहना चाहा। उससे पहले ही सुनीताजी ने बोलना शुरू कर दिया 'ज़रा कार्ली से कह दे, यह लिपिस्टिक मैं ले रही हूँ।'

कान्ता ने ज़ोर से डाँटा 'अम्मा, चाचाजी इतना सामान तो लाए हैं, अब आन्टी से लिपिस्टिक भी माँग रही हैं। क्या सोचेंगी? हिन्दुस्तानी कैसे मँगते होते हैं!'

सुनीताजी को कान्ता का बीच में बोलना बहुत बुरा लगा। डपटती हुई बोली 'मैंने तुझे बीच में टाँग अड़ाने के लिए बुलाया था? कौन लाख-दो-लाख की चीज़ माँग रही हूँ, चार आने की लिपिस्टिक! तेरे पापा के साथ डिनर-विनर में जाना पड़ता है। इसका रंग ज़रा-सा हल्का है, ऐसी यहाँ मिलती नहीं। मुझे तो किसी की रत्ती-भर चीज़ की दरकार नहीं।'

कान्ता से रुका नहीं गया, 'चार आने की है तो बाज़ार से मँगा लीजिए, ये लिपिस्टिक यहाँ सौ रुपये की भी नहीं मिलेगी।'

कार्ली के चेहरे का बेस सूख गया था। सफ़ेद-सफ़ेद लकीरें पड़ गई थीं। उसकी टाँगों पर पसीना आने लगा। उसने बीच ही में कान्ता से कहा, 'कान्ता प्लीज़···आ'म हेल्ड अप!'

कान्ता ने सुनीताजी का हाथ पकड़ लिया, 'चलिये अम्माँ बाहर, आन्टी कब से इस तरह खड़ी हुई हैं। आप लोगों को तो कुछ लगता नहीं। सब आपकी तरह थोड़ा ही हैं। पेटीकोट पहनकर सब्ज़ी देख ली, आधे कपड़े पहनकर बच्चों को डाँट लिया!'

सुनीताजी ने हाथ छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा 'राजकुमार के सामने तो सब कुछ हो जाता है···' फिर रुककर बोलीं

'राजकुमार हमारी बिना मर्ज़ी शादी थोड़े ही कर लेगा।'

कान्ता हाथ पकड़कर बाहर खींच ले गई। कार्ली ने कमरा अन्दर से बन्द कर लिया। कानों पर हाथ रखकर दो-तीन बार लम्बी-लम्बी साँसें लीं। किमोना उतारकर एक तरफ़ रख दिया। तौलिये से शरीर पोंछकर पाउडर छिड़कने लगी।

●

कार्ली तैयार होकर बाहर आई तो राजकुमार आ गया था। सुनीताजी उसके पास खड़ी हुई बात कर रही थीं। कान्ता काफ़ी उत्तेजित थी, कह रही थी 'अम्मा, तुम क्यों नहीं समझतीं, आण्टी चाचाजी से शादी भी कर लेंगी तो भी हिन्दुस्तानी बहू की तरह नहीं रह सकतीं।'

राजकुमार हँस रहा था। कार्ली सुनीताजी की ओर देखकर नमस्कार करने की मुद्रा में मुस्कराई। उसका चेहरा एकदम साफ़ था। कान्ता भी मुस्करा दी। राजकुमार के हाथ-में-हाथ डालकर जर्मन भाषा में कुछ कहा। राजकुमार ज़ोर से हँस दिया। सुनीताजी गम्भीर बनी खड़ी रहीं। कान्ता के चेहरे पर भी हल्की मुस्कराहट आ गई। राजकुमार ने कार्ली की बात सुनीताजी को सुनाई 'देखा भाभी, क्या कह रही है!'

सुनीताजी ने कुछ तिरछी नज़रों से देखा 'क्या···?' राजकुमार ने एक क्षण रुककर सुनीताजी की ओर देखा, फिर उसी तरह मुस्कराता हुआ बोला 'यही कह रही हैं कि हिन्दुस्तानी महिलाएँ बहुत···बहुत· मेरा मतलब है क्या कहते हैं उसको···' सुनीताजी तुरन्त बोलीं, 'कहते क्या हैं, यही कह रही होगी बेवकूफ़ होती हैं। ज़रा कमरे में ही तो चली गई थी। घर में तो घर की तरह ही रहा जाता है।'

राजकुमार फिर हँस दिया 'अरे भाभी, तुम ज़रा देर में नाराज़ हो जाती हो! इसने जर्मनी में कहा था, इसलिए हिन्दी का ठीक शब्द याद नहीं आ रहा था। कार्ली का मतलब था बहुत भोली और बोल्ड··· मेरा मतलब हेकड़ होती हैं।' सुनीताजी के चेहरे पर हल्की-सी

मुस्कराहट आ गई। कार्ली की तरफ भी उन्होंने अपेक्षाकृत नरम नज़र से देखा। वह मुस्करा दी। सुनीताजी ने कान्ता की तरफ़ देखकर कहा 'यह कान्ता मेरे पीछे इस तरह भूत-कुत्ते लगाये हुए है, जाने मैं कहाँ की बेवकूफ़ इस घर में आ गई हूँ। मैंने भी पढ़ा-लिखा है, बड़ी-बड़ी सभा-सोसाइटी में आती-जाती हूँ, तुम्हारे भाई डिप्टी सेक्रेटरी हैं—यह कान्ता समझती है मैं पक्की गँवार हूँ।'

राजकुमार ने सुनीताजी के दोनों हाथ पकड़ लिये और बोला 'वाह भाभी, तुम तो बॉल भी जानती हो, आओ थोड़ा हो जाये।'

सुनीताजी नाराज़गी दिखाती हुई बोलीं 'शर्म नहीं आती तुम्हें मज़ाक करते, बड़ों के साथ इस तरह करते हो। मुझ पर बॉल-वॉल नहीं नाचे जाते। अब बुढ़ापे में मज़ाक करते हो!'

राजकुमार उनके हाथ पकड़े आगे-पीछे होकर नाचने लगा। कार्ली और कान्ता ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगीं। सुनीताजी ने शरीर ढीला छोड़ दिया और राजकुमार के साथ घिसटती रहीं। दोनों छोटे बच्चे भी निकल आए थे। सुनीताजी को देखकर तालियाँ बजा रहे थे। सुनीताजी बड़बड़ाती जा रही थीं 'बेशर्मी की भी हद होती है, बच्चों के सामने इस तरह कर रहे हो···!'

सुनीताजी को थोड़ी देर चकफेरी खिला देने के बाद, राजकुमार ने कार्ली की तरफ़ देखकर कहा 'कहिये तो भाभी, अपनी होने वाली बेगम और आपकी बहू के साथ बॉल दिखाया जाय?'

सुनीताजी एकाएक उखड़ गईं 'बच्चों के घर में यह सब बेशर्मी मुझे पसन्द नहीं। शादी न ब्याह बेगम बन गई।'

इस बार राजकुमार की मुस्कराहट खिसियाहट हो गई। आवाज़ को मुलायम बनाकर बोला 'नाराज़ न हो भाभी, आप मना करती हैं तो नहीं नाचूंगा। मैं तो मज़ाक कर रहा था।'

राजकुमार की देखा-देखी कार्ली के चेहरे का रंग भी बदल गया। उसने पूछा भी। राजकुमार ने उसे समझा दिया [illegible] लोग बड़ों के

सामने नहीं नाचते, बड़ों के सामने बॉल करना अच्छा नहीं माना जाता।' कार्ली ने कुछ कहना चाहा, लेकिन मुस्कराकर चुप हो गई।

कान्ता चुपचाप खड़ी थी। राजकुमार पहले तो इधर-उधर देखता रहा, फिर बोला 'भाभी, हम लोग ज़रा घूम आयें ?' उनके चेहरे पर संकोच और झुँझलाहट थी। सुनीताजी ने गर्दन दूसरी तरफ़ घुमा ली। कान्ता ने आँख दबाकर चले जाने का इशारा किया। राजकुमार ने कार्ली की तरफ़ देखा। दोनों उठने को हुए, सुनीताजी ने रूखे ढंग से पूछा 'अकेले ही जाओगे ?'

राजकुमार ने कान्ता की ओर देखा। कान्ता ने आँख दबाकर फिर गर्दन हिला दी, 'जाइये !' राजकुमार ने हिचकते हुए कहा, 'दरअसल बात यह है कि कार्ली हिन्दुस्तानी खाना नहीं खा पाती। सोच रहा था इसको होटल में खिला लाऊँ।'

सुनीताजी का चेहरा तमतमा आया 'हम तो अपनी जान में अच्छे-से-अच्छा खिलाते हैं। जो खाना हमारे घर में नहीं खाया जाता, इसे कैसे खिला दें।'

राजकुमार ने उनकी ओर देखा। कार्ली उसका चेहरा देखकर सहम गई। सुनीताजी के चेहरे पर भी उसी तरह का भाव आ गया। राजकुमार ने उनकी ओर देखा और धीमे से कहा 'भाभी, अगर आपको असुविधा होती हो तो···' लेकिन वह तुरन्त सँभल गया और रुककर बोला 'कुछ दिन तो भुगतनी ही पड़ेगी।'

सबके चेहरे उतर गये। कान्ता ने बात बदलने के लिए कहा 'चाचाजी, आपको जाना है तो जाइए।' नहीं तो लौटने में देर होगी।' राजकुमार ने कार्ली से कहा, 'जल्दी करो कार्ली, फिर लौटना भी है। भाई साहब आते ही पूछेंगे।'

कार्ली कुछ पकड़ी गई-सी महसूस कर रही थी। उसने भी उसी तरह जर्मन भाषा में कहा 'चलो, मैं थोडी ही देर कर रही हूँ। तुम्हारी भाभी और तुम्हारे कारण ही देर हो रही है।' वह आगे-आगे चल दी।

उन लोगों को जाते देख सुनीताजी ने अपने होंठों पर छोटा-सा कोण बनाकर कहा 'तुम जा रहे हो, बाज़ार तो मुझे भी जाना था।'

कान्ता ने कुछ कहना चाहा। सुनीताजी अपने कमरे में चली गईं। वहीं से बच्चों को पुकारकर कहा 'तुम लोग भी जल्दी तैयार हो जाओ, चाचा के साथ चलना है।' राजकुमार ने कान्ता की तरफ़ देखा। कान्ता सकपकाहट में खड़ी थी। राजकुमार ने अपने को सहज बनाते हुए कहा, 'तुम भी तैयार हो जाओ।'

कान्ता ने मना किया। राजकुमार ज़ोर से हँस दिया 'अरे तुम्हारे ही चलने से हमारी प्राइवेसी नष्ट नहीं हो जायेगी।' कान्ता भी तैयार होने चली गई।

राजकुमार कुछ देर तक चुपचाप खड़ा रहा। कार्ली उसको देखती रही, फिर दोनों एक-एक कुर्सी खींचकर बैठ गये। कुछ देर बाद कार्ली ने पूछा, 'तुम्हारा पूरा परिवार चल रहा है, इन सब लोगों को तुमसे बहुत लगाव है।'

राजकुमार हँस दिया 'मैं जब-तक यहाँ था एक आदमी कहीं साथ नहीं जाता था। यह तो सब तुम्हारे ही कारण है।'

दोनों एक साथ हँसे। कार्ली थोड़ा गम्भीर होकर बोली 'लेकिन तुमने तो कहा था हिन्दुस्तान में तुम मुझे खूब घुमाओगे, बड़ा मज़ा रहेगा। लगता है यहाँ पैसा-वैसा कुछ बचेगा नहीं। अपनी फ़ेमिली के लोगों को तुम्हें बहुत प्रेज़ेंट्स देने पड़ रहे हैं। अपनी कमीज़ें और सूट तक देने पड़ गए, मेरी घड़ी के लिए भी तुमने अपनी भतीजी से वायदा कर लिया। सुनीताजी को मेरी लिपिस्टिक बहुत अच्छी लगी।'

राजकुमार की गर्दन को हल्का-सा झटका लगा। तुरन्त हँसकर बोला 'तुम उनसे कह देना जाते समय लिपिस्टिक उनको दे जाओगी।' फिर रुककर कहा 'लेकिन लिपिस्टिक का वे क्या करेंगी··· तुम्हारी झूठी होगी।' वह हल्का-सा मुस्करा दी। कुछ देर बाद कहा 'लगता है हिन्दुस्तानी लड़की के लिए घर के सब लोगों को खुश रखना

बहुत जरूरी है ।'

राजकुमार हँसा । लेकिन चेहरा खिंच गया था ।

●

सुनीताजी कपड़े पहनकर बाहर निकल आईं । गालों पर हल्का-सा रूज़ था । राजकुमार का चेहरा क्षण-भर के लिए शरारती हो गया, मुस्कराकर कहा 'भाभी, तुम तो आज मेमों को मात कर रही हो ।'

सुनीताजी के मुस्कराने से लगा, ग़लती से मुस्करा दीं । गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा 'अरे बाबा, इतने पर भी तो तुम्हें साथ ले जाते शर्म आती है जैसे मैं नंगी-बूची जा रही हूँ । दो-चार साल ही से तो कार्ली के साथ रहने लगे, बचपन से तो हमारे साथ ही रहे हो । हमेशा कहा करते थे········ ।' अन्तिम वाक्य कहते समय उनकी गर्दन दूसरी ओर घूम गई ।

उनकी बात की ओर से ध्यान हटाकर राजकुमार कान्ता और बच्चों को पुकारने लगा 'कान्ता, रजनी, राजेश········जल्दी करो बेटा, देर हो रही है ।'

कार्ली गुम खड़ी थी । सुनीताजी ने उसकी तरफ़ देखकर हँसते हुए कहा, 'कार्ली से भी पूछ लिया, कभी बाद में डाँट पड़े ।'

राजकुमार को लगा कुछ जवाब देना चाहिए । लेकिन कार्ली ने बीच ही में पूछा, 'तुम्हारी भाभी मेरे बारे में क्या कह रही हैं ?'

राजकुमार ने उसे बताया, 'भाभी का ख़याल है पहले प्रेमिका से पूछ लेना चाहिये । कभी शादी से पहले ही तलाक की नौबत आ जाए ।' कार्ली धीरे से मुस्कराई 'क्या ये लोग ऐसा सोच सकते हैं ?'

कान्ता, रजनी, राजेश आ गए । कान्ता काफ़ी सादे कपड़ों में थी ।

कनॉट प्लेस पहुँचकर सुनीताजी ने तिरछी नजरों से राजकुमार की ओर देखते हुए पूछा 'तुम कहो तो मैं और बच्चे चले जायें ?' कान्ता ने तुरन्त जवाब दिया 'अगर इतना ख़याल था तो आना ही नहीं चाहिए था ।'

सुनीताजी की आवाज़ तेज़ हो गई, 'मैं अकेली ही तो आई हूँ न ! सबसे पहले तू ही सज-धजकर तैयार हुई ।' राजकुमार और कार्लो की तरफ़ इशारा करके बोली 'अरे ये दोनों तो चिड़िया के बच्चे हैं, कल फुर्र हो जायेंगे । तुझे तो हमारे ही साथ रहना है । हर बात में चाचा की तरफ से बोलती है ।'

कान्ता रुआँसी हो गई । कार्लो का चेहरा घिरा हुआ-सा मालूम पड़ने लगा । रजनी और राजेश फुटपाथ पर फ़ाउन्टेनपेन देख रहे थे । राजकुमार का मन हुआ सुनीताजी से कुछ कहे । लेकिन उसने कान्ता को समझाना शुरू कर दिया 'अरी पगली अम्मा की बात का कहीं बुरा मानते हैं, इतना तो सहना ही पड़ता है ।'

सुनीताजी दूसरी ओर देख रहीं थीं, तुरन्त बोलीं 'तुम्हारी तरह यह भी हम लोगों की परवाह नहीं करती ।' राजकुमार चुप रहा । दोनों बच्चे अपने-अपने हाथों में एक-एक कलम सँभाले आ गए । सुनीताजी के पास आकर ज़िद करने लगे 'अम्मा कलम लेंगे ।'

'मेरे पास नहीं पैसे-वैसे —अपने पापा से कहा करो ।' सुनीताजी ने दबी नज़र राजकुमार की तरफ़ देखा । राजकुमार ने बिना उनकी ओर देखे बच्चों से पूछा 'कितने पैसे के हैं ?'

'दो-दो रुपये के !'

राजकुमार रुपये देने लगा तो सुनीताजी ने दबी ज़बान से कहा, 'कलम ही खरीदवाने हैं तो दो-दो रुपये के क्या !'

कान्ता ने राजकुमार से कहा 'चाचाजी, ये लोग ज़्यादा क़ीमती कलम का क्या करेंगे, रोज़ तो खो देते हैं ।'

सुनीताजी ने कान्ता की ओर काफ़ी सख्त नज़र से देखा 'अपने आप तो एवरशार्प खरीदकर लाई थी, तेरे ही जी है, ये तो ऐसे ही कहीं से आ गये हैं ।'

कान्ता ने जवाब देना चाहा । राजकुमार ने बीच ही में कहा 'ठीक है, इनको भी एवरशार्प ही खरीद देंगे ।'

सुनीताजी ने मना किया 'नहीं, कोई ज़रूरत नहीं...'

सब लोग चुप रहे। कार्ली काफ़ी झुँझला उठी थी। उसने राजकुमार से जर्मन में कुछ कहा। राजकुमार के चेहरे पर असमर्थता उतर आई। उसने बड़े ही मुलायम स्वर में समझा दिया। सब लोग कुछ देर तक चुपचाप चलते रहे।

कार्ली ने राजकुमार को रोककर रूमाल खरीदने के लिए कहा। राजकुमार ने कान्ता से कहा 'कान्ता, तुम आन्टी के साथ जाकर नाक पोंछने के लिए कागज़ के रूमाल खरीदवा दो।'

कान्ता जाने लगी तो सुनीताजी ने पूछा 'क्या होगा कागज़ के रूमालों का? कपड़े के रूमाल से काम नहीं चल सकता?'

राजकुमार ने समझाना चाहा 'कार्ली को जुकाम है, कागज़ के ही रूमाल काम में लाती है। एक ही रूमाल को बार-बार काम में लाना डाक्टरी हिसाब से ठीक नहीं है।'

सुनीताजी ने अजीब तरह राजकुमार की तरफ़ देखा 'हमें भी सैकड़ों बार जुकाम हुआ है, किसी डॉक्टर ने नहीं बताया, एक रूमाल से एक बार नाक पोंछनी चाहिए। रूमाल तो इसीलिए होता है कि नाक सिनका और रूमाल से पोंछ लिया।'

राजकुमार ने उन दोनों को जाने को इशारा कर दिया। वे दूसरी तरफ़ चली गईं। राजकुमार ने कान्ता से कहा 'देखो हम कॉफ़ी हाऊस की तरफ़ चल रहे हैं, वहीं आ जाना।' उन दोनों के चले जाने के बाद भी सुनीताजी चुपचाप चलती रहीं। बच्चों ने एक-दो बार क़लम के बारे में पूछा। राजकुमार ने प्यार से समझा दिया, अभी खरीदवाते हैं बेटा।' सुनीताजी ने घूमकर बच्चों की ओर देखा, फिर सीधी चलने लगीं।

राजकुमार ने हल्की आवाज़ में पूछा 'भाभी, परसों कार्ली की सालगिरह है। उपहार में क्या दिया जाये?'

बच्चे तुरन्त बोले चाचाजी 'हम भी आंटी को प्रेज़ेण्ट देंगे।'

राजकुमार ने फिर प्यार से समझा दिया 'हाँ-हाँ, ज़रूर देना।'

सुनीताजी ने कुछ नाक चढ़ाकर कहा 'हमको तो कभी बर्थ-डे-प्रेज़ेंट मिला नहीं।' फिर रुककर बोलीं 'मैं क्या बतलाऊँ—तुम्हारी मर्ज़ी ! जो चाहो दो।'

फ़ाउन्टेनपेन की दुकान आ गई। राजकुमार बच्चों को फ़ाउन्टेनपेन ख़रीदवाने चला गया। दुकान से बाहर निकलकर बच्चों ने फिर कहा 'चाचाजी, आण्टी के लिए बर्थ-डे-प्रेजेण्टस भी खरीदवाइये।' राजकुमार ने सुनीताजी की ओर देखा। सुनीताजी दूसरी ओर देख रही थीं।

बच्चों ने अपनी बात फिर दोहराई। राजकुमार ने पूछा 'क्या खरीदोगे ?'

रजनी बोली 'हम सन्दल लैम्प खरीदेंगे।' राजू एक पेंटिंग के लिए ज़िद करने लगा।

राजकुमार ने समझाना चाहा 'नहीं बेटा, ऐसी चीज़ लेनी चाहिए जिसे आंटी आसानी से ले जा सकें।'

रजनी तुरन्त बोली 'इस समय यहीं छोड़ जायेंगी, लौटकर आयेंगी तो ले लेंगी।' राजकुमार चुप रहा।

थोड़ी दूर चलकर सुनीताजी बोलीं 'हमारी समझ में तो आता नहीं इतना पैसा खर्च करते हो। ये सब लड़कियाँ ऐसी ही होती हैं। किसी दिन लम्बी होगी। अब जान गई है बड़े भाई डिप्टी सेक्रेटरी हैं तो हाथ-पाँव फैला रही है। जिस बहू से घरवाले बोल-चाल ही न सकें ऐसी बहू से क्या फ़ायदा ? घर का नाम भी तो निकलता है।'

राजकुमार की आँखें बदल गईं। रोकते-रोकते भी उसके मुँह से निकल गया 'भाभी, आप यह क्या कह रही हैं ?' सुनीताजी उसका चेहरा देखकर सहम-सी गईं। दोनों बच्चे बारी-बारी से सुनीताजी और राजकुमार की ओर देख रहे थे। प्रेज़ेंण्ट्स की दुकान के सामने राजेश ने रजनी की ओर देखा। रजनी ने गर्दन हिलाकर मना कर दिया।

वे दोनों कॉफ़ी हाऊस के सामने पहले से ही मौजूद थीं। काफ़ी ज़ोर-ज़ोर से हँस रही थीं। राजकुमार ने जल्दी से जर्मन में पूछा

'रूमाल ले आईं ?'

उसने हँसकर बच्चों की तरह जवाब दिया 'कान्ता हमको जन्तर-मन्तर ले गई थी। वहाँ हम प्लेनेट्स पर चढ़ गये।' राजकुमार भी हँस दिया।

राजकुमार ने सुनीताजी से पूछा 'भाभी, क्या खायेंगी ?'

'तुम कार्ली को ही खिलाओ। हमें घर का खाना अच्छा लगता है।' कार्ली हालाँकि समझ नहीं पाई लेकिन गम्भीर हो गई।

राजकुमार ने बड़े ठण्डे स्वर में पूछा 'चाय, कॉफ़ी, दोशा—कुछ लीजिये।'

सुनीताजी ने बच्चों की तरफ़ देखते हुए कहा 'मैं क्या खाती ?'

राजेश ने ज़िद के साथ कहा 'चाचाजी, पहले आंटी के लिए प्रेज़ेण्ट्स ख़रीदवाइये।'

'हाँ, हाँ, ख़रीदवायेंगे—पहले कुछ खाओ-पिओ।'

राजेश ने रजनी की ओर देखते हुए कहा 'फिर बाज़ार बन्द हो जायेगा।'

'कितने-कितने रुपये चाहिये ? तुम मुझसे रुपये लेकर रख लो।'

रजनी ने बड़े बेढंगेपन से कहा 'सौ-सौ रुपये !'

कान्ता ने आपत्ति की 'जानते हो सौ रुपया कितना होता है ? मुँह फाड़ दिया सौ-सौ रुपये।'

राजकुमार ने सौ रुपये का एक नोट निकालकर रजनी को दे दिया, 'तुम दोनों के पचास-पचास रुपये। अब तो विश्वास हो गया।'

कान्ता ने कहा 'प्रेज़ेण्ट्स देने हैं तो अम्मा से रुपया लो। चाचाजी से रुपया क्यों माँगते हो ?' राजकुमार मुस्करा दिया।

सुनीताजी ने कान्ता की बात की ओर ध्यान नहीं दिया। बच्चों से नोट लेकर पर्स में रख लिया 'लाओ, मैं पर्स में रख लूँ, खो दोगे।' थोड़ा ठहरकर कहा 'चलो तुम्हारा ही भाग्य फला ! कार्ली को प्रेज़ेण्ट्स देने के लिए ही सही, सौ रुपये तो मिले।'

राजकुमार वहाँ से थोड़ा हटकर कार्ली के साथ बात करने लगा था। कान्ता ने प्रतिवाद किया 'आप कैसी बातें करती हैं! रिकार्ड-प्लेयर, ऑटोमेटिक टोस्टर, घड़ियाँ, इलेक्ट्रिक-शेवर, किचिन मशीन, क्या नहीं लाए ? सब आपको ही तो दिया है।'

'हमारी तरफ़ से चाहे कोई सारा मुल्क उठा लाए हमने तो एक चीज़ को लिखा था वही नहीं आई।'

'अम्मा, फ्रिज नहीं आ सकता था। कई बार तो समझा लिया। आप उसी का राग अलापे जा रही हैं।'

सुनीताजी को बहुत ज़ोर से गुस्सा आने को हुआ। राजकुमार ने आकर सुनीताजी से कहा 'भाभी, आप कहें तो मैं कार्ली को खाना खिलाकर ले आऊँ। इसका खाने का समय हो गया। आप बुरा न मानें। यह लीजिये रुपये, बच्चों को खिला-पिला दें।' राजकुमार ने पचीस रुपये निकाल उनकी ओर बढ़ा दिये। सुनीताजी ने रुपये लेकर पर्स में रख लिये और दूसरी तरफ़ देखने लगीं। राजकुमार ने कान्ता से कहा 'अच्छा कान्ता, हम एक घंटे में आते हैं।'

सुनीताजी ने एक क्षण के लिए दोनों को टैक्सी में जाते देखा और धीरे से बड़बड़ाईं, 'बेशर्मी की हद है।'

कान्ता दूसरी तरफ देखने लगी। बच्चे ज़िद कर रहे थे, 'अम्मा, हमारे रुपये दीजिये!'

●

कार्ली और राजकुमार दोनों कमरे में थे। सुनीताजी ने कान्ता से कहा 'ला अपने चाचाजी को बुला ले, सब लोग नाश्ते पर इन्तजार कर रहे हैं।'

कान्ता को झुँझलाहट आ गई, 'अभी तो पापा ने पुकारा था। आते होंगे।' मि० बागची चुपचाप सिगार पी रहे थे।

'बनते हैं अंग्रेज, तमीज़ नाम को नहीं। बाहर बड़ा भाई पुकार रहा है, अन्दर दोनों मौज मार रहे हैं। कल हम लोगों को बाजार ले जाकर

छोड़ दिया, सौ रुपये खुल गये।'

कान्ता ने तुरन्त पूछा 'अम्मा, सौ रुपये खुल गये या बच गये ?'

'हे राम, इस घर में तो बोलना मुश्किल है। बड़ों के मुँह से मुँह लगाये बैठे रहते हैं। जरा देर बात भी नहीं करने देते। उसे हमने पढ़ाया-लिखाया नहीं ?'

मि० बागची तुरन्त बोले 'अरे भाई आते होंगे। आख़िर आपकी होने वाली बहू विदेशी है। इससे तो आपकी शान ही बढ़ेगी।'

'बस बढ़ ली मेरी शान, तुम ही अपनी शान बढ़ाते घूमो। डिप्टी सेक्रेटरी हो गये इतना नहीं होता छोटे भाई को रोकें। भुगतना तो मुझे ही पड़ेगा !' कान्ता की तरफ़ इशारा करके बोलीं, 'अब तो आंटी के पीछे दीवानी हुई घूम रही है। जब कोई ब्याह करने को तैयार नहीं होगा तब पता चलेगा। मैं तो धूप में क्वार-कोठरी चिनवा दूँगी। वहीं पड़ी सड़ा करेगी।'

कान्ता उठकर चली गई। मि० बागची ने सुनीताजी से नम्रतापूर्वक कहा 'आप इस तरह की बात न किया करें, बच्चों...!'

'तुमको मेरे और बच्चों के बीच में बोलने की ज़रूरत नहीं। उसे तो बाहर भेजकर बिगाड़ दिया। इन्हें भी बिगाड़ोगे। तुम डिप्टी सेक्रेटरीपन दफ़्तर में ही दिखाया करो।'

'आप तो नाराज होने लगती हैं। डिप्टी सेक्रेटरी तो आपके भाग्य से हो गया हूँ। आप ही तो मेरी भाग्य-लक्ष्मी हैं।' मि० बागची ने भावहीन चेहरा बनाते हुए कहा।

'ये सब बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं। आदमी को काम से काम रखना चाहिये।' उनके चेहरे का रंग हल्का-सा बदल गया था।

'आप ठीक कहती हैं।' कहकर बागची साहब बुझा हुआ सिगार जलाने लगे।

सुनीताजी स्वयं राजकुमार को बुलाने चली गईं। राजकुमार और कार्ली दोनों तैयार हो गये थे। हाथ-में-हाथ डाले डांस के स्टेप्स लेकर

हँस रहे थे। राजकुमार कह रहा था 'रात उस मोटे आदमी की तोंद के कारण पार्टनर को बड़ी परेशानी हो रही थी। उसके क़दम इस तरह पड़ रहे थे।' उसने उसी तरह क़दम रखकर बताये।

कार्ली ने कहा 'ओ SS, तोंद के कारण दोनों पार्टनर्स के बीच एक हाथ की दूरी थी। जब तुम्हारी तोंद ऐसी हो जाएगी, मैं तलाक दे दूँगी।'

एक-दूसरे से अलग होकर मुड़े। सुनीताजी फुर्ती के साथ दरवाज़े से हट गईं। चाय पीते समय भी सुनीताजी चुप थीं। मि० बागची बिलकुल अफ़सराना ढंग में जवाब-सवाल कर रहे थे, 'आपको हिन्दुस्तान अच्छा लगा ?'

उसने आँखें चमकाकर और धीरे से गर्दन हिलाकर हाँ कर दी।

'आप हिन्दुस्तान में रहना पसन्द करेंगी ?'

कार्ली ने हिन्दुस्तानी लड़कियों की तरह ही मुस्कराकर राजकुमार की ओर देखा। थोड़ा रुक-रुककर अंग्रेज़ी में जवाब दिया 'दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई अच्छे लगे।'

उसी गंभीरता के साथ राजकुमार की तरफ इशारा करके पूछा 'यह हिन्दुस्तानी जानवर कैसा लगा ?'

कार्ली ने हल्की-सी नाक चढ़ाकर गर्दन हिला दी। बागची साहब 'हूँ' करके ख़ामोश हो गए। कान्ता और राजकुमार हँस दिये। सुनीताजी अब तक गंभीर बनी बैठी थीं। बीच-बीच में अपने पति या राजकुमार की तरफ़ देख लेती थीं। एक-दो बार कार्ली की ओर भी देखा।

चाय के समय कॉफ़ी गंभीर वातावरण रहा। कार्ली बीच-बीच में राजकुमार से एक-आध वाक्य बोल लेती थी। सुनीताजी के आँखों से मना कर देने के कारण बागची साहब ख़ामोश थे।

चाय खत्म होने से ज़रा देर पहले सुनीताजी की मित्र मिसेज़ वर्मा भी आ गईं। उनके चेहरे पर प्रसन्नता दिखलाई पड़ने लगी। मिसेज़ वर्मा अपने दो बच्चे भी साथ लाई थीं। वे तीनों कुर्सियाँ खींच-खींचकर उसी मेज़ पर बैठ गये। कार्ली ने राजकुमार की ओर देखा। उसने

जर्मनी में समझा दिया 'यहाँ सब चलता है ख़याल मत करो।'

कान्ता मिसेज़ वर्मा और उनके बच्चों के लिए प्याले-प्लेट ले आई। कार्ली बैठी-बैठी ऊबने लगी थी। दूसरी तरफ़ गर्दन करके राजकुमार से बातें करती रही। बीच-बीच में हँस देती थी। राजकुमार भी हँसता था। हँसने के साथ ही सबके चेहरों की तरफ़ देख लेता था। सुनीताजी को उन लोगों का आपस में बात करना अच्छा नहीं लग रहा था। बागची साहब ने सुनीताजी से पूछा "आप कहें तो हम उठ जायें?"

सुनीताजी डपटकर बोलीं 'मिसेज़ वर्मा आई हैं, आप उठकर जा रहे हैं। आप भी विलायती हो गये।'

बागची साहब फिर सिगार पीने लगे।

मिसेज़ वर्मा ने सुनीताजी से कहा 'बहन, अपनी होने वाली देवरानी से तो मिलवाओ। आज तो हम इन्हीं से मिलने आये हैं। आप बता रही थीं चेहरे की खाल को सुन्दर बनाना जानती हैं।'

सुनीताजी के होंठ क्षण-भर को सिकुड़ गये "फिर मुस्कराकर राजकुमार से कहा 'ये मेरी फ्रेंड मिसेज़ वर्मा हैं, कार्ली से मिलने आई हैं।'

राजकुमार ने कार्ली को समझा दिया 'ये मिसेज़ वर्मा हैं, अपनी स्किन को सुन्दर कराना चाहती हैं।'

'ओह, इस खाल को तो ईश्वर ही ठीक कर सकता है।' कहकर कार्ली ज़ोर से हँस दी। मिसेज़ वर्मा थोड़ी हतप्रभ हो गईं। सुनीताजी माथे पर बल पड़ गये।

राजकुमार ने खुशामदाना ढंग से कहा, 'तुम मना न करो। ज़रा-सा कह दो। वरना भाभी को नाराज़ होने का एक और मौका मिल जाएगा।'

उसने अजीब तरह कंधे मटकाकर कहा, 'जैसा तुम चाहो।'

उसके कंधे मटकाने पर मिसेज़ वर्मा तुरन्त बोलीं, 'भई हम लोग इतने सुन्दर तो नहीं हैं। हमारी खाल से कहीं इनके हाथ न छिल

जायें !'

राजकुमार पहले तो हतप्रभ हो गया, फिर मिसेज़ वर्मा को समझाते हुए कहा 'कार्ली कह रही है इनकी स्किन तो पहले ही मुलायम है, इनको क्या ज़रूरत है ?'

'अरे कहाँ मुलायम है ! वे कहते हैं तुम्हारी खाल तो सूखे तालाब की सतह की तरह है ।'

सुनीताजी तुरंत बोली, 'वैसी तो हमारी है, आपकी तो फिर भी मुलायम है ।'

'अरे बहन, आप भी इन लोगों के साथ मिल गईं । आपका क्या ? दौरानी अपने जैसा बना लेगी ।'

मि० बागची ने मिसेज़ वर्मा की तरफ़ देखकर धीरे से कहा 'आप मिसेज़ बागची के मज़ाक का बुरा न मानें । आदत से ही मज़ाकिया हैं ।'

सब लोग हँस दिये । बागची साहब बुझा सिगार मुँह में दिये गंभीर बने बैठे रहे ।

सुनीताजी ने कार्ली की तरफ़ देखकर राजकुमार से कहा 'कार्ली से कह दो इनका स्किन-ट्रीटमेंट कर दें ।'

कार्ली उठकर कमरे में चली गई । करीब पन्द्रह मिनट बाद मिसेज़ वर्मा को बुलाने आईं । बच्चे भी ज़िद करने लगे । मिसेज़ वर्मा ने अपने आप ही बच्चों से आने के लिए कहकर सुनीताजी से पूछा, 'इनका भी कर देंगी ?'

'हाँ, हाँ, ज़रूर-ज़रूर ।'

कार्ली ने राजकुमार की तरफ़ देखा । राजकुमार का चेहरा थोड़ा तन गया था । उसने उसी स्थिति में कहा 'आज तो तीनों का कर दो, कल से किसी का न करना । मैं भाभी को मना कर दूँगा । रोज़-रोज़ यही काम रहता है ।'

सुनीताजी ने पूछा, 'क्या बात है ?'

'कुछ नहीं, कह रही है सब दवाइयाँ खत्म हो गईं। वैसे भी एक-दो बार कराने से कुछ नहीं होता। एक-एक हफ़्ते के चार कोर्स होते हैं। तब कुछ फ़र्क पड़ता है।'

सुनीताजी को अच्छा नहीं लगा। मिसेज़ वर्मा के अन्दर चले जाने पर बोलीं 'हम पर तो जो काम आता है आधी रात तैयार रहते हैं। उसमें भी क्या नखरे! हम तो इसी की तारीफ़ के लिए कह देते थे। आगे से कान पकड़े जो किसी से ज़िक्र भी करें।'

राजकुमार ने किसी तरह की सफ़ाई नहीं दी। चुपचाप बैठा रहा। सुनीताजी उठकर अन्दर चली गईं। मि० बागची कुर्सी से उठकर राजकुमार के पास आये। उसके कंधे पर हाथ रखा और कमरे में चले गये। कान्ता हँस पड़ी। राजकुमार भी मुस्कराकर चुप हो गया।

आधा घण्टे में कार्ली उन तीनों के चेहरे मुलायम बनाकर बाहर ले आई। ब्लाउज़ की बाँहें उलटी हुई थीं। उसने राजकुमार से कहा 'ये शायद कल बहनों को लाने के लिए कह रही हैं, मैं ठीक नहीं समझ पाई।'

राजकुमार के चेहरे पर अजीब वितृष्णा-सी आ गई 'कल तुम्हारा जन्म-दिन है। कैसे हो सकता है? ख़ैर, देखा जाएगा।'

सुनीताजी पीछे आकर खड़ी थीं। मिसेज़ वर्मा ने कहा 'बहनजी, कर्लीजी को घमंड छू भी नहीं गया। बेचारियों ने बड़ी अच्छी तरह मालिश की। देखिये खाल कैसी मुलायम हो गयी।' उन्होंने अपना गाल सुनीताजी की तरफ़ बढ़ा दिया। सुनीताजी ने उँगली लगाकर देखा, 'इतना तो सरसों के तेल में बेसन मिलाकर लगाने से हो जाता है।'

'कल तो मैं अपनी दोनों बहनों और भतीजी को लेकर आऊँगी।' सुनीताजी के होंठों पर इन्कार आते-आते रह गया। उन्होंने कहा, 'हाँ-हाँ ज़रूर।'

राजकुमार ने कहा 'भाभी कल तो इनका जन्मदिन है। किसी और दिन रख लीजिये, दवाओं का इन्तज़ाम भी करना होगा।'

सुनीताजी को राजकुमार का बीच में बोलना ठीक नहीं लगा। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। मिसेज़ वर्मा ने ही कहा 'इसमें देर कितनी लगती है। हमें बता दें दवाइयाँ तो हम लेते आयेंगे।'

राजकुमार वहाँ से उठकर चला गया। कार्ली को भी साथ ले गया। सुनीताजी क्रोध के साथ उन दोनों को जाते देखती रहीं। मिसेज़ वर्मा ने धीरे से कहा 'लगता है आपके देवर का मन बदल गया।'

'जर्मनी जाने से पहले तो जान देता था। भाभी-भाभी कहता घूमता था। अभी भी एकाएक सामने बोलने की हिम्मत नहीं पड़ती। दरअसल हम लोगों की चमड़ी इतनी चिट्टी कहाँ होती है।' सुनीताजी का चेहरा सहज नहीं हो पाया था।

'हाँ, यह बात तो आप ठीक कह रही हैं। मैं उन लोगों को लेकर कब आऊँ? छोटी भतीजी का रंग थोड़ा पक्का है। अगर चार-छः रोज़ उसकी मालिश कर दें तो बेचारी को अच्छा घर-बार मिल जायेगा। ये लोग भी तो बचपन में खूब मालिश कराती होंगी। तभी तो ऐसी बुर्राक बनी घूमती हैं। गुन किसी की भलाई में लग जाए तो बड़ा पुण्य होता है।'

सुनीताजी ने लम्बी-सी साँस लेकर कहा 'हमें क्या मतलब? अपनी ऐसी की तैसी में जायें।'

मिसेज़ वर्मा ने चलते-चलते कहा 'अच्छा तो मैं परसों आऊँगी।' सुनीताजी ने कोई जवाब नहीं दिया।

●

सुबह नाश्ते के समय जब राजकुमार ने डिनर के लिए सबको आमंत्रित किया तो कान्ता ने खड़े होकर कार्ली के लिए हैप्पी बर्थ डे गाया। बच्चों ने भी साथ दिया।

मि० बागची उसी गहन गम्भीर मुद्रा में ताली बजाते रहे। कार्ली ने खड़े होकर अभिनन्दन स्वीकार किया। सुनीताजी उठकर अन्दर चली गईं। राजकुमार और कार्ली ने उनको जाते हुए देखा और नज़रें झुका लीं।

नाश्ते के बाद राजकुमार ने सुनीताजी से पूछा 'कार्ली के लिए क्या प्रेज़ेन्ट लाना चाहिये । चलिए खरीद लायें ।'

सुनीताजी ने दूसरी तरफ़ गर्दन घुमाकर धीरे से कहा 'मेरी तबियत तो ठीक नहीं । दोनों चले जाओ ।'

राजकुमार ने पूछा 'कान्ता को ले जाऊँ ?'

'कान्ता क्या करेगी ?' उनके चेहरे पर सख्ती आ गई । वहाँ से हट-कर दूसरी तरफ़ चली गई ।

राजकुमार अकेला ही कार्ली को लेकर बाज़ार चला गया । कार्ली ने रास्ते में राजकुमार से कहा 'हम लोगों को हेम्बर्ग कब वापस लौटना है ?'

'अगले सप्ताह !' राजकुमार सड़क की तरफ़ देख रहा था ।

थोड़ी देर बाद उसने फिर कहा 'मेरी माँ अब तुमको बहुत प्यार करने लगी है । इन्तज़ार कर रही होगी ।'

राजकुमार खामोश रहा । कार्ली निकट खिसक आई । धीमे से बोली 'आर० के०, आज मैं नाचना चाहती हूँ । जब से जर्मनी छोड़ा हम लोग बिलकुल नहीं नाचे ।'

राजकुमार ने धीरे से कहा 'अच्छा ।'

●

मि० बागची शाम को जल्दी ही दफ़्तर से आए । बच्चों में बहुत अधिक उत्साह था । रजनी ने कार्ली को सलमे की जूती उपहार में दी थी । राजेश ने चिकन का स्कार्फ़ । दोनों चीज़ें उसे बहुत पसन्द आई थीं ।

सुनीताजी तैयार नहीं हुई थीं । राजकुमार ने उनके कमरे में जाकर कहा 'भाभी, तैयार नहीं हुईं ?'

उन्होंने उसकी तरफ़ देखा और गर्दन घुमा ली । राजकुमार खड़ा रहा । कुछ देर बाद बोलीं 'तबीयत ठीक नहीं ।'

राजकुमार की आँखें चढ़ गईं । धीरे से बोला 'भाभी, अगर हो सके तो चलो··कार्ली को बुरा लगेगा ।'

सुनीताजी ने बिना उसकी तरफ़ देखे कहा 'मैं क्या करूँ ? मेरे बिना क्या बर्थ-डे रुक जाएगा ?' राजकुमार चला आया। उसके होंठ काँप रहे थे ।

कमरे में आया तो कान्ता कार्ली से ज़िद कर रही थी 'आंटी, आज बर्थ-डे पर आप हिन्दुस्तानी ड्रेस पहनिये।' उसके हाथ में राजकुमार के ही द्वारा उपहार में दिया गया बनारसी साड़ी का सेट था। कार्ली ने राजकुमार की तरफ़ फ़रियाद-भरी निगाह से देखा । राजकुमार ने समझाना चाहा 'आज रहने दो। उसे अपनी ही ड्रेस पहनने दो।'

दोनों बच्चे भी आ गए थे । वे भी ज़िद करने लगे 'हम आंटी को साड़ी पहनायेंगे। अब आंटी हिन्दुस्तानी हो गई हैं।'

मि० बागची भी आ गये, उन्होंने भी बच्चों का साथ दिया 'मि० राजकुमार आपको साड़ी ही पहनने दो। मज़ा आयेगा।'

राजकुमार ने कार्ली से कहा 'बुरा न मानना।' और बाहर चला आया।

कान्ता ने ही कार्ली को साड़ी पहनाई। सुनीताजी एक बार भी उधर नहीं आईं। कार्ली का चेहरा काफ़ी गंभीर था। चलते समय राजकुमार ने कान के पास मुंह ले जाकर कहा 'माफ़ करना; तुम नाच तो नहीं सकोगी लेकिन आज तुम वाकई राजकुमारी लग रही हो।'

कार्ली हँस दी, पूछा 'आर० के०, तुम्हारी भाभी कहाँ हैं ?'

राजकुमार ने धीमी आवाज़ में कहा 'उनकी तबीयत खराब है।'

●

कार्ली से साड़ी सँभल नहीं रही थी। क़दम इधर-उधर पड़ रहे थे। लोग उसकी तरफ़ आँख फाड़-फाड़कर देख रहे थे। कार्ली बहुत अधिक सचेष्ट थी। बार-बार चारों ओर नजर घुमाकर देख रही थी। किसी को अपनी ओर मुस्कराते देख लेती थी तो चेहरा सुर्ख हो जाता था।

मि० बागची सिगार दबाये थे। कान्ता कार्ली के बराबर बैठी थी और जर्मन लड़के-लड़कियों के बारे में बात कर रही थी। रजनी और

राजेश आइस-क्रीम के लिए ज़िद कर रहे थे। राजकुमार बीच-बीच में मज़ाक करके हँसाने का प्रयत्न कर रहा था। सब लोग मज़ाक में भाग लेते थे। लेकिन राजकुमार रह-रहकर गंभीर हो जाता था।

मि० बागची ने बच्चों की नज़र बचाकर राजकुमार की प्लेट से थोड़ा-सा रोस्टेड चिकिन ले लिया था। कार्ली ने देख लिया था। उसने दुबारा उनसे रोस्टेड चिकिन के लिए पूछा। बागची साहब को कहना पड़ा 'मैं तो पूरी तरह शाकाहारी हूँ।' राजकुमार ने जर्मन भाषा में समझा दिया। वह मुस्कराने लगी। कान्ता भी मुस्करा दी।

लौटते समय राजकुमार और कार्ली एक टैक्सी में आये। राजकुमार ने कार्ली से कहा 'मुझे सख्त अफ़सोस है, तुम अपना जन्म-दिन अपनी मर्ज़ी से नहीं मना सकीं।'

कार्ली ने राजकुमार की तरफ़ देखा। धीरे से बोली 'कोई बात नहीं। अगले हफ्ते हेम्बर्ग पहुँचकर हम लोग सब कसर निकाल लेंगे। बर्थ-डे के लिए भी नाचेंगे, एंगेजमेण्ट-रिंग के लिए भी।'

दोनों हँस दिये। राजकुमार ने उसे निकट लाकर कहा 'तुममें बर्दाश्त करने की अद्भुत सामर्थ्य है।'

कार्ली फिर हँस दी।

●

सुनीताजी जगी हुई थीं। इन लोगों के पहुँचने पर वे चुपचप लेटी रहीं जैसे सो रही हों। एक-दो बार करवट बदली। बोलीं कुछ नहीं। सब लोग अपने-अपने कमरे में कपड़े बदलने चले गए। वे उठकर पलंग पर बैठ गईं। इधर-उधर देखने लगीं। थोड़ी देर बाद फिर लेट गईं। मि० बागची के आ जाने पर भी ख़ामोश रहीं।

उन्होंने झुककर देखा। सुनीताजी आँखें बन्द किये लेटी थीं। धीरे से पूछा 'आप सो गईं?'

सुनीताजी ने जवाब नहीं दिया। मि० बागची ने फिर पूछा 'आप नाराज़ हैं?'

सुनीताजी एकाएक बिगड़ गईं 'तुम्हें मेरी नाराज़गी की क्या परवाह।' उनके एकाएक बिगड़ जाने से वे एक कदम पीछे हट गये। थोड़ा सँभलकर बोले, 'आप ऐसा क्यों कहती हैं, मैं···मैं···।'

'मैं-मैं क्या करते हो ? तुम्हारे भाई और उसकी चहेती ने घर को नरक बना रखा है। मैं तो चुप हूँ। कुछ बोलती नहीं। बड़े-बड़े बच्चे हैं। कार्ली रात को नंगी सोती है, नामर्जाद नंगी ! गाउन थोड़ा उघड़ जाए तो बच्चों पर क्या असर पड़े ?' वह गाउन भी क्या—ढाके की मलमल की है। आपकी लाड़ली भी आज कह रही थी कि अम्माँ हम भी वैसा ही गाउन खरीदेंगे।'

मि० बागची ने हल्की आवाज़ में प्रतिवाद करना चाहा 'नहीं, आप यह क्या कह रही हैं ! आप तो जानती हैं, कभी-कभी सोते हुए साड़ी भी ऊपर उठ जाती है।'

सुनीताजी नाराज़ हो गईं 'हर बात को काटना, यह नई आदत सीख ली है।'

'आप नाराज हो गईं। मेरा मतलब था जरूर कुछ-न-कुछ पहनती होंगी। आपको ग़लतफ़हमी हो गई होगी।' बागची साहब उनकी ओर ग़ौर से देखने लगे।

सुनीताजी तेज़ आवाज़ में बोलीं 'तुम मुझे झूठा ठहराते हो।'

'नहीं-नहीं, मैं आपको झूठा नहीं ठहराता···मैं तो···' बीच में ही उनकी बात काटकर बोलीं 'मैं कुछ नहीं सुनना चाहती। किसी रोज़ आँखों से दिखा दूँगी।'

मि० बागची हकलाने लगे 'मेरा मतलब यह नहीं था, मैं कह रहा था···ये लोग बहुत सभ्य होते हैं।'

सुनीताजी ने डाँट दिया 'अच्छा अब सो जाओ। इस घर में मैं ही तो असभ्य हूँ।'

उन्होंने कुछ कहना चाहा। सुनीताजी ने करवट बदल ली। बागची साहब को भी दूसरी तरफ़ मुँह कर लेना पड़ा। उनका चेहरा और नरम

हो गया था।



सुनीताजी सुबह जल्दी उठ जाती थीं। घर में जाकर उठा-पटकी करती रहती थीं।

उस रोज़ सुबह-ही-सुबह राजकुमार तैयार होकर निकला तो सुनीताजी को कमरे के बाहर तख्त पर बठे पाया। उन्होंने राजकुमार को देखकर दूसरी तरफ नज़रें घुमा लीं।

'कैसे बैठी हो भाभी ?'

'तुम्हारी सेवा में, उठो तो बेड-टी दूं।'

राजकुमार हँस दिया। क्षण-भर खड़ा रहा। फिर बोला 'मैं ज़रा-एयरोड्रेम जा रहा हूँ, जर्मनी से एक मित्र आयेंगे।'

भाभी की नज़र तेज़ी से ऊपर उठी 'यहीं ठहरेंगे ?'

'नहीं, होटल में।'

वे तुरन्त बोलीं 'मैं क्या मना करती हूँ, यहीं ठहरा लो।' राजकुमार फिर हंस दिया।

सुनीताजी ने सुनाने के लिए ज़ोर से कहा, 'कार्ली को तो बेड-टी चाहियेगी ही ?'

राजकुमार हँस रहा था 'अरे भाभी, वह तो कुंभकरण की अवतार है। डेढ़ घण्टे से पहले थोड़े ही उठेगी। मुझसे रात कहा था जब एयरो-ड्रोम चलो तो उठा लेना। उठाया तो करवट बदलकर सो गई। बताइये ऐसे आदमी का क्या किया जाये ?'

सुनीताजी ने उसकी बात की ओर ध्यान नहीं दिया। रसोई की तरफ़ जाते हुए कहती रहीं 'तो पानी उतार दूं। अभी तो डेढ़ घण्टे बाद उठेंगी। ड्यूटी पर तो हूँ ही।'

राजकुमार चला गया।

राजकुमार के जाते ही सुनीताजी फिर बरामदे में आ गईं। कुछ देर अकेली खड़ी रहीं। फिर बाहर चली गईं। पाँच-सात मिनट बाद

बागची साहब को साथ लिये लौटीं तो उनका चेहरा घुटा हुआ-सा लग रहा था। बागची साहब को बरामदे में छोड़कर वे कार्ली के कमरे में चली गईं। फ़ौरन ही लौट भी आईं और पतिदेव का हाथ पकड़कर फुसफुसाते हुए दबंग आवाज़ में कहा 'चलो।'

बागची साहब ने चलते-चलते ही प्रतिवाद करना चाहा।

सुनीताजी चुप रहीं। कमरे के दरवाज़े पर ले जाकर कहा 'झाँक कर देखो।'

उन्होंने पूछा 'क्या देखूं ?' उनकी आँखें छोटी हो गई थीं और चेहरे पर कई भाव गडमड हो रहे थे। सुनीताजी ने स्वयं झाँककर देखा। धीरे से बड़बड़ाईं 'अच्छा करवट ले ली !' वे तुरन्त अन्दर गईं और गाउन का कोना उघाड़ आईं। मि० बागची लगातार झाँकते रहे थे।

लौटकर पूछा 'देखा ऽऽ ?'

उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। ज़ोर-ज़ोर से सिगार फूंकते हुए बरामदे में चक्कर काटने लगे।

'नई कहानियाँ,' नवम्बर १९६६

हत्या

वह जल्दी में था। उसने झटके से साइकिल खड़ी की, कमरे का ताला खोला, और बिस्तर पर पड़े अस्त-व्यस्त कपड़ों से एक मैला तौलिया उठाकर सूंघा। तौलिये को हाथ में लिये इधर-उधर नज़र डाली। फिर उसी तौलिये को गले में डालकर नल पर चला गया। साबुनदानी में लाइफ़-बॉय की छोटी-सी किरच बची हुई थी, उससे चेहरे पर हल्की-सी सफ़ेदी आ गई। उसने घुड़घुड़ाते हुए मुँह धोया और पंजों के बल चलकर कमरे में दाख़िल हो गया।

उसने अपने सब कपड़े उतार डाले। मैले कपड़ों में से कमीज़ें निकालकर देखने लगा। जो कमीज़ उसने उतारी थी दोनों कमीज़ों से ज़्यादा साफ़ नजर आ रही थी। बनियान और अंडरवियर एकदम काले- कीचट हो गये थे। उसने उन्हें सूंघकर देखा। उसका चेहरा थोड़ा

बिगड़ गया। कपड़े पहनने के बाद दाहिना हाथ उठाकर अपनी बगल सूँघी। कुछ देर तक कोट उलटता-पलटता रहा। कोट की पीठ निकली हुई थी। उसने कोट को दो बार खूँटी पर टाँगा और दो बार उतारा, फिर जल्दी से पहन लिया। टीन के बक्स से एक रेशमी रूमाल निकाला। वह काफ़ी मैला था। वह पलटकर उसने उसे नया कर लिया और बाहर निकल आया।

बाहर थोड़ा-थोड़ा अँधियारा हो गया था। आसमान की तरफ़ देख कर वह कुछ बुदबुदाया, फिर साइकिल बाहर निकालकर कमरे का ताला बन्द करने लगा। उसका चेहरा पैंडुलम की तरह था। कुछ देर उसी तरह खड़े रहकर वह ख़रामा-ख़रामा चलने लगा। बीच-बीच में एक-दो कदम तेज़ भी रख देता था, फिर अपने ही आप धीमा हो जाता था। उसकी साइकिल का फ्री-व्हील क्रिर-क्रिर बोल रहा था।

लाल गिरजे के पास पहुँचकर वह रुक गया। सड़क पर इक्के-दुक्के लोग आ-जा रहे थे। एक ट्रक तेज़ी से निकल गया। और उसका झपाटा उसके चेहरे से चिपक गया। एक अधकचरी उम्र का लड़का ज़ोर-ज़ोर से बेसुरा गाता हुआ साइकिल पर जा रहा था। उसका मन हुआ वह भी साइकिल पर चढ़कर गाना गाता हुआ ही जाए। उसने धीमी आवाज़ से गाने का प्रयत्न भी किया, लेकिन उतने धीमेपन से ही उसका गला भरभराने लगा। वह चुप होकर आगे बढ़ गया। कुछ देर तक वह सैर करते हुए मियाँ-बीवी के पीछे चलता रहा। फिर एकाएक साइकिल पर सवार होकर आगे निकल आया।

वे दोनों पीछे छूट गये थे। अँधेरा भी अपेक्षाकृत अधिक हो गया था। वह गली के मोड़ पर आकर रुक गया। इस बार भी उसने आसमान की ओर देखा और कुछ बुदबुदाता हुआ गली में चला गया। एक मकान के सामने कुछ देर तक खड़ा रहा फिर दरवाज़े से कान लगाकर टोह लेने की कोशिश की। उसके चारों ओर का अँधेरा और गहरा होता गया। केवल उसकी साइकिल का हैंडिल चमक रहा था। हैंडिल को

बीचो-बीच मुट्ठी से पकड़े होने के कारण वह दो टुकड़ों में बँट गया था। उसने दरवाज़ा हल्के से खटखटाकर इधर-उधर देखा, थोड़ा रुककर फिर खटखटाया। बराबर वाले मकान से आवाज़ आई—कौन ? साइकिल नज़दीक खींच ली और दीवार से सट गया। उसी मकान से किसी ने पूछने वाले व्यक्ति को 'कौन' का जवाब दे दिया। 'हमारे यहाँ नहीं, बराबर वाले घर में है।' कुछ देर तक उस अँधेरे में उसका शरीर उठता-बैठता रहा। शरीर के साथ-ही-साथ अँधेरे का दबाव भी घट-बढ़ रहा था। दरवाज़े के पास पहुँचकर बहुत धीमे से पुकारा 'चाची ऽऽ।'

दरवाज़ा धीमे से खुला। वह साइकिल को हाथों पर उठाकर अन्दर चला गया। उसने धीमे से पूछा, 'बच्चे सो गये ?'

वे चुप रहीं। अपने-आप ही फिर कहा 'बहुत जल्दी सो गये, कई दिन हो गये थे देखे···।' कहने के बाद उसे कुछ अजीब-सा लगा। कुछ देर तक दोनों चुपचाप खड़े एक-दूसरे को देखते रहे। उसके चेहरे पर झेंप थी और नज़रों को इधर-उधर घुमा रहा था। चाची ने एक आँख का कोना दबाकर कहा 'बच्चों को देखना था तो दिन में आते।' वह चुप रहा। उसके चेहरे से लगा चाची ने बात किसी विदेशी भाषा में कही है। उन्होंने आवाज़ और तेज़ कर ली 'तुम रोज़ ही आने लगे ?'

वह गर्दन झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। उसके चेहरे पर कोई भाव नहीं था। चाची ने आवाज़ बदल दी, 'अभी तो खाना भी नहीं खाया होगा ?' इस बार उसने नज़र उठाई। वह भूखा था। चाची मुस्करा दी। उसने धीरे से कहा 'बैठ जाओ।' वह खाट की पट्टी पर बैठ गया।

चेहरे की कसावट में ढीलापन आता जा रहा था। चाची ने बरामदे में जाकर बुलन्द आवाज़ में कहा 'शंकर भैया, तुम्हारे चाचा तो बाहर नौकरी पर रहते हैं, तुम्हीं हो कभी-कभी आ जाते हो। सुख-दुख की खबर ले जाते हो।' कहते समय उनका मुँह ऊपर की तरफ़ था। शंकर अपने खोल में आता जा रहा था। पाँव सीधे हो गये थे। आँखों में भी

खुलापन नज़र आने लगा था ।

चाची ने उसी बुलन्दी से कहा 'अरे भैया, लोगों का क्या है उनकी तो बुद्धि ही भ्रष्ट है । किसी के बारे में चाहे जो कहें, चाहे जो सोचें ।'

शंकर पूरी तरह फैलकर बैठ गया । उसने भी बुलन्द आवाज़ में कहा 'चाची मैं तो अपने बॉस से भी नहीं डरता । जो सच्ची बात होती है डंके की चोट कहता हूँ । आज ही बॉस ने अबे-तबे करनी चाही, बस मैंने इस्तीफ़ा निकालकर हाथ में दे दिया ।'

चाची ने तिरछी नज़र से देखकर धीमीं आवाज़ में कहा 'इस्तीफ़ा ही देते और क्या करते ! यह तो ना हुआ कि जूता निकालकर उसकी खोपड़ी पीट देते ।' उसने गर्दन झुका ली । चेहरा उतर गया । चाची ज़रा ज़ोर से बोली 'तुम्हारे चाचा तो अपने अफ़सर की छाती पर चढ़ बैठे थे ।' चाची की आवाज़ धीमी हो गई 'तुम तो हमें सालभर से ही जानते हो, उन्हें पता चल जाय तो खून कर दें ।' वह काफ़ी आतंकित हो गया ।

चाची थोड़ा-सा मुस्कराई, फिर बोली 'तुम तो सीधे-सादे आदमी हो । वे भी यही समझते हैं, इसीलिए चक्कर लगाने को भी कह गये थे, नहीं तो उनके एक अफ़सर ने कहा था 'मैं अपनी आधी कोठी खाली किये देता हूँ, उसी में बीवी-बच्चों को रख दो ।' बात पूरी करने से पहले ही हँस दी, फिर बोली 'उसकी नज़र थी । मैं तो पराये मरद की छाया भी नहीं पड़ने देती ।' थोड़ा रुककर फिर कहा 'तुम तो घर के आदमी हो । उन्हें चाचा कहते हो···।' उसका चेहरा फिर साफ़ होने लगा बात बदलने के लिये बोला 'चाची, हमारे दफ़्तर के लोगों ने मुझे अपनी यूनियन का सेक्रेटरी चुन लिया है । सब कहते हैं अफ़सरों के सामने तुम्हारे सिवा कोई इतनी साफ़ बात नहीं कह सकता ।'

'दफ़्तर वालों को तो ऐसा आदमी चाहिये जिसे बलि चढ़ा सकें । तुम ही चूतिया मिले हो । सेक्रेटरी-वेक्रेटरी बनने के चक्कर में पड़ गये । निकाल-नुकूल दिये गये तो टुकड़े-टुकड़े को मोहताज हो जाओगे । कपड़े सिलवाने तक को तो पैसा पास नहीं । सारे कपड़ों में मार बदबू

भरी रहती है।' उसकी नाक में अपने ही कपड़ों की बदबू भर गई।

उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इधर-उधर ताक-झाँककर बात टालते हुए बोला 'चाचाजी कब आने वाले हैं?'

उन्होंने धीमे से कहा 'कम-से-कम आज नहीं।' कहकर वे ज़ोर से हँस दीं। उनके हंसने से कमरा पीतल के बरतनों की तरह बज उठा। वह खिसियाना-सा ज़मीन की तरफ़ देखने लगा।

चाची उठकर गई तो उसने अपनी गर्दन को झटका दिया, फिर कमरे में रखी चीज़ों पर नज़र गड़ा ली। ट्यूब-लाइट के नीचे तारकशी के काम की चाची के पति की नेम-प्लेट लगी थी 'के० के० दीवान, सेकशन अफ़सर।' सेक्शन में आधे 'क' की जगह पूरा 'क' बना हुआ था। दीवान के बाद का कौमा 'आ' की मात्रा-सा लगता था। उस नाम को देखते-देखते उसका चेहरा स्याह पड़ने लगा। वह कूदकर खड़ा होने को हुआ। चाची आ गई। चाची के आने को भी उसने बॉस की तरह ही लिया। खड़ा हो गया। चाची की बड़ी-बड़ी आँखों में मुस्कराहट उतर आई। चाची के एक हाथ में दूध का गिलास और दूसरे हाथ में दो बेसनी लड्डू और चार मट्ठी की तश्तरी थीं। उन्होंने दोनों चीज़ें उसके सामने रख दीं। उसने इन्हें देखा और स्टूल के पाये पर नज़र गड़ा ली। चाची ने कहा 'खा लो, इस समय तो यही है। खाने के समय आते तो खाना खिला देती।' उसने एक नज़र चाची के चेहरे पर डाली और दोनों लड्डू एक के बाद एक मुँह में रख गया। बेसन का लड्डू हलक में चिपक-सा रहा था। वह मुँह को जुगालने की तरह चलाता रहा।

चाची ने कहा, 'लगता है काफ़ी भूख लगी है, शायद आज पैसे-वैसे नहीं हैं? दो-चार मठरी और ले आऊँ। एक बार तुम्हारे चाचा भी बता रहे थे, पैसे की बहुत कमी रहती है तुम्हारी 'फ़ेमिली' बहुत बड़ी है न? तनख्वाह तो घर ही भेज देते हो। इसीलिए तुम्हारी शादी...' कहकर वह हँस दी। उसकी हंसी से वह थोड़ा हतप्रभ हो गया। तुरन्त एक मठरी मुँह में डालकर दूध की घूंट भर ली।

चाची नज़दीक सरक आई। उसने उन्हें तिरछी नज़रों से देखा और दूध का गिलास खाली कर गया। चाची की साड़ी का पल्ला उसके कंधे से छू रहा था। कंधे का वह हिस्सा गरम हो गया था। वह गर्दन नीची किये बैठा रहा। चाची ने कोन्ही से टकोरकर पूछा, 'मठरी नहीं खाओगे ?'

उसने जवाब नहीं दिया। वह मुसकुरा दी, 'अरे ले लो, रात-भर चाची को गाली दोगे।' उसने कुछ कहना चाहा, पर चेहरे पर बेबसी नज़र आने लगी। चाची तश्तरी ले जाने के लिए उठने लगी तो उसकी साड़ी का पल्लू उसके चेहरे के सामने लटक गया। उसने साँस अन्दर को खींची। साँस खींचकर उसे अच्छा लगा। चाची कुछ देर खड़ी रही, फिर चली गई। उसकी नज़र फिर चाची के पति की नेमप्लेट पर चली गई। एकाएक ढीलापन आ गया। वह फिर उठ खड़ा होने को हुआ, लेकिन उठने के स्थान पर उसने टाँग-पर-टाँग चढ़ा ली और पाँव हिलाने लगा। उसके पति के नाम की तख्ती दीवार से फिसलकर सामने रखे स्टूल पर चिपकती हुई-सी महसूस हुई। वह और ज़ोर-ज़ोर से पाँव हिलाने लगा। खाट आवाज़ करने लगी। चाची आकर ठीक सामने खड़ी हो गई, 'यह क्या कर रहे हो ? खाली-पीली खाट बुला रहे हो ?' उसने देखा चाची शैतानी के साथ मुस्करा रही है। वह भी मुस्कुरा दिया। उसके मुस्कुराने से चाची को कोई खास बात महसूस नहीं हुई। वह यह कहती हुई पलंग पर बैठ गई, 'लो हम रोके देते हैं खाट का चर मराना। बेकार ! जाने लोग क्या समझें। लेना-न-देना।

उसका मुँह खुला भी, पर उस पर बोला नहीं गया। उसके पूरे चेहरे पर रुकाव नज़र आ रहा था। दूसरी तरफ़ गर्दन घुमाकर वह बुदबुदाने लगा। चाची आकर उसके बहुत निकट खड़ी हो गई। साँस फूला होने की सरसराहट साफ़ सुनाई पड़ती रही। काफ़ी देर तक उसके साँस की आवाज़ और उसके सिर पर से गुज़र कर दीवार पर टँगी हुई चाची की परछाईं एक ही स्थिति में रहे।

चाची की परछाईं के एकाएक हिलने से उसे लगा चाची उससे दूर चली गई हैं। चाची ने अजीब नज़र से उसे देखा। गला खखारती हुई बोली, 'जाओ काफ़ी देर हो गई। कब तक इसी तरह बैठे रहोगे ?'

उसके चेहरे पर दयनीयता उतर आई। उसने नकियाते हुए पूछा, 'तो जाऊँ ? जाड़े में इस तरह बैठे रहने से तो यही अच्छा है अपने घर जाकर आराम करो।'

दूसरे कमरे में कोई बच्चा रोया 'अम्मा !' चाची ने उसकी ओर बड़ी नाराज़गी से देखा और उस कमरे में चली गई। उसे लगा—उसके कानों के पास एकाएक सन्नाटा घुघुआने लगा है। उसने पाँव उठाकर ज़ोर से रखा। एक आवाज़ बैठ गई। सन्नाटे का अनहोना-सा शोर उसके ऊपर हावी होता जा रहा था। अजीब-सी घबराहट चेहरे पर नज़र आने लगी। वह उठ खड़ा हुआ। खड़े हो जाने पर भी वह उस शशोपंज से मुक्त नहीं हो पाया—'अब क्या करे ?'

चाची बच्चे को डाँट रही थीं, 'अरे सोता है या नहीं ? मुझे और भी काम है।' उसकी इस डाँट से उसे राहत-सी मिली। वह फिर बैठ गया। उसकी नजर फिर चाची के पति की नेमप्लेट पर गई। इस बार उसने गर्दन घुमा ली और उसी कमरे के दरवाज़े की ओर ग़ौर से देखने लगा।

बच्चा शायद सोने लगा था। बच्चा और माँ दोनों चुप थे। उसका मन हुआ झाँककर देख ले। लेकिन वह उठा नहीं। वहीं बैठा-बैठा दरवाज़े की ओर देखता रहा। उसका उतावलापन बढ़ता जा रहा था। उसने बैठे-ही-बैठे आगे को झुककर देखा। पर्दे के पीछे टिकी रोशनी के अलावा उसे कुछ नजर नहीं आया। उसे ख़याल आया बच्चे को सुलाते-सुलाते कहीं चाची स्वयं न सो गई हों। वह एक के बाद एक दूसरा पाँव बदल-बदलकर घुटने पर चढ़ाने लगा। उसने चाहा वह चाची को हल्के से पुकार ले। लेकिन यह सोचकर चुप हो गया कहीं चाची कुछ कहने न लगे। ख़याल आते सोचा यह न सोचने लगें वह अभी तक मौजूद है।

उसने खँखारा और कुछ देर तक खँखार की प्रतिक्रिया होने की प्रतीक्षा करता रहा। उसे विश्वास हो गया वाक़ई चाची सो गई हैं। वह उठकर पर्दे तक गया। कुछ देर तक खड़ा सोचता रहा। हो सकता है चाची सोयी न हों। उसने पर्दे को हल्का-सा हटाकर देखा। चाची दीवार की तरफ़ मुँह किये अपनी साड़ी उठाये कुछ कर रही थी। चाची की इस क्रिया से उसे प्रसन्नता हुई। वह हिलता-डुलता अपनी जगह आ बैठा। उसने अपना मुँह दो-तीन बार इस तरह चलाया कि वह पान चबा रहा है। वह कुछ गुनगुना रहा था और गर्दन को अजीब तरह से मटका रहा था। कुछ देर बाद वह अपने-आप ही शांत होने लगा और उसकी नज़रें उसी दरवाज़े पर टिक गईं। वह फिर उठा और पर्दे के पीछे से झाँकने लगा। चाची बाक्स रूम से निकल रही थीं। वह झट से खाट की पट्टी पर आ बैठा और सीधा देखने लगा।

चाची के आने से पर्दा हटा तो रोशनी चट से कमरे में दाखिल हुई और पर्दा गिरते ही ग़ायब हो गई। वह सीधा बैठा रहा। उसका मन हुआ वह चाची की तरफ़ देखे। कपड़े बदलकर कैसी लग रही है। वह उसके दाएँ हाथ आकर खड़ी हो गई थीं। उसकी मद्धिम-सी परछाईं ने उसके पूरे शरीर को ढक लिया था। वह सोचने लगा रोशनी तेज़ और कम होने के साथ ही परछाईं भी गाढ़ी और हल्की होती है। उसे यह सोचना काफी फ़ैशनेबिल लगा।

चाची ने पूछा 'तुम अभी बैठे हो? मुनिया उठ जाती तो सारे महल्ले में गाती फिरती, रात हमारे घर शंकर भैया आये थे। तुम इतने बुद्धू हो, यह भी नहीं जानते किस वक्त क्या करना चाहिये।'

उसने बड़ी ढीली नज़रों से उसकी ओर देखा। वह कुछ समझ नहीं पा रहा था।

चाची ने पूछा 'तुम इसी तरह कब तक बैठे रहोगे? जाड़े का मौसम है। तुमसे तो कुछ दिन हुए ही मेरी जान-पहचान हुई है। तुम्हारे चाचा होते तो इतनी देर न बैठने देते। कहते, जाओ अपने घर।'

उसकी नज़र फ़ौरन नेम-प्लेट पर गई। उसे एकाएक लगा वे आ गये हैं। उसने झटके के साथ गर्दन घुमा ली। वह बैठा-ही-बैठा काफ़ी शिथिल हो गया और गर्दन लटकने-सी लगी।

चाची ने फिर कहा 'अच्छा तो जाओ।' उसने गर्दन उठाकर अजीब तरह से पूछा 'जाऊँ ऽऽ ?'

चाची झुँझलाकर बोली 'हाँ और क्या कागज़ लिखवाओगे ?'

उसकी आँखों में खिसियाहट उतर आई। उसने भी तेज़ आवाज़ में कहा 'तुमने तो आज बुलाया था।'

'तबीयत जो खराब है।'

'उस रोज़ भी तबीयत खराब थी'। कहकर वह निढाल-सा हो गया और लगा वह बहुत बोल गया है।

'हाँ, उस रोज़ भी थी और आज भी है। मैं तुम्हारे दबाव में नहीं जो तुम मुझसे ऐसी बातें कर रहे हो। मैंने तो दया करके मुँह लगा लिया था। वे कह गये थे गरीब लड़का है, कभी-कभी खिला-पिला दिया करो।' इस बार उसने नेम-प्लेट की तरफ़ नहीं देखा। गर्दन अकड़ाये बैठा रहा। सिर्फ कुछ फिसफिसाते हुए कहा 'इतनी दूर से आता हूँ।'

चाची को काफ़ी गुस्सा आ गया, 'मैंने तो सोचा था बेचारे की जवानी गल रही है···! अब सिर पर चढ़ने लगा। पचास-सौ रुपल्ली के आदमी से कौन शादी रचायेगी ! लात लगाएगी लात ! वह तो मैं थी, सोचा क्या बिगड़ता है, इस बेचारे की ज़िन्दगी भी कट जाएगी।'

उसे लगा उसके कपड़े फर-फर जलने लगे हैं। वह अपने दोनों बाजुओं को एक के बाद एक सहलाने लगा। बड़ी मुश्किल से उसके मुँह से निकला 'तो मैं आगे से न आया करूँ ?'

'हाँ ऽऽ तुम्हारे लिए तो परीज़ादियाँ बैठी रहती हैं न ! अरे शक्ल देखने को नहीं मिलेगी। वो तो उन्होंने नौकरी लगवा दी थी तो रोटी नसीब हो गई। मैंने भी सोचा चलो...।'

उसकी अक्ल कहाँ गायब हो गई उसे खुद पता नहीं था। शरीर

की गरमाई कमरे का वातावरण खींचे ले रहा था। धीरे-धीरे उसे शक होने लगा, उसके घुटनों में हरकत बाकी नहीं रही। उसने अपने पाँव को हलका-सा हिलाकर देखा। पलकों को भी दो-तीन बार झपका। उसे लगा चाची उसके और नजदीक आकर उसे कमरे से बाहर धकेल देगी। वह पीछे को खिसक गया और बोला 'अच्छा तो चलूँ ?'

चाची ने कुछ नहीं कहा। वह कमरे से बाहर आ गया और साइकिल हाथों पर उठा ली। चाची की साँसें उसके पीछे-पीछे गोल बाँधकर चली आ रही थीं। उन साँसों में उसे अजीब तरह की बदबू महसूस हुई। वह जल्दी से बाहर निकल आया और साइकिल ज़ोर से पटक दी। साइकिल की थरथराहट उसके शरीर में प्रवेश कर गई। वह कुछ देर तक उसी तरह खड़ा रहा, फिर अँधेरे में ही साइकिल पर सवार हो गया।

साइकिल चलाते हुए उसे महसूस हो रहा था चाची कपड़े उघाड़े उसी की ओर मुँह किये खड़ी है। चाची के पति की नेम-प्लेट खिसककर उसके अगले पहिये के सामने आ गई। वह उलटते-उलटते बचा। उसने ब्रेक लगा दिया। उसे मोहल्ले की कई लड़कियाँ धागों में बँधी गुब्बारों की तरह साइकिल के आगे-आगे उड़ती नज़र आ रही थीं। उसने फिर साइकिल तेज़ कर दी और उन्हें पकड़ना चाहा। वे और तेज़ी से उड़ने लगीं। चाची फिर आ गई। साइकिल के ब्रेक स्वयं लग गये। वह उतरकर सुस्ताने लगा।

अँधेरे का चुप्पापन उसके कानों के पास इकट्ठा होता जा रहा था। वह भयभीत-सा फिर साइकिल पर चढ़ गया और तेज़ी से दौड़ाने लगा। अपने कमरे के सामने पहुँचकर वह शशोपंज में पड़ गया, अन्दर जाकर वह क्या करेगा ? लेकिन एकाएक उसे लगा वह एक ठीक निर्णय पर पहुँच गया है। उसके लिए फाँसी लगाकर मर जाना ही ठीक होगा।

वह अन्दर गया। फाँसी के लिए सब कपड़े उतारकर फेंक दिये। लेकिन चाची फिर आ गई थी।

'सारिका'

वी० आई० पी०

वह मेरा दोस्त है। जब कभी झोंक में आता है तो कहता है 'कभी कोई जरूरत हो तो बताना, बाबूजी (चीफ़ मिनिस्टर) से कह दूंगा।'

मैंने मुख्य मन्त्रीजी को दो-चार बार नज़दीक से देखा है। वे कुछ नकियाते हैं और बात करते समय आँखों को छोटी-बड़ी करते रहते हैं। सिफ़ारिश करने की बात कहते समय मुझे महसूस होता है कि बात बाबूजी के ही मुँह से कही जा रही है। मेरे चेहरे पर हल्की-सी हँसी आ जाती है। वह बड़े रूखेपन से कहता है 'तुम लोग टुकड़खोर नौकर हो, अपनी हैसियत से ऊपर नहीं उठ सकते। कोई कितना भी बड़ा आदमी हो तुम सबको अपने से छोटा समझते हो।' कहकर वह मेरी ओर देखने लगता है। जब आश्वस्त हो जाता है कि मैं जवाब नहीं दूंगा तो ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगता है 'बाबूजी ठीक ही कहते हैं, इस मुल्क के

नौजवानों का ध्यान बड़े कामों की तरफ़ नहीं छोटी-छोटी नौकरी पाकर खुश हो जाते है।' फिर उसी तरह नकियाते हुए हिन्दुस्तान की आज़ादी का किस्सा बताने लगता है।

पहले वह गांधीजी से नेहरू तक नाम गिनाया करता था। अब उसने अपनी उस सूची से नेहरू का नाम काट दिया, पटेल तक ही आकर रुक जाता है। मैं जानकर पूछ लेता हूँ 'और नेहरूजी···?' वह बीच में मिनमिनाकर कहता है, 'नेहरूजीऽऽ—नेहरूजी का नाम मत लो। जाते-जाते मुल्क का सत्यानाश कर गए। बाबूजी से कहा था आपको कामराज-योजना में नहीं निकाला जाएगा। लेकिन पीठ पीछे से छुरा भोंक दिया···वो तो बाबूजी अपनी ताक़त के ज़ोर पर ऊपर आ गए।' वह काफ़ी देर तक नेहरूजी के खिलाफ़ बोलता रहता है। कुछ देर तक बोलते रहने के बाद वह फिर हिन्दुस्तान के इतिहास पर लौट आता है 'उन लोगों ने बड़े-बड़े पद और बड़ी-वड़ी हैसियतें छोड़ीं तब न आज़ादी मिली—ये लोग भी नौकरियाँ करने लगते तो हिन्दुस्तान गुलाम बना रहता। बाबूजी कहा करते हैं—आजकल के नौजवान नालायक औलाद की तरह हैं जो बाप-दादाओं की कमाई पर मौज उड़ा रहे हैं।' उसकी आँखें पहले छोटी पड़तीं फिर वह उन्हें फैला लेता। छोटी करते समय वे बिल्कुल बन्द हो जातीं।

कभी-कभी मन होता है कि मैं उसे छेड़ूँ जिससे वह और बके। लेकिन मैं कर नहीं पाता। डर लगता है कहीं नाराज़ न हो जाए। वह नेता आदमी! मुख्य मन्त्री के पास तक उसकी रसाई है।

लोग उसे भी बाबूजी कहने लगे हैं। दोस्त होने के कारण मैं उसे बाबूजी नहीं कह पाता। जब उसे बाबूजी कहा जाता है तो उसके दोनों हाथ फ़ौरन टोपी पर पहुँच जाते हैं और टोपी की बाढ़ सहलाने लगते हैं। सुना है बाबूजी की भी कुछ ऐसी ही आदत है। वे भी जब खाली होते हैं तो अपनी टोपी पर हाथ फेरा करते हैं। उनकी टोपी तराशी हुई पेंसिल की नोक की तरह खड़ी रहती है। लेकिन मेरे दोस्त को एक

ही टोपी कई-कई दिन पहननी पड़ती है। कभी-कभी घर पर धोनी भी पड़ जाती है। इसलिए उसकी टोपी वैसी नहीं रह पाती।

एक रोज़ डरते-डरते पूछा 'सुना है बाबूजी भी तुम्हारी ही तरह टोपी सहलाया करते हैं।' उसने मेरी ओर ग़ौर से देखा। मैं अपनी नज़रें इधर-उधर छिपाने का प्रयत्न करने लगा। बहुत कोशिश की कि चेहरे पर ऐसा भाव न आए जो उसे नाराज़ कर दे। जब वह आश्वस्त हो गया कि उस बात के पीछे मेरी कोई बदनीयती नहीं, तो वह कुरसी से पीठ टिकाकर बैठ गया और सफ़ाई देने लगा 'सब बड़े आदमियों की आदत होती है, उनके हाथ हर वक्त किसी-न-किसी काम में लगे रहते हैं। बाबूजी तो अपनी इस आदत का ठीक उपयोग करते हैं। इस तरह हाथ फेरने से टोपी का प्रेस भी बना रहता है।'

मैं हमेशा सोचता हूँ, उससे ज़्यादा पूछताछ न किया करूँ। लेकिन कई बार उसकी बात सुनकर रहा नहीं जाता। मैंने बड़े ठंडेपन के साथ पूछा 'कई बार ऐसा नहीं होता कि टोपी पर बार-बार हाथ फेरने से किनारे मलगजे हो जाएँ ?' इस बार वह नाराज़ हो गया और तेज़ आवाज़ में बोला 'इसीलिए तो कहता हूँ कि लातों के भूत बातों से नहीं मानते। तुम लोग सरकारी टुकड़ों से पलने वाले आदमी बड़े आदमियों की बातें क्या जानो...उनके हाथ एकदम साफ-सुथरे रहते हैं। ऐसे हाथों पर हज़ार-हज़ार साबुन की टिकियें क़ुरबान हैं। तुम दर्जी को ही देखो, बढ़िया-से-बढ़िया सूट तैयार करता है। कपड़ा काटता है, सीता है, बटन टाँकता है, लेकिन मजाल है कहीं निशान पड़ जाए ! दर्जी के साथ मुख्य मन्त्री की तुलना कुछ अजीब-सी लगी। लेकिन मैंने सोचा वह उनका अपना आदमी है, कुछ भी कह सकता है। इस बात की मेरे मन में एक और प्रतिक्रिया हुई—यह आदमी जब उनकी तुलना दर्जी से कर ही रहा है तो मैं भी हाँ-में-हाँ मिलाकर कह दूँ—यह बात तो सही है कि उनके हाथ में कफ़न भी साफ-सुथरे रहते हैं—लेकिन मैं यही सोचकर चुप हो गया कि इस बात को सुनकर वह ज़रूर मेरा गला दबा

देगा। मैं अपनी गर्दन पर हाथ फेरने लगा। उसने तुरन्त पूछा 'गर्दन में क्या हुआ, हाथ क्यों फेर रहे हो ?'

मुझे कहना पड़ा 'डर की वजह से।' वह जोर से हँस दिया और लापरवाही के साथ बोला 'बड़े आदमी के साथ ऐसा ही होता है। उसके नाम से ही लोग डरने लगते हैं। लेकिन तुम बेफ़िक्र रहो, चाहे वे मुख्य मन्त्री हों, लेकिन ऐसी टुच्ची बातों का ख़याल नहीं करते। छोटे ही लोग दिल में रखते हैं। मुझे कुछ ऐसा महसूस हुआ कि हँसी आए बिना नहीं रहेगी। लेकिन मैं चुप रहा। मेरे हंसने से यह गुमान भी हो सकता था कि उसके आश्वासन से मैं बेफ़िक्र हो गया हूँ और खुश हूँ।

कभी-कभी शाम को वह मेरे घर चला आता है। वह रिक्शा से कुछ इस अन्दाज़ के साथ उतरता है कि चपरासी ने उसकी कार का दरवाज़ा खोला हो। उसकी चाल में लापरवाही होती है और लगता है वह तेज़ी के साथ विधान सभा में घुस रहा है। उसकी टाँगों में एक अजब-सी लचक रहती है। उसे मैंने रिक्शा वाले को पैसे देते कभी नहीं देखा। शायद वह पहले से ही उसे पैसे दे देता है और रिक्शा रुकते ही उतरकर तेज़ी के साथ चल देता है।

कई बार जब वह आता है तो मैं कुर्ता-पाजामा पहने बैठा होता हूँ, उसे देखकर मैं खड़ा नहीं होता। वह अजीब तरह मेरी ओर देखता है और कहता है 'आप तो शहंशाह बने बैठे रहते हैं, लखनउवा कुर्ता डाटे ! तुम घर में भी अफ़सरी झाड़ते हो। नौकरीपेशा लोग काफ़ी शेखीखोर होते हैं...मिलती सौ-दो सौ रुपल्ली हैं और रहते हैं लाटसाहबों की तरह। जो जितना बड़ा आदमी होता है वह उतना ही सादा लिवास रहता है। गांधीजी जार्जपंचम से लंगोटी में मिले थे। बाबूजी को ही देखो घर पर जाँघिया-बनियान में रहते हैं। बड़े आदमी का बड़प्पन इसी में होता है।' मैं उसकी बात पर चुप लगा जाता हूँ और मातहत की तरह हाँ-में-हाँ मिला देता हूँ। लेकिन मुझे जवाहरलालजी का ख़याल आ जाता है। मैं उन्हीं का नाम ले देता हूँ, 'जवाहरलालजी तो टिप-टॉप

रहते थे ।'

वह नाराज़ हो जाता है और कहने लगता है, 'जवाहरलालजी की बात करते हो—वे बुढ़ापे में भी अपने को जवान और खूबसूरत समझते थे । पता नहीं सजने-संवरने का समय उन्हें कैसे मिल जाता था··· बाबूजी को खाने-पीने तक की फुरसत नहीं मिलती । खाते समय भी स्टेनो को इमला बोलते रहते हैं । मैं भी अपने घर का सब काम खाने के वक्त ही निबटाता हूँ ।' मैं उसकी बातें काफ़ी उदासीनता के साथ सुनता रहता हूँ ।

उस रोज़ बात करता-करता वह मेरे और नज़दीक खिसक आया और कहने लगा 'मैंने भी बाबूजी से कई अच्छी बातें सीखी हैं । वे हमेशा अपने पास रिवाल्वर रखते हैं । पता नहीं किस समय क्या ज़रूरत पड़ जाए !' उसने अपनी पीठ से एक लम्बा चाकू निकालकर दिखाया, 'मैं भी इस बात को पूरी तरह मानता हूँ; बात बड़े तजरबे की है ।'

मैंने धीमे से पूछा 'और अहिंसा···?' वह नाराज़ होकर कुरसी से खड़ा हो गया 'तुम लोग, अहिंसा की बात करते हो—दफ़्तर में बैठकर दिन-भर बेईमानियाँ करते हो । लोगों की गर्दनें रगेदते हो और अहिंसा-अहिंसा की रट लगाते हो । हम लोग जो देश का काम करते हैं उन्हें अहिंसा सिखाते हो । बाबूजी कहा करते हैं नौकरीपेशा आदमी कभी बड़ा नहीं हो सकता । इस कुरसी पर वही बैठ सकता है जो देश का काम करे । तुम लोग क्या जानो अहिंसा क्या होती है ।' उसके इस रूप को देखकर मुझे लगने लगा कि वह अभी मेरा वजूद मिटा देगा । उसकी इस गाली-गलौज को सुनकर मेरा मन हुआ उसकी नेतागिरी का पतलिसोच ठण्डा कर दूं । लेकिन मुझे लगा कहीं-न-कहीं मैं इससे दबता हूँ । थोड़ी देर रुककर वह बोला 'मैं सोचता हूँ एक रोज़ तुम्हें बाबूजी से मिलाने ले चलूं । तुम अपने-आप देखो बाबूजी किस तरह के आदमी हैं । कितने अलगाव से काम करते हैं । उनके कमरे में सिर्फ एक चटाई बिछी रहती है । मेरा कमरा तो तुमने देखा ही है । ठीक उसी तरह उनका

कमरा भी है, न कोई सोफा है न कुरसी ! वैसे उनके सरकारी ड्राइंगरूम में हर चीज़ मौजूद है लेकिन उससे क्या ? यों तो मैंने भी सब कुर्सियाँ कमरे से निकालकर बाहर रखवा दी हैं ।'

मैं उसके घर कई बार गया हूँ। वाकई उसके कमरे में चटाई के सिवाय कुछ नहीं बिछा होता । जब मैं उसके घर जाता हूँ तो मुझे उस चटाई पर बैठने में दिक्कत होती है । चटाई के साबित हिस्से पर वह खुद बैठ जाता है। कई बार मन होता है उससे पूछूँ, बाबूजी के ड्राइंगरूम में भी ऐसी ही चटाई बिछी है ? लेकिन यही सोचकर नहीं पूछता कि वैसे ही वह मेरी ब्रॉड किए रहता है ।

कई बार बात करते-करते उसका रुख बदल जाता है और लगने लगता है कि वह एकाएक व्यस्त हो गया। घर का भी कोई आदमी किसी काम के लिए आता है तो वह उसे डाँट देता है, 'मुझे सिर्फ यही काम रह गया। फौरन ही मुझे चीफ़ मिनिस्टर के यहाँ जाना है, वे मेरा इन्तज़ार कर रहे होंगे। मुश्किल तो यह है कि मेरे बिना वे हिलते तक नहीं । यहाँ है कि सवेरे से आदमियों का ताँता लगा रहता है— 'बहिनजी' से कहा करो ।' पहले मैं सोचने लगता था, इतनी देर से मैं ही बैठा हूँ, कहीं यह मुझे ही तो नहीं कह रहा। फिर सोचता था, मुझे क्यों कहेगा, मैं तो इसका दोस्त हूँ। शुरू-शुरू में एक और बात मेरा ध्यान आकर्षित करती थी—'ये बहिनजी कौन हैं ?' जब से मुझे पता चला कि वह अपनी पत्नी को ही बहिनजी कहता है तो मैं बड़ी मुश्किल से अपनी गुदगुदाहट रोक पाया । हालाँकि मैं सुन चुका हूँ मुख्य मन्त्री भी अपनी पत्नी को बहिनजी कहा करते थे । अब वे नहीं रहीं । कभी-कभी वे मज़ाक में भी कह दिया करते थे 'हम लोग तो वाणप्रस्थी हैं, बहिनजी कहें या माताजी क्या फर्क पड़ता है !'

दरअसल बाबूजी काफ़ी पुरमज़ाक हैं । कभी-कभी वे व्यक्तिगत बातों पर ही करारा मज़ाक कर बैठते हैं । वह उनके इस गुण से बहुत प्रभावित है। अक्सर ज़िक्र किया करता है। जब वह बाबूजी और

महिलाओं के आपसी सम्बन्धों की चर्चा करता है तो शरमाने लगता है फिर बाद में उत्तेजित हो जाता है। अक्सर वह एक ही घटना सुनाता है, 'कोई सदस्या हैं। वे अपनी जवानी में काफ़ी सुन्दर रही होंगी। बाबूजी के मुख्य मन्त्री होने पर वह उनके पास किसी काम से पहुँचीं और कहा 'हम तो आपकी शरण आये हैं···!' बाबूजी हल्का-सा मुस्कराकर बोले 'अबऽऽ···?'

वह भी इस तरह की बातें करने में काफ़ी निपुण है। एक रोज़ अचानक घर पर आ गया। पत्नी पास ही बैठी थीं। पत्नी ने हँसकर कहा 'वाह भाई साहब, हम तो आपके ही घर जाने वाले थे।' वह भी हल्का-सा मुस्कराया और ज़ोर से बोला 'अबऽऽ?···' कहने के बाद वह काफ़ी देर तक हू-हू करके हँसता रहा। पत्नी इतना बारीक मज़ाक नहीं समझ सकीं। उन्होंने सीधाई के साथ कहा, 'नहीं, अभी तो नहीं, शाम-वाम को सोच रहे थे।' उसका चेहरा हँसी की वजह से गुब्बारा हो गया और बोला 'रात को ही आइये न···।' मैंने कुछ अजब तरह से उसकी तरफ़ देखा। मुझे लगा मैं नाराज़ हो जाऊँगा। लेकिन मित्र काफी प्रसन्न था और हँसे जा रहा था। मेरी पत्नी शायद समझी नहीं थीं। वह असमंजस के साथ हम दोनों को देखती रहीं। मैंने उन्हें अन्दर चले जाने के लिए कहा। मैं जानता था यदि बात उनकी समझ में आ गई तो मित्रवर चक्कर में पड़ जाएँगे। इस मामले में वह काफ़ी सख्त हैं।

पत्नी के अन्दर चले जाने पर मैंने बात को घुमाकर कहा 'कभी-कभी इस तरह के मज़ाकों से महिलाएँ नाराज़ हो जाती हैं। वे लोग इतनी कल्चर्ड तो होती नहीं···।' वह काफ़ी नाराज़ हो गया और ज़ोर-जोर से बोलने लगा 'दुनिया में तुम्हारी ही बीवी है—अगर वह इतनी बात का बुरा मान सकती है तो मैं कहूँगा सोसाइटी में मूव करना नहीं जानती···बाबूजी के यहाँ बड़े-बड़े सेक्रेटरीज़ की पत्नियाँ कॉल करने आती हैं। बाबूजी की आदत है बिना मज़ाक किए नहीं रहते। लेकिन मजाल है कोई बुरा मान जाए। 'तुम दरमियाने दर्जे के कॉम्पलेक्स

आदमी हो ।' उसने रुककर साँस ली, फिर पत्नी की बात पर आ गया, 'हमारी श्रीमतीजी से ही बाबूजी कह देते हैं बहिनजी, आपके श्रीमानजी तो बाबूजी हैं ही, हमें भी लोग बाबूजी कह देते हैं। फिर भी आप हम दोनों को एक नज़र से नहीं देखतीं। वे भी क्या इस बात से बुरा मान जाएँ। इतना बड़ा आदमी मज़ाक करता है तो उसका कोई और मतलब नहीं होता।' बात कह लेने के बाद भी उसके हाव-भाव फ्लश-लाइट की तरह बदलते रहते हैं।

वह मेरे चेहरे की तरफ देखकर मुस्कराया तो मुझे लगा शायद मेरे चेहरे पर हार का भाव आ गया है।

मेरी पत्नी बाहर गई हुई हैं यह उसे पता चल गया। उसने शाम को भोजन करने का निमन्त्रण दिया तो मैंने काफ़ी आनाकानी की। अब तो वह व्यस्त रहने लगा पहले कई बार उसके घर भोजन कर चुका। टालने के लिए मैंने इतना ही कहा 'किस तकल्लुफ में फँस रहे हो!' वह नाराज़ होकर कहने लगा 'तुम नौकरीपेशा लोग अपने को लाटसाहब समझते हो। हमेशा यही सोचते हो किसी के घर खा लेंगे तो पता नहीं वह क्या फ़ायदा उठा लेगा। बाबूजी इतने बड़े आदमी हैं, जब भी उनसे खाने के लिए कहा जाता है कभी हील-हुज्जत नहीं करते बल्कि अपने-आप ही कहते हैं, भई आज तो 'बहिनजी' के हाथ का खाना खाने को मन कर रहा है। हमसे भी कोई कहे तो सर-आँखों पर जब तक आदमी ऐसा-वैसा न हो!' उसकी इस नाराज़गी के सामने मुझे झुकना पड़ा। उसकी दोस्ती पर गर्व भी हुआ कि वह अब भी मुझे इतना मानता है।

हल्की-हल्की बारिश हो रही थी। मैंने सोचा टहलते हुए ही मित्र के घर पहुँचा जाए। बारिश का मज़ा लेते रहने के बावजूद मन में अजीब-सी खलबली मची रही, पता नहीं वह किस बात पर नाराज़ हो जाए। लेकिन मित्र के स्नेह से मैं गद्गद था।

उसके घर पहुँचा तो जाँघिये में ही था। वह अपनी चटाई से उठा नहीं। टाँग-पर-टाँग चढ़ाए लेटा रहा। मैं उसकी टाँगों की तरफ़ खड़ा

नहीं रह सका । न तो उसकी तरफ़ देखते ही बन रहा था न मुँह मोड़ते । वह मेरी ओर देखकर मुस्करा दिया और बड़प्पन के साथ पूछा 'कहिए!'

उसका 'कहिए' कहना मेरे लिए एकदम अपरिचित था । पहली ही बार उसने इस तरह का व्यवहार किया था । मुझे लगा कहीं वह यह न पूछ ले, 'कैसे आए ?' बाहर की तरफ़ पड़ी कुरसी पर बैठने का इशारा करके वह अन्दर चला गया । कुछ देर बाद मुस्कराता हुआ आया तो उसके चेहरे पर हाथ जोड़ने वाला भाव था । उसने जाँघिये पर ही कुरता पहन लिया था । मेरे सामने उसने यह औपचारिकता पहली बार निबाही थी । वह आकर बड़ी शाइस्तगी से बैठ गया । मैं उसके चेहरे पर टिकी महानता और अधनंगेपन के बीच सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाया । उसने बहुत धीमे-धीमे कहा 'बहिनजी' अभी आती हैं । खाना तैयार हो रहा है ।' नम्रता-भरी मुस्कराहट उसके चेहरे पर चिपक गई । उसका यह व्यवहार मेरे लिए आशा के विपरीत था । मेरे लिए वहाँ का पूरा वातारण काफ़ी अजनबी होता जा रहा था । मैंने उससे पूछा, 'तुम आज बाबूजी के यहाँ नहीं गये ?' उसने आँखें गोल करके मेरी तरफ देखा, फिर बताया 'दोपहर का खाना बाबूजी के ही साथ था ।' उसके चेहरे की मुस्कान काफ़ी चौड़ी हो गई । मेरा मन बात को आगे बढ़ाए बिना नहीं माना । बात को दूसरी तरह से कहा, 'इन लोगों के यहाँ इतनी खातिर कहाँ होती होगी; जितनी छोटे लोगों के यहाँ होती है !'

उसका चेहरा बदल गया और वह ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगा, 'कभी किसी बड़े आदमी के यहाँ खाना खाया है जो मुँह में आया कह दिया ! तुम ही कौन लोगों को छत्तीस तरह के भोजन कराते हो ! इतने बड़े आदमी होते हुए भी वे इतनी नम्रता और आदर से भोजन कराते हैं कि कोई क्या कराएगा । हालाँकि मैं दफ़्तर से ही उनके साथ चला गया था । महाराज रसोई उठा चुका था, लेकिन उसे बनाना पड़ा । बाबूजी को खाना खाकर लेट जाने की आदत है । लेकिन जब तक मैंने खाना नहीं खाया वे इन्तज़ार करते रहे—तुम लोग क्या करोगे किसी को खाना

खिलाकर उस पर अहसान करते हो। बताओ हमारे ही यहाँ तुम्हारी खातिर में कौन-सी कमी रह गई!'

वह अपने असल रूप में था। खाना-पीना छोड़कर मेरे छोटेपन को उभारने में लगा था। मुझे भी अपनी ग़लती का अहसास हो रहा था। मैं अपने मित्र के घर भोजन करने आया था, उसे नाराज़ करने नहीं।

बारिश तेज़ होती जा रही थी। खाने-वाने का अभी कहीं पता नहीं था। मन-ही-मन मैं चिन्तित था घर कैसे पहुँचा जाएगा। दो-तीन बार सोचा खाना मँगाने के लिए कहूँ लेकिन हिम्मत नहीं पड़ी। वह मुझे सीख देने में इतना व्यस्त था, उसे यह ध्यान नहीं रहा था कि वह चटाई पर बड़ी बेपर्दगी से लेट गया है और उसकी महानता वाली मुद्रा बिरा गई है। मुझे अजब तरह की असुविधा होने लगी। वह मुझे समझा रहा था, अगर दुनिया में कुछ करना है तो इस नंगेपन से उठो। चीज़ों को ठीक तरह समझा करो। मुझे समझाते-समझाते वह मुख्यमन्त्री की बात करने लगा 'तुम उनके बारे में कुछ नहीं जानते। ऐसे लोग धरती पर कभी-कभी आते हैं।' उसकी इस बात पर अख़बार में छपा एक समाचार याद आ गया। विरोधी दल के किसी सदस्य ने मुख्यमन्त्री पर चारित्रिक आरोप लगाया था। बिना सोचे-समझे मैंने उसी से पूछ लिया, 'तुमने आज का अखबार पढ़ा? किसी सदस्य ने बाबूजी के चरित्र पर आरोप लगाया है।' इतना कहने के साथ ही मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ। उसी क्षण मैं यह भी सोच गया अब बिना खाए-पिए ही इस बारिश में घर तक पैदल यात्रा करनी पड़ेगी। साँस रोककर मैं उसकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करने लगा।

यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उसका चेहरा भावहीन हो गया है। कुछ देर तक हम दोनों खामोश बैठे रहे। फिर वह एकाएक चिल्लाया, 'अरे भाई दस बजने को आ गए, खाने का कहीं पता नहीं—न खिलाना हो तो वैसे बताओ।'

अन्दर से नाराज़गी-भरा उत्तर आया 'छप्पन प्रकार का तो भोजन

बनाने के लिए कह दिया—बाबूजी के यहाँ क्या खाना खाने गए वही दिमाग में चढ़ा हुआ है ! वैसा खाना चुटकी बजाते ही नहीं बनता। अकेली ही तो करने वाली हूँ। कौन बैरे लगा रखे हैं !'

वह तेज़ी के साथ उठा और अन्दर चला गया। अन्दर जाकर वह 'बहिनजी' पर बिगड़ता रहा। बहिनजी (उसकी पत्नी) भी काफ़ी नाराज़ थीं। बाद में यही तय हुआ जो कुछ बना है वही खिला दिया जाए। अन्दर से लौटकर उसने ढाई शब्द कहे—'अभी लगता है।' और फिर उसी तरह टाँग उँडेलकर लेट गया। मुझे उसकी टाँगों की तरफ़ से उठकर दूसरी तरफ़ बैठना पड़ा। वह चुप था। अन्दर से बर्तन खड़कने और बच्चों के शोर की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी।

मैं बराबर सोच रहा था बात कैसे शुरू की जाए। लेकिन कोई ऐसी बात समझ नहीं आ रही थी जिससे वह खुश हो सके। मुख्यमन्त्री की बातों से ही वह खुश हो सकता था। लेकिन उनके बारे में जो बातें मेरे दिमाग़ में आ रही थीं वे उसे नाराज़ ही कर सकती थीं। मैंने एक बहुत ही निरामिष-सी बात पूछी 'बाबूजी कहीं बाहर तो नहीं जा रहे ?' उसने उत्तर में यही कहा 'क्यों ?' दो-चार क्षण मैं जवाब नहीं सोच पाया। फिर बोला 'सोचता था कि एक दिन तुम्हारे साथ चलकर उनके दर्शन कर लूं। पता नहीं बाद में उनके दर्शन का अवसर मिले या न मिले।' उसने खीज-भरी दृष्टि से मुझे देखा। फिर दूसरी ओर नज़र घुमाकर कहा, 'चलनाऽऽ।'

उसके 'चलना' कहकर चुप हो जाने से मैं चिन्तित हो गया। मुझे लगा कि वह बहुत ज़्यादा नाराज़ हो गया है। फिर हम लोग काफ़ी देर तक ख़ामोश रहे। उसने एकाएक पूछा 'बाबूजी के बारे में तुम क्या सोचते हो ?' लेकिन उसकी बात बीच ही में रह गई। 'बहिनजी' नई-नकोर साड़ी पहने दोनों हाथों में थालियाँ पकड़े आ गईं। पीछे-पीछे एक छोटा बच्चा दोनों हाथों में पानी के गिलास पकड़े, बिखेरता चला आ रहा था। मुझे कुछ सकून मिला।

थालियाँ रखे जाने पर उसने फिर पूछा 'तुमने बताया नहीं !' इस बार आवाज़ तेज़ थी। मैं चुप रहा। बहिनजी ने नाराज़गी के साथ कहा 'हर समय बाबूजी···बाबूजी ! वे भी कभी तुम्हारा नाम लेते हैं !'

उसने सख्ती के साथ कहा 'ज्यादा बकर-बकर मत करो, जाओ अपना काम देखो।' वे बड़बड़ाती हुई अन्दर चली गईं।

उसने फिर बात शुरू की, 'तुमने बाबूजी के चरित्र के बारे में कहा है, तुम अपने को क्या समझते हो ?' जब उसने इस रुख से बात की तो मुझे कहीं-न-कहीं प्रसन्नता ही हुई। वह कहता रहा 'यह तो सोचना चाहिए कि किस आदमी के बारे में क्या कहना है और क्या नहीं कहना। जिसने तीस साल की उम्र से अपनी पत्नी के साथ उस तरह का कोई सम्बन्ध नहीं रखा और देश-सेवा में ही लगा रहा वह चरित्र-हीन हो सकता है ! ऐसे आदमी से कुछ सीखने के बजाय उसे चरित्र-हीन कहते हो। जब से बाबूजी के मुँह से यह सुना है मैंने भी प्रण कर लिया···' उसकी आँखें भक्ति-भाव से झुक गईं। फिर कहा 'तुम लोग दिन-रात उसी में धँसे रहते हो···औरों को नाम रखते हो।'

उसके चेहरे पर तनाव था। थालियाँ वैसी-की-वैसी रखी थीं। बहिनजी ही ने आकर कहा, 'इसी तरह बैठे रहोगे या खाना भी शुरू करोगे ? उस समय तो मेरे हाथ-पाँव फुलाए दे रहे थे।' उसने उनकी बात की ओर ध्यान न देकर अपनी बात जारी रखी 'तुम जैसे लोग अपने-आप तो नरक में डूबे रहते हो, दूसरों पर कीचड़ उछालते हो।' उसकी आवाज़ काफ़ी बुलन्द हो गई थी। 'बहिनजी' को कहना पड़ा, बस रहने दो। सब एक-से ही हैं। चुपचाप खाना खाओ।'

वह तैश में आ गया और बोला 'बहिनजी से पूछो, मैं कब से उसके पास नहीं लेटा। उसे सबसे बड़ी शिकायत यही है।' मैंने गर्दन झुकाये हुए ही बहिनजी से कहा 'ज़रा-सी मिर्च चाहिए।' वे मिर्च लेने चली गईं। उसने कहना जारी रखा 'नहीं तो तुम्हारी ही तरह मेरे भी चार-छः हो गए होते।'

मैं चुप था।

मित्र होने की वजह से जानता हूँ वह किसी बात के लिए ज़िद नहीं करता। उसका ख़याल है पढ़े-लिखे लोगों को गँवारों की तरह ज़िद नहीं करनी चाहिए। दूसरे व्यक्ति को असुविधा होती है। एक-दो बार जब उसने मेरे यहाँ खाना खाया, उस समय भी मैंने यही देखा कि खाने के लिए ज़्यादा कहने पर वह नाराज़ हो जाता है और कहता है 'यह तरीका बहुत गलत है। मैंने बड़े-बड़े लोगों को देखा है, कभी ज़िद नहीं करते। इससे दूसरे आदमी को परेशानी होती है।'

मैं जानता था वह उस बारिश में मुझे चला जाने देगा। खाना खाने के बाद जब मैंने जाने के लिए कहा तो कुछ देर चुप रहकर धीमे से बोला 'यहीं सो जाओ।' मैंने डरते-डरते कहा 'नहीं जाऊँगा। घर खाली है।' वह चुप हो गया। उस बारिश में रात के बारह बजे जाना मैं सोच नहीं पाया। लेकिन उसकी पत्नी ने मेरी रक्षा की 'नहीं, इस रात में आप कहाँ जायेंगे? घर से बाहर थोड़े ही बैठे हैं। आजकल वहाँ भी कोई नहीं जो इन्तज़ार करेगा। मैं अभी बिस्तर लगाये देती हूँ, आप यहीं सो जाएँ।' मैंने बहुत दबी ज़बान से कहा 'नहीं, चला जाऊँगा।'

'नहीं जी, चले कैसे जाएँगे!' वे कहती हुई अन्दर चली गईं। वह चुप था। थोड़ी देर बाद बोला 'अच्छा मैं चलूं। तुम्हारा बिस्तर अभी लग जाता है।' और वह उठकर गरिमामय चाल से अन्दर चला गया। मुझे लगा वह अपने दफ़्तर से उठकर आराम करने गया है। थोड़ी देर बाद उसकी पत्नी एक खाट लेकर आईं और उस पर दरी-चादर-तकिया बिछा दिया। बिछाते समय वे कहती रहीं 'आजकल धोबी इतना परेशान करते हैं—समय पर कपड़े नहीं देते, बरसात में कैसे गुज़ारा चले!' बिस्तर बिछाकर जाने लगीं तो पूछा 'पानी रख दूं?'

हालाँकि मुझे रात में पानी पीने की आदत नहीं लेकिन मैंने पानी रख देने के लिए कह दिया। वे पानी का लोटा और एक कटोरी रख

गईं। कमरे की बत्ती बुझ जाने के कारण बारिश की आवाज़ मेरे कानों के और पास आ गई। बराबर के कमरे में उजाला था। इसलिए अभी कुछ दूरी शेष थी। मैंने एक कटोरी पानी पिया और लेट गया। मुझे गर्व का अनुभव हो रहा था; एक व्यक्ति ऐसा तो है जो मुख्यमन्त्री के इतना निकट है और अपना दोस्त है।

एकाएक उसके हँसने की आवाज़ आई। उसका हँसना मुझे अच्छा लगा, क्योंकि उसके हँसने में वह बात नहीं थी। वह बड़े टुच्चेपन से हँस रहा था। उसकी पत्नी ने कहा भी 'भाई साहब सो रहे हैं ?'

'अरे सोने भी दो तुम तो नहीं सो रहीं ?'

मुझे लगा बारिश कुछ धीमी हो गई। मेरा मन हुआ उठकर देखूँ, पर लेटा ही रहा। वह काफ़ी मज़े में था। उसने अपनी पत्नी से तेज़ आवाज़ में कहा 'अरे तुम क्या बात करती हो बाबूजी भी ऐसा ही करते थे। साल-छः महीने में कोई फ़र्क नहीं पड़ता।' मुझे बीच की बातचीत सुनाई नहीं दी। लेकिन वह फिर बोला, 'तुम क्या जानो, बड़े लोगों का क्या तरीक़ा है ! मुझे उनके खास नौकर ने बताया है···' कहकर शायद वह हँस दिया। उसके हँसने की आवाज़ काफ़ी देर तक बनी रही।

मैंने सोचा बारिश कम हो गई। अब जाया जा सकता है। उस कमरे की बत्ती भी बन्द हो गई और बारिश गिरने की आवाज़ बहुत ही निकट आ गई। मैंने चादर ओढ़ ली।

बत्ती एक बार और जली। मैंने अपने मित्र के बारे में सोचना चाहा। बत्ती फिर बुझ गई।

—'नई कहानियाँ' विशेशांक, नवम्बर १९६७

चेहरे

अनुभवों के बारे में एक फ़ैसले पर पहुँचा हूँ। वे ही बातें अनुभव होती हैं जो कभी-कभी और नये-नये पहलुओं से हो जाती हैं। अच्छा मूड भी एक अनुभव ही है। जब कभी मूड अच्छा होता है तो यही सोच-सोचकर खुश हुआ करता हूँ, मैं भी एक अनुभव से गुज़र रहा हूँ। कभी-कभी बढ़िया, समतल और निश्चिन्त रास्तों से घूमते हुए निकलना नियामत लगती है।

उस दिन भी मूड का अच्छा होना काफ़ी अनायास था। मैं सोचता हूँ होना नहीं चाहिए था। कोई भी ऐसा कारण नहीं था जिस वजह से मूड अच्छा हो सकता। न कोई तनख्वाह में बढ़ोतरी हुई थी और न साहब ने ही अपनी आदत के बर-ख़िलाफ़ घोड़ों को टिटकारने की तरह शाबाशी दी थी। वही मनहूस

सूरत ! ऐसा भी नहीं कोई खूबसूरत लड़की ही नज़र आ गई हो। मेरा तो पक्का ख़याल होता जा रहा है इस मुल्क में होती ही नहीं। हालाँकि बुज़ुर्गों की राय इसके ख़िलाफ़ है।

हस्बमामूल जूतों के फ़ीते बाँधने के बाद मैंने अपने चेहरे पर दोनों हाथ फेरे। मूड में जब कोई रद्दोबदल मालूम होती है तो मैं यही करता हूँ। घर वाले नाराज़ भी होते हैं। लेकिन मैं अच्छे मूड का इतना कायल हूँ, न भली-बुरी बात का ख़याल रखता हूँ और न किसी की खुशी-नाराज़ी का। जूते बाँधने के बाद चेहरे पर हाथ फेर लेने से मुझे लगता है वह भी चमकने लगा। वैसे तो चेहरे बुझे रहते हैं इसीलिए कभी-कभी की चमक का एसोसियेशन जूते से हो जाना स्वाभाविक है। चमकने का अहसास ही मुझे तरोताज़ा कर देता है। कई बार रास्ते में बुवासीरी-मुँह वाले लोग मिलते हैं और न जाने उन्हें क्या लगता है मेरे मूड को तोड़ने की कोशिश करने लगते हैं। आप काफ़ी कमज़ोर हो गये, बीमार तो नहीं ? मेरा मन होता है उनसे साफ़-साफ़ कह दूँ आप ही बीमार हैं। स्वस्थ होते ही कितने लोग हैं ? ऐसे आदमियों से मैं कन्नी काट जाता हूँ। मिल भी जायें तो यही कहता हुआ तेज़ी से निकल जाता हूँ। ज़रा जल्दी में हूँ।' वे क्षण-भर खड़े होकर मुझे जाते हुए देखते रहते हैं फिर इस अन्दाज़ से गर्दन घुमाकर चल देते हैं—'बच निकला साला !'

मैंने साइकिल बाहर निकाली दाहिने, हाथ से बायाँ हैण्डिल पकड़कर ऊपर से नीचे तक परखा। पैदल चलने वाले लोगों की तरफ देखकर राहत महसूस की। अँगूठे और अँगुली से टायर दबाकर देखा। फूँक मार कर दोनों हाथों को साफ़ किया फिर पतलून से रगड़ लिये। एक नज़र चारों तरफ़ डालकर महसूस करना चाहा पूरे शहर को धो-पोंछकर ताज़ा कर दिया गया है। धूप एक बारीक जाली की तरह ढकी नज़र आई। सड़क के गड्ढों की तरफ़ से मैंने निगाह फेर ली और मकानों की चोटियाँ देखने लगा। उन मकानों के बारे में मैंने अनायास सोचा ये सब मिल्क पॉट्स जाली से ढके रखे हैं।

क्षण-भर मैं इस पोज़ में खड़ा रहा, कार का दरवाज़ा खुलते ही बैठ जाऊँगा। एक पाँव उठाकर गद्दी पर सवार होते समय एक नज़र चारों ओर देखा। मैं अकेला ही उस समय साइकिल पर सवार हो रहा था। इस बात ने मुझे और अधिक उत्साहित कर दिया। झटके से साइकिल आगे बढ़ी और एक अहसास ने मुझे घेर लिया कि सब लोगों से मैं भिन्न हूँ। सामने के घर में पर्ती बाबू खड़े थे। रोज़ मैं उन्हें नमस्ते करता था। उनकी कार हमेशा सड़क पर खड़ी रहती थी, आज नहीं थी। इस बात ने मुझे खुश कर दिया। सड़क के गड्ढों की तरह उनसे भी बचकर निकल गया। मेरे दिमाग़ में उस समय अपने को सब लोगों से भिन्न समझने का फ़ितूर सवार था। मूड की अच्छाई में एक यही टुच्चापन रहता है।

उस समय मैं साइकिल पर चढ़कर चलने के रोज़ वाले अहसास से मुक्त था। उस अहसास के बने रहने का कारण पीछे से आकर पीऽऽ कर देने वाली मोटरें या स्कूटर होते थे। कई बार किचकिची आती थी अपनी साइकिल मोटरों और स्कूटरों से टकरा दी जाए। इस किचकिची के साथ मैं यही सोचना चाहता था कि ऐसा करने से उन्ही लोगों का नुकसान होगा और चोटे आयेंगी। यह सोचना मुझे सुख देता था। हालाँकि सुख का कोई समीकरण नहीं होता। उन लोगों के आगे निकलते ही मुझे पैदलपन का अहसास घेर लेता था। मैं उस अहसास को नकराने की हर मुमकिन कोशिश करता था। लेकिन इस अहसास के साथ-साथ एक ख़ालीपन भी मेरे अन्दर गुब्बारे की तरह फूलने लगता था। मैं उसे एक तरफ़ से दबाता था तो दूसरी तरफ़ निकल आता था। उसका इस तरह होना मेरे अन्दर गिलगिलापन और गंदगी भर देता था। स्लम की-सी भावना गहरी होने लगती थी। उस भावना से मुक्त होने के लिए अपने ही अन्दर एक लड़ाई शुरू कर देनी पड़ती थी। कई बार मैं मखौल बनाता था और कई बार बन जाता था। मज़ाक बनते समय महसूस करता था कि मुझे कुछ कर गुज़रना

चाहिए। अगर किसी और का नहीं तो अपना ही मुँह नोच लेना चाहिए हालाँकि ये सब बातें होने के लिए नहीं होतीं। सोचना सिर्फ मजबूरी होती है।

वह सब कुछ आज नहीं था। अन्दर किसी तरह की लड़ाई नहीं थी। बाहर करना चाहता था। साइकिल हल्की चल रही थी। थोड़ी-थोड़ी देर पर धूप नये-नये डिज़ाइनों में आकर मुझे ढँक लेती थी। मेरी परछाईं बाजुओं पर लम्बी होती जाती थी। परछाईं की तरफ़ एक ठंडापन महसूस होने लगता था। कई बार अपनी परछाईं से पैदल चलने वालों को ढँक भी लेता था।

मैं देख रहा था सड़क पर चलने वाले लोग कहीं और किसी खूँटे से बँधे हैं। वे वहीं व्यस्त थे। एक बुदबुदाते आदमी को सड़क पर जाते देखकर मुझे लगा मैं उसके काफ़ी नज़दीक से गुज़रता हुआ कान पर चुटकी बजा सकता हूँ। ताज़ी धूप और साफ़-सुथरी सड़क पर चलती हुई औरतों को देखकर मुझे ख़ासी प्रसन्नता हो रही थी। वे इस समय खुली गाय की तरह थीं। उनके चेहरों से लगता था वे दुधारू हैं। बचपन गें बकरियों के साथ ज़रूर ऐसा करते थे, इधर-उधर घूमती बकरियों को बाँधकर दुह लेते थे। बाद में मालिक शोर मचाता घूमता था। हम घरों में दुबक जाते थे। वही बचपन दूसरी तरह से सामने आ रहा था। औरत में मुझे ख़ासी दिलचस्पी महसूस हो रही थी। मैं यह नहीं सोचना चाहता था कि उनका अच्छा लगना मुझे कुछ नहीं दे सकता।

एक-दो बार मैंने तेज़ी के साथ जाकर पैदल चलते लोगों के पीछे घंटी भी घनघना दी। उन्होंने मुड़कर देखा और हट गये। मैंने मुस्करा कर यही सोचा पैदलों के पास सिवाय रास्ते से हट जाने के और क्या है। सड़क लोगों से भरी-भरी थी। लोग घरों से निकलकर केवल आ-जा रहे थे। सड़कों पर दूर तक नज़र फेंकने पर साफ़ लगता था सब लोग एक ज्यामितीय रेखा बनाये हुए हैं। वे लोग चाहे जैसे भी चलें रेखा टूटती ही नहीं। वे लोग बीच-बीच में बातें कर रहे थे, रुक रहे थे।

खरीद-फरोख्त कर रहे थे। बच्चों को आवाज़ दे रहे थे। प्यार कर रहे थे। कुत्ते-कुतियों की तरह झुके हुए थे। डाँट-डपट कर रहे थे या डपटे जा रहे थे। टकरा-टकराकर एक्सीडेंट कर रहे थे। हँस रहे थे। रो रहे थे। ये सब उनके चेहरे से ही लगता था। वैसे ख़ामोशी थी। मुझे खुद ही अपने हँसने, बतियाने, गाने और चलने की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी।

कुछ होना चाहिये। यह भावना काफ़ी ज़ोर पकड़ने लगी। मैंने सोचा सभी यही चाहते हैं। कुछ न करने का यही रास्ता है। लेकिन मैं चाहता था ये लोग एक साथ चिल्लाने लगें। इनकी ज्यामितीय रेखाएँ टूट जाएँ और स्थितियाँ बदल जाएँ। मेरा मन हुआ अकेला ही निरर्थक बातें चिल्लाऊँ, 'तुम्हारे बच्चे मर गये, बीवियाँ फिर गाभिन हो गईं। प्रधानमन्त्री तोता बनकर उड़ गईं। मुख्यमन्त्री ग्वाले का काम करने लगा।' मैं डर गया। मुझे लगा ये सब लोग घूमकर पत्थर चलाने लगेंगे। हालाँकि पत्थर चलाने का भाव ही उनके चेहरे पर होगा। यह भाव भी मुझे काफी चुटीला लगेगा।

मैंने साइकिल से उतर जाना चाहा। पैदलों की पंक्ति में आना मुझे स्वीकार नहीं हुआ। उनकी परछाइयाँ धूप के बावजूद छोटी थीं। मैं कम-से-कम अपनी परछाईं को बड़ी और लम्बी रखना चाहता था।

चारों तरफ़ देखा। साइकिलों पर चढ़ी परछाइयों की भी एक अन्तहीन रेखा है। अपने पीछे भी बहुत-सी साइकिलें सन्नाती हुई चली आती दिखाई पड़ीं। उनके मूड खराब थे। मुझे लगा वे पीछे से आकर मुझे ढकेलेंगी और आगे जाने वाले रुक जायेंगे। उनके बीच पिच जाने का अहसास गहरा हो गया। दरवाज़ों की सरदलों के बीच पिचकर सूख गये मकड़ों के आकार नज़र आने लगे। मैं अपनी साइकिल लहरिये में चलाने लगा। पैदलों तक ने नाराज़गी से देखा। शायद वे पंक्ति तोड़ने के खिलाफ़ थे।

मैंने उनकी परवाह नहीं की। मेरे पीछे पहियों का एक लहरिया

उभरता चला जा रहा था। मुझे लगा मैं फिर पंक्ति के अन्दर लाया जा रहा हूँ। पीछे, सड़क पर बनते लहरिये के ऊपर से और भी बहुत से लोग गुज़रकर मेरे आगे-पीछे लग रहे थे। मुझे अपनी पाँत में लाने का उपक्रम कर रहे थे। उन सबको अपनी पाँत में बने रहने की चिन्ता थी।

मैं रुक गया।

मेरे रुकने से पूरे शहर को एक झटका लगता हुआ-सा महसूस हुआ। मेरा ख़याल था उस झटके से कुछ इमारतें हिलेंगी या कम-से-कम आस-पास के लोग आपस में टकराकर हो-हल्ला मचायेंगे। उनका हो-हल्ला मचाना मुझे इस जगह से हटाकर कहीं और बैठा देगा। लेकिन लोग भी रुकने लगे। मेरे चेहरे पर उत्तेजना आ गई। मैंने चाहा अपने चेहरे की उत्तेजना धीरे-धीरे करके रुकते हुए लोगों के चेहरों पर चिपका दूँ। उनके चेहरे मिट्टी बने रहे।

लोग ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगे। उनके बोलने में खोखलापन था। वे किसी काल्पनिक व्यक्ति पर नाराज़ थे। वे बातें करते चल रहे थे। उनका बातें करना चलने का हिस्सा था।

'वह आदमी ज़ालिम था।'

'ज़ालिमसिंह उसका नाम भी हो सकता है।'

'उसे पकड़ लेना चाहिये।'

'पुलिस कहाँ है ?

'सरकार ही कहाँ है ?"

'जनता को चाहिये इसके खिलाफ़ आवाज़ उठाए।'

'जनता ऽ ऽ ऽ ही ही ही—आवाज़ ही कहाँ है।'

'जवाहरलाल की सरकार है।'

'जवाहरलाल तो मर गये।'

'कौन कहता है ?'

लोगों के चले जाने के साथ जवाहरलाल छूटते जा रहे थे। मैं उनके

बारे में सोच रहा था। मुझे आश्चर्य था ये लोग भी उनके बारे में ऐसी बातें करते हैं। वे लोगों की ज़बान पर इस गंदी तरह से उतर आये थे। मुझे लगा पहले दिमाग हुआ करते थे। वे ही सोचा करते थे। अब सब तौले हो गये हैं। उन सबमें दिमाग़नुमा कोई चीज़ रख दी गई है। सब सोचने की मुद्रा में बात करते हैं। समय बदलते ही बातें बदल जाती हैं। बातें समय हो गई हैं। मुझे लगा वही बातें और लोगों के मुँह से सुनकर मैं अपनी ही बातों का विरोधी हो गया हूँ। ये साधारण लोग जवाहरलाल की बुराई नहीं कर सकते। उनके बारे में कुछ ही लोग सोच सकते हैं। इन्टेलेक्चुअल्स। मेरा मन हुआ मैं उनके बारे में बातें करने लगूँ और कहूँ गलत, वह अचकन नहीं पहनता था। नंगा रहता था। उसके पास किसी तरह का गुलाब नहीं था। सब गेंदे थे। मेरा क्या कर सकते हैं। न उनके पास जवाहरलाल है न मेरे पास मिनिस्ट्री। मुझे किसी तरह का कोई डर नहीं। मैंने कुछ बातें बुलन्द आवाज़ में कहीं। कहकर मुझे लगा लोग मुझे देखने लगे हैं। भिन्नता की भावना मेरे दिमाग़ में फिर आ गई। लोग उसी तरह थे।

एक बच्चा रोता चल रहा था। उसकी नाक निकल आई थी। अपने मुँह पर लेहस ली थी। मैंने उससे पूछा तुम्हें चोट लगी है? उसने मेरी तरफ देखा और गर्दन हिला दी। शायद वह कुछ कराना चाहता था। मैं करने-कराने की तवालत में नहीं फँसना चाहता था।

एक धूप का टुकड़ा था। मेरी साइकिल का पहिया दायीं ओर पट चल रहा था। मैं साइकिल के आधा ऊपर और आधा नीचे था। धूप में धूल के कण इकट्ठे होते जा रहे थे। उस टुकड़े पर से गुज़रते हुए बराबर ख़याल बना था ये सब कण कपड़ों से चिपक जायेंगे। धूल की रेखाएँ उस धूप के टुकड़े में ज्यादा स्पष्ट हो रही थीं।

लोग फिर इकट्ठे होते हुए नज़र आने लगे। वे बेतरतीब घेरों में बँट गये। एक गंदी और अध-नंगी औरत हाथ उठाकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रही थी, 'आते रहो,—जाते रहो, जाते रहो, जाते रहो! न यहाँ

कोई मर्द है न औरत, कोई हिजड़ा है न रंडी—मैं हूँ, में हूँ। भाग जाओ ! रात तोप चली थी, सवेरे बम गिरा था ! वह सामने देखो लटका है, गिरेगा, अभी गिरेगा, ठहरो, ठहरो !'

मैं उसके पास गया। मुझे लगा मैं अकेला एक छोटे-से घेरे में हूँ। मेरी साइकिल की लम्बाई के कारण उस घेरे को खिचना पड़ रहा है। टूट न जाये ? वह औरत हँसने लगी और खड़े हुए लोगों की तरफ़ इशारा करने लगी 'कद्दू के सिवाय अब कुछ नहीं पैदा होगा।' कुछ लोगों के होंठ फैल गये। वह औरत चिल्लाती हुई चलने लगी। 'पुल टूट गया। कोई एक-दूसरे के पास नहीं जा सकता, सब डूबेंगे। तुम भी डूबोगे।' चलती-चलती वह रुक गई और भयभीत-सी पीछे हटने लगी, 'आ-आ-आ-आ-आ-आ-ग आग ! आग !' वह ज़मीन पर लोटने लगी। लोगों के चेहरों से फिर लगने लगा, भुस हैं। उनके घेरे टूट गये और वे पीछे लौट गये। शायद वे सब वहाँ पहले भी नहीं थे। उनकी रस्सियाँ खिच गई थीं।

उस औरत की बातों को नज़र-अन्दाज़ करके लोग मुसाफ़ा मिला रहे थे। लेकिन उनके शरीर लटके होने की स्थिति से कुछ ऊपर उठ गये थे।

वही औरत सड़क पर दौड़ने लगी थी। किसी काल्पनिक व्यक्ति की ओर संकेत करके ताबड-तोड़ गालियाँ दे रही थी 'ये साला बम दिखाता है, इसका बम इसी के घुसेड़ दो। ये मार डालेगा। पकड़ लो, इसे पकड़ लो !' उसके दौड़ते रहने से रास्ता रुक गया था, चेहरों पर चेहरे उभर आये थे।

मैंने महसूस किया मैं फिर रुका हुआ हूँ। साइकिल और मैं घेरा तोड़कर एक सीधी लाइन में आ लगे हैं।

'कल्पना, १९६८'

समीकरण

सबेरे ठंड ज़रूर उतनी नहीं थी, लेकिन एक तरह की सिसियाहट थी। मैं कमरे से बाहर जा रहा था। सुबह उठने के बाद ऐसा सामान्यतः होता था। दरअसल रात-भर के बाद पेड़-पौधों को देखना ज़रूरी हो जाता है। कमरे के दूसरी ओर कच्ची ज़मीन है। कुछ पेड़-पौधे हैं। एक-आध नायाब गुलाब भी उन्हीं में शामिल है। मैं यह मानता हूँ दरमियाने दर्जे के मुझ-जैसे आदमी और फूलों के बीच कोई साम्य नहीं। लेकिन पेड़-पौधे हैं और गुलाब भी है। हस्बमामूल मैं उन्हें देखने जा रहा था।

उसका रिक्शा रुका। वह ऊपर वाले फ़्लेट में रहता है। रिक्शा रुकने के साथ मैंने दरवाज़ा खोलने के अपने इरादे पर दोबारा सोचा और उसे मुलतवी कर दिया। हालाँकि इरादा मुलतवी करने से पहले मैं थोड़ा

गड़बड़ाया था। रिक्शा रुकने के बाद कुछ देर तक किसी तरह की आवाज़ नहीं हुई थी। मेरा यह सोचना भी स्वाभाविक था, शायद रिक्शा वाला वहीं खड़ा होकर किसी सवारी का इन्तज़ार करने लगा हो। रिक्शे वालों का सवारी का इन्तजार करना मुझे हमेशा नागवार गुज़रता है। वे लोग अपनी पेंदी रिक्शा की सीट पर टिकाकर पाँव गद्दी पर फैला लेते हैं। बहुत कम लोग ऐसे होते हैं जो धोती बाँधते हों। ज़्यादातर लोग जाँघिये पहने रहते हैं। जाँघिया नुमाइश के लिए सबसे सुविधाजनक वस्तु है। लेकिन यह अच्छा ही हुआ मैं उस गड़बड़ से जल्दी ही निकल गया और दरवाज़ा नहीं खोला। अपनी सूझ-बूझ की दाद देकर मैं बहुत खुश हुआ। दरअसल अपनी अक्ल की दाद देना काफ़ी सुख देता है। वह रिक्शा वाले पर चिल्ला रहा था। अगर मैंने दरवाजा खोल दिया होता तो मुझे भी उसकी आवाज़ में अपनी आवाज़ मिलानी पड़ती।

मैं दरवाज़े से सटकर खड़ा था। खड़े होने में मैंने एहतियात बरती थी। दरवाज़े के नीचे छूटी दरारों से भी पाँव दिखाई नहीं पड़ रहे थे। अपने-आपको छिपाकर मौजूद रहना एक महत्वपूर्ण बात होती है।

वह रिक्शा वाले को डाँट लगाते हुए कह रहा था—'तुम क्या बकते हो जी, अपनी औक़ात नहीं समझते। अभी मेयर को फ़ोन किये देता हूँ, सब अकड़-मकड़ निकल जाएगी। आदमी में भलमनसाहत होनी चाहिये। किसी भी पेशे में आदमी भला बना रह सकता है। तुम क्या समझते हो तुम मुझसे पैसे ले लोगे। मैं तुम्हारे चूतड़ों पर एक लात दूंगा।'

रिक्शा वाला शायद चुप था। मैंने अन्दाजा लगाया, रिक्शा वाला बीड़ी पीता हुआ दूसरी ओर देख रहा होगा। हो सकता है धुआँ उसके मुँह पर ही छोड़ रहा हो। अगर अपने से बड़े आदमी को बोलते जाने के लिए मजबूर किया जा सके तो इससे अधिक सुख की कोई और बात नहीं होती। उसके बोलते जाने पर रिक्शा वाले ने काफ़ी

संयत आवाज़ में कहा 'सरकार, आप तो बड़े आदमी हैं। किसी नौकर को बुला लीजिए।' वह और ज़ोर से चिल्लाने लगा 'तू क्या समझता है, मैं तुमसे ही सामान ऊपर चढ़वाऊँगा।'

दो-चार क्षण वह चुप रहा। उसकी चुप्पी से मुझे फिर गलतफ़हमी हुई। शायद रिक्शा वाला सामान चढ़ाने के लिए रजामन्द हो गया है। लेकिन उसने स्वयं ही बोलकर मेरी गलतफ़हमी दूर कर दी, 'अगर सामान नहीं चढ़ायेगा तो पैसे नहीं मिलेंगे।'

रिक्शा वाले ने शायद पैडल में ज़ोर से पाँव मारा। चेन किरकिराती हुई ज़ोर से घूम गई।

'लीजिये, दो आने और मिला लीजिये। पूरा रुपया हो जायेगा!' इस बात को कहते समय भी रिक्शा वाला अपनी आवाज़ को संयत बनाये रहा।

वह चिल्लाया 'बकता है!'

रिक्शा वाला अपना रिक्शा लेकर बढ़ गया था। उसके चलते ही बहुत सारे पैसे सड़क पर बिखरने की आवाज़ सुनाई दी। उसकी आवाज़ भी सुनाई पड़ी 'उठा, मैं क्या तेरे पैसे रखकर अमीर हो जाऊँगा।' उसकी बात पर मुझे हँसी आने को हुई और सोचा शायद रिक्शा वालों के पैसे करामाती होते हैं। अमीर इन्हीं लोगों के पैसे से अमीर हुए हैं। रिक्शा वाला लौटकर पैसे चुगने में लग गया था। बक्सा और बिस्तर खींचकर चबूतरे पर चढ़ाने की आवाज़ आ रही थी। मैंने थोड़ी देर और उसी स्थिति में खड़े रहना उचित समझा।

हालाँकि वह ऊपर रहता है। लेकिन उसके घर की आवाजें हमारे घर आती हैं। गोया उसके घर की बातों में हमारा भी घर है। एकबारगी ख़याल आया आँगन में चलकर उसकी बातें सुनी जायें। लेकिन मैं दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल आया। चहारदीवारी के ऊपर से थोड़ा झुककर देखना चाहा। रिक्शा वाला गया या नहीं?

सिर्फ एक रिक्शावाला सवारी का इन्तज़ार करने वाली वही पेटेन्ट मुद्रा बनाये बैठा था। उसके बीड़ी पीने के ढंग से मुझे लगा कि वह अभी-अभी खुश हो चुका है। लेकिन यही सोचकर कि यह मेरा ख़याल भी हो सकता है, मैंने बात को आगे नहीं बढ़ाया।

बग़ीचे की मिट्टी काफ़ी सूखी-सूखी-सी नज़र आ रही थी। कुरेदने पर अन्दर से नम थी। मैंने गुलाब पर कल एक काफ़ी मोटी कली देखी थी। इस समय वह गायब थी। इस बात से मैं काफ़ी दुखी हुआ कि मेरे अच्छे-से-अच्छे फूल तोड़ लिये जाते हैं। मैं इस नतीजे पर पहुँच-पहुँचकर रह जाता हूँ कि दिन-पर-दिन हम लोगों के होते जा रहे हैं। मेरे इस खयाल को पुख्ता करने के लिए यह एक काफ़ी बड़ी घटना घट गई थी। उस कली के अफ़सोस में मैं अन्दर लौट गया। उस समय यही सोचा जा सकता था कि इस घटना के बारे में सब मुहल्ले वालों से कहूँगा। अगर इस तरह की घटनायें होती रहीं तो मुहल्ले में रहना दुश्वार हो जायेगा। मेरा ख़याल उससे भी ज़िक्र करने का था क्योंकि वह बिल्कुल ऊपर रहता था।

अन्दर आकर मैंने फूल की चोरी का ज़िक्र करना चाहा। हमारे बगीचे में बमुश्किल एक-दो ही पौधे ऐसे थे जिन पर इतने मोटे गुलाब आ सकते थे। शायद वही गुलाब हम लोगों की रुचि-सम्पन्नता का प्रमाण भी बन सकते थे। घर में भी हम लोग उन्हीं गुलाबों के ज़रिये दो-चार मिनट अच्छी बातें करते थे। बिना सिलसिले अच्छी बातें करना मुश्किल होता है। मैं जानता था इस बात को अभी से ज़ाहिर कर देना सबका पूरा दिन ज़ाया कर देगा। दरअसल दिन बहुत कम मिकदार में होता है। उसको खर्चने में एहतियात ज़रूरी होती है। गुलाब की कली वाली बात मैंने इसीलिए गोल कर दी। हालाँकि मेरा कहते रुक जाना काफ़ी सामान्य था। फिर भी मुझसे पूछा गया मैंने क्या नहीं कहा। हालाँकि इस बात को कहना मैं छोड़ चुका था। लेकिन कुछ [illegible] मेरे लिए [illegible] हो गई। मैंने उन

लोगों को बताया ऊपर वाले रायज़ादा साहब लौट आये हैं। उन लोगों के चेहरे से महसूस हुआ कि उन्हें रायज़ादा के जाने तक की ख़बर नहीं थी। मुझसे ही पूछा गया 'कहीं गये थे ?'

'हाँ ऽऽ।' मेरा मतलब पूरा हो गया। मैंने सोचा इन सब लोगोंको रायज़ादा और रिक्शावाले के बीच का झगड़ा सुना देना होगा। इस बात से फूल वाली बात और नीचे दब जायेगी। बातों के साथ इधर-उधर करना हम लोगों के वर्ग की महारत है। बातों से महँगी हावी हम लोग बर्दाश्त नहीं कर सकते। मेरे कुछ कहने से पहले ही मुझे बताया गया— 'देखिये-देखिये, रायज़ादा साहब काफ़ी ज़ोर-ज़ोर से बोल रहे हैं।'

वह अपनी पत्नी की ओर मुखातिब था। काफ़ी ज़ोर-शोर से कह रहा था 'तुम भी चलतीं मैंने, तुमसे कहा था ऐसे मौके बहुत मुश्किल से आते हैं। शहर में तो सिर्फ़ मेरे पास ही निमंत्रण आया था। तुम देखतीं, एक से एक कार! कोई अड़तीस फ़ीट लम्बी, कोई जहाज़ की तरह तैरती, कोई उकाब की तरह उड़ती। आदमियों का तो ठिकाना नहीं ! 'तरह तरह के लोग, मुल्क-मुल्क के रहने वाले, खूबसूरत-से-खूबसूरत और बदसूरत-से-बदसूरत ! मेरी बात तो तुम सुनती ही नहीं।'

हम सबके चेहरों से लगा वह ज़रूर बड़ी जगह से लौटा है। उनका लौटना अभी ख़तम नहीं हुआ। इस तरह का लौटना काफ़ी देर तक बना रहता है। एकाएक मुझे अपने एक एक्स-मिनिस्टर रिश्तेदार का ध्यान आया। अनायास ही मुँह से निकला 'चलो हम भी इतवार को उनके यहाँ हो आयें, बड़े प्यार से मिलते हैं। छोटों को भी इज्ज़त देते हैं। हो सकता है इस बार वे ही मुख्यमंत्री हो जायें।' मैं भी उसकी बातों के कारण जोश में आता जा रहा था।

मैंने पत्नी से पूछा 'तुम्हारी क्या राय है ?' दूसरी तरफ़ कोई स्पष्ट प्रतिक्रिया नज़र नहीं आई। मैंने बिना प्रतिक्रिया जाने बात जारी रखी — 'इस प्रदेश में एक वही आदमी हैं, जो नज़र भरकर देख लें तो आदमी पानी-पानी हो जाये।' हालाँकि कहने के बाद मैं सोचने लगा

यह जुमला फ़िज़ूल-सा है। मैंने अपने-आपको समझाया यह एक मुहावरा है। मुहावरे से बातें जमती हैं।

वह और ज़ोर से बोलने लगा था। शायद उसे यह खयाल हो गया था मैं भी किसी बड़े आदमी के बारे में बात कर रहा हूँ। मैं ख़ामोश हो गया। वह बुलन्द आवाज़ से छोटी-छोटी बातें कह रहा था—'गाड़ी स्टेशन पर पहुँची तो उनके सेक्रेटरी शर्मा घूमते हुए मिले। गाड़ी से उतरते ही उन्होंने हाथ थाम लिया—'मिसेज़ रायज़ादा कहाँ हैं ? आप लोगों के बारे में बीबी साहब सवेरे पूछ रही थीं। यह तो अच्छा हुआ मैंने दो स्टेशन पहले फ़र्स्ट-क्लास बदल लिया था। थर्ड से उतरता तो शर्म उठानी पड़ती।'

मैं सोचने लगा यह शर्मा कौन हो सकता है ? ठीक तरह समझ नहीं पाया चूँकि शर्मा 'सरनेम' होता है। वह कहता जा रहा था—'वहीं स्टेशन के सामने ख़ास-ख़ास मेहमानों के लिए एक कोठी रिज़र्व थी। हर एक में खादी के बिस्तर लगे थे, मुझे तो बिस्तर खोलने की ज़रूरत भी नहीं पड़ी। शर्मा ने कहा—आपके ठहरने का इन्तज़ाम बीवी साहब ने यहीं कराया है। जब आपको ज़रूरत हो, नम्बर ग्यारह गाड़ी मँगवा लें।'

मिसेज़ रायज़ादा ने कहा 'पता है क्या बज गया ?' मैंने घड़ी देखी। साढ़े आठ बजे थे। वे कह रही थीं, 'अब जल्दी से नहा-धोकर तैयार हो जाइये। बातें करने के लिए काफ़ी समय है।' उन बातों के बन्द हो जाने से घर में भी मैंने महसूस किया कि सब एकाएक निठल्ले हो गये हैं। उनके चेहरों का कसाव एकाएक ग़ायब हो गया। मैंने सोचा फूलवाली बात का उपयोग इस समय करना उचित होगा। उस बात पर घर वालों के चेहरे फिर तन सकते थे। उनकी उत्तेजनाएँ लौटने की पूरी सम्भावना थी।

उसने पत्नी की बात अनसुनी कर दी थी। वह आँगन की तरफ़ मुँडेर पर बै[illegible] में निकल

आया था। मैंने अनायास सोचा यदि नीचे से कोई नोंकदार चीज़ उछाली जाय तो इसकी पेंदी में छेद करती हुई निकल जायेगी। उसने दोनों हाथ पंखों की तरह फैलाकर कहा 'जब तुम्हारे बारे में पूछा गया तो मुझे बुरा लगा। हर आदमी अपनी बीवी के साथ था। बीवियों के साथ जाने से पोज़ीशन इम्प्रूव हो जाती है। बीवी साहब दरवाज़े पर खड़ी रिसीव कर रही थीं। सबसे हाथ मिलाकर एक-दो बात पूछती जाती थीं। उन्होंने मुझसे भी हाथ मिलाया और तुम्हारे बारे में पूछा भी। मुझे काफ़ी शर्म उठानी पड़ी।'

उसकी बीवी ने तुरन्त पूछा, 'तुमसे भी मिलाया हाथ ?'

'हाँ, क्यों ? मैं भी तो उस समय उनका मेहमान ही था।'

'तो तुमने मिला लिया ?' मिसेज़ रायज़ादा ने काफ़ी उत्तेजित स्वर में पूछा।

'क्यों न मिलाता ?'

'पता नहीं ये बड़ी औरतें कैसी होती हैं !'

वह एकाएक बिगड़ गया, 'तुम समझ नहीं सकतीं। उस पोज़ीशन पर पहुँचकर कोई औरत या मर्द नहीं होता। इस समय वे इस मुल्क की सब-कुछ हैं। यहाँ बैठकर औरत-मर्द करती हो !···देखतीं तो आँखें खुली रह जातीं।'

'अच्छा तो जाओ, नहाकर आओ।' मिसेज़ रायजादा ने एकाएक कहा।

वह अभी भी मुंडेर पर मौजूद था। मैं उसकी शक्ल देखना चाहता था। कई बार बातों से ज़्यादा शक्लें बोलती हैं। मैंने उसे पुकारकर कहा, 'भाई साहब, ज़रा सँभलकर बैठिये, कहीं बातों की झोंक में कुछ ख्याल ही न रहे।' वह एकाएक घूमने को हुआ लेकिन घूम नहीं सका। उतरकर झाँकने लगा।

'नमस्कार साहब, अभी बाहर से आ रहा हूँ। बाहर से क्या बीवी साहब के लड़के की शादी थी। उन्होंने बहुत आग्रह के साथ बुलाया था।

आप तो जानते हैं उनके साथ मेरे कैसे ताल्लुक़ात हैं। मेरा इनकमटैक्स का केस था। मैंने उन्हें लिखा भी। लेकिन उन्होंने फ़ौरन बज़रिये तार बुलाया। जाना पड़ा।'

मैंने बड़ी अर्थहीनता से कहा 'यह तो सब चलता ही है।'

उसने वहीं से जोश में कहा, 'क्या इख़लाक़ है! इतने बड़े लोग! ऐसी मेहमान-नवाज़ी! लोग उनके बारे में चाहे कुछ कहें लेकिन इतनी बड़ी हस्ती होकर ढाई घण्टे दरवाज़े पर खड़ी रहीं।'

मैंने बहुत तटस्थता के साथ कहा 'किसी को अपने यहाँ बुलाया जाता है, इतना तो करना ही पड़ता है। नहीं तो कौन किसी के यहाँ जाये।'

उसका चेहरा अपनी तरफ़ होने का फ़ायदा मैंने महसूस किया। उसकी शक्ल बोल गई थी। उसने अपने-आप ही कहा, 'अच्छा, नहाकर आता हूँ। फिर आपसे बातें होंगी। आप लेखक आदमी हैं, आपको तो ऐसे मौक़ों के बारे में जानना ही चाहिये।'

मैंने मुस्कराकर कहा 'बहुत-सी चीज़ें हैं दुनिया में जानने के लिए।'

वह तब तक मुंडेर से हट गया था। उसके हटने से लगा, एक खालीपन ऊपर से नीचे लटक गया है।



मुझे उससे बातें करते देख सब लोग इधर-उधर हो गये थे और काम में लग गये थे। आँगन में मैं अकेला रह गया था। मुझे लग रहा था अभी-अभी पैराशूट से उतारा गया हूँ। हालाँकि ऐसा लगने के पीछे कोई और कारण नज़र नहीं आ रहा था। अपने को टटोलना मेरे लिए लाजिमी-सा हो गया। मैं अपने उन सब तर्कों से कन्नी काट गया जो मुझे जँचते-से लगे। अन्त में मैंने यही सोचना उचित समझा वह अभी-अभी ऊपर था और अब हट गया है। इस बात से मैं झुँझला-सा गया। मुझे कह देना चाहिये था शादियाँ तो रोज़ होती हैं। बीसवीं सदी में

भी आप शादी का निमंत्रण पाकर खुश हैं । आने वाले ज़माने में एक-एक आदमी और एक-एक औरत के हिस्से में पाँच-पाँच तलाक और छः-छः शादियाँ आयेंगी । एकाएक मैं उस बात से हटकर अपने बारे में सोचने लगा । अपनी नज़र में मैं वक्त जाया कर रहा था । काफ़ी ज़ोर से लगभग चिल्लाकर कहा 'अरे भाई, चाय मिलेगी या नहीं ? क्षण-भर कोई आवाज़ सुनाई नहीं दी । मुझे लगा वे सब लोग चुपचाप बैठे उसकी बातों के बारे में सोच रहे होंगे ।

चाय पिये बिना मैं बाहर निकल आया । पौधों में मुझे एक तरह की खामोशी नज़र आई । सड़क पर दो-चार बच्चे इकठ्टे देखकर मुझे लगा फूल चुराना चाहते हैं । मैंने उन्हें बुलाकर पूछा 'फूल चुराते हो ?'

उन्होंने एक-दूसरे की तरफ़ देखा । उनमें सबसे बड़ी लड़की ने बड़ी-बड़ी आँखों को गोल करके कहा 'नहींऽऽ ।'

'किसने तोड़े ?' उसने फिर गर्दन हिला दी । मुझे लगा मैं टुच्चा-पन कर रहा हूँ । इतने लोगों के यहाँ एक-से-एक बढ़िया गुलाब होते हैं क्या वे बच्चों से इस तरह पूछते हैं । उसी लड़की ने मुझे चुप देखकर पूछा 'जी, हम जायें ?'

मेरे मुँह से एकाएक निकल गया 'जी हाँ, माफ़ कीजिये !' लेकिन तुरन्त ही कुछ सँभलकर डाँट लगानी शुरू कर दी—'आगे से कभी मत तोड़ना ।' जितनी ज़ोर से मैंने डाँटा उतना ही धीमे वे लोग चले गये ।

अन्दर लौटा तो चाय की केतली मेज़ पर आ गई थी । सिर्फ़ चाय की केतली देखकर मुझे गुस्सा आया । लेकिन मेरे गुस्से का ध्यान न करके बताया गया, बीवी साहब रायज़ादा साहब को एक विदेशी टाईकेस दिया है । मैंने कोई जवाब न देकर अनायास कहा 'वह गुलाब का फूल नहीं रहा ।'

'वह मोटी वाली कली ?' मैंने सिर्फ़ गर्दन हिला दी ।

'हाय, उस पर तो पहली बार कली आई थी।' सबके चेहरों पर कली टूटने के बाद बची ख़ाली जगह बन गई।

सब लोग दुखी हो गये थे। शोकसंतप्त आवाज़ें निकल रही थीं। कुछ ही देर में सब लोग बाहर निकल गये और उस पौधे के चारों तरफ़ इकट्ठे हो गये। वे सब लोग जाँच-पड़ताल में व्यस्त थे।

'इस जगह से हाथ बढ़ाकर तोड़ी गई है।'

'नहीं जी, तोड़ने वाला बाक़ायदा दरवाजा खोलकर आया और तोड़कर ले गया।

'यह रहा पाँव का निशान, दीवार पर से कूदा!'

कली के बाद टूटी हुई डंडी को देखा गया। पेड़ की जड़ों को देखा गया, ढीली तो नहीं हो गई। सब लोग क़िलेबन्दी में लग गये। मैं मेज़ के पास लौट आया। केतली टीकोज़ी से ढँकी रखी थी। मैंने घर की व्यवस्था के बारे में सोचना चाहा। वह उलट-पुलट थी। ऊपर से आने वाली आवाज़ें भी गुम थीं। मेरा मन हुआ उन लोगों को भी पुकारकर फूल की चोरी के बारे में बता दिया जाये। हो सकता है दोनों पति-पत्नी भी छज्जे पर आकर सहानुभूति प्रकट करना चाहें। लेकिन तुरन्त ही मुझे ख़याल आया, रायज़ादा ऐसा नहीं करेगा। अभी-अभी वह एक बड़े आदमी के यहाँ से लौटा है। वहाँ भी गुलाब रहे होंगे। वही उसकी आँखों में होंगे। उसकी इस मानसिकता के बारे में सोचकर मुझे अच्छा नहीं लगा। मैंने सोचा, दूसरे की स्थिति के कारण अपने को उठा हुआ महसूस करना टुच्चापन है। मैंने फिर कान लगाये, आवाज़ अभी भी नहीं थी।

मैं नाराज़ होता जा रहा था। चाय की केतली बदस्तूर ढँकी रखी थी। मैं समझ नहीं पा रहा था चाय की ढँकी केतली को मैं कब तक इसी तरह देखता रहूँगा। मैं केतली को उठाकर फेंक देना चाहता था। लेकिन केतली के टूटते ही फ़र्श गंदा हो जाने का अन्देशा था। गंदगी मुझे पसन्द नहीं। मुझे फिर उसका ख़याल आया। बार-बार उसके

बारे में सोचना मुझे अनुचित लगा। हो सकता था मैं इसी बहाने बड़े आदमियों के बारे में सोचने लगता। उन लोगों के बारे में इस तरह सोचने से छोटेपन का अहसास ज़्यादा गहरा होने की संभावना रहती है।

गैलरी की तरफ़ वाले दरवाज़े पर दस्तक थी। कभी-कभी किसी का भी इस तरह होना अपने न होने को बढ़ा देता है। कुछ देर मैं चुप रहा। लेकिन मुझे लगा दस्तक में बेतकल्लुफ़ी ज़्यादा है। इस तरह की बेतकल्लुफ़ी को ज़्यादा देर तक चुपचाप बर्दाश्त करना मुश्किल हो जाता है। दरवाज़ा खोलने से पहले भी सब लोगों का ख़याल आया। वे सब लोग अभी भी बाहर थे।

वह स्वयं दरवाज़े पर था। नहा-धोकर आया था। उसके पूरे जिस्म में चेहरा ही नज़र आ रहा था। कभी-कभी के चेहरे जिस्म को गायब कर देते हैं। एकाएक मैं उसे कुछ कह नहीं सका। वह मुस्कुराता रहा और मेरा चेहरा देखता रहा। मुझे लगा वह कुछ-कुछ बड़प्पन की मुद्रा में है।

मैंने बात दूसरी तरह शुरू की—'सवेरे रिक्शा वाले के साथ क्या हुआ था ?' क्षण-भर को हम दोनों के चेहरे आपस में बदल गये। फिर एकाएक वह सँभल गया और बोला—'इन सालों का दिमाग़ ख़राब है—खैर छोड़ो! इधर दो रोज़ बाहर रहा तुमसे बातें नहीं हो पायीं। सोचा कुछ गपशप की जाय। तुम्हें तो कहीं नहीं जाना ? तुम लोगों के मज़े हैं। दो घंटे बैठे और एक कहानी घसीट दी। लगता है तुमने तो चाय भी नहीं पी। चलो ऊपर पीना। बातें भी होती रहेंगी। ऐसी चाय पिलाऊँगा कि पीना भूल जाओगे।' कान के पास मुँह लाकर बोला—'बीवी साहिबा के यहाँ से लाया हूँ। उनके यहाँ चाय पी तो आँखें खुल गई, ऐसा फ़्लेवर कि तबीयत खुश हो गई।'

मैं उसे बोलने दे रहा था। लेकिन मुझे लगा मैं उसके साथ चाय पी सकता हूँ। पी भी लेनी चाहिये। देखा जाए ये लोग कैसी चाय पीते हैं। सब टी मार्केस वाले बढ़िया-से-बढ़िया चाय पहुँचाते होंगे।

वह अपने-आप ही बोला 'नहीं मर्ज़ी तो छोड़ो।' लेकिन साहब, वहाँ वो आलम था कि बयान नहीं किया जा सकता। सिम्पली एक्सपीरियन्स !'

मैंने आवाज़ लगाई। किसी को नाम से नहीं पुकारा। सिर्फ़ कहा, 'सुनो ऽ ऽ।' सुनो कहना मुझे एक अजीब बड़प्पन की अनुभूति कराता है। इसलिए नाम से बुलाना उतना नहीं जँचता। किसी ने सुना नहीं।

वह बोला—'आप भी होते तो मज़ा आता। बीवी साहिबा इतनी बड़ी चीज़ होकर ढाई घण्टा दरवाज़े पर खड़ी रहीं। आप मानेंगे नहीं। करीब तीन हज़ार आदमी शरीक हुए। हरएक से उन्होंने बात की। उन्हें क्या ज़रूरत थी, एक तरफ़ बैठ जातीं। लोग खुद पीछे-पीछे घूमते।'

मैंने 'हूँ' करके कहा —'आज सबेरे से ही हमारा घर इधर-उधर है।'

उसने मेरी बात खत्म होने तक मेरी तरफ़ देखा, फिर बोला 'लेकिन उनकी आंटी ज़्यादा ऑफ़िशियस हैं। किस तमक़नत से खड़ी थीं। सत्तर साल से ज़्यादा की होंगी लेकिन बिलकुल फ्रेश ! आने वालों से बस 'हाय ऽ ऽ' करती थीं। सिर्फ़ अमेरिकन एम्बेसडर की पत्नी से बात की —यू मे फ़ील कमफ़रटेबिल देयर ! सुना ठहरी भी कहीं और थीं। वहाँ नहीं ठहरीं। लेकिन बीवी साहिबा नम्र, सादा और मेहमान-नवाज ! इतने बड़े लोगों में इतनी सादगी ! शराफ़त ! मेरी बात तो और है। छोटे-सा-छोटा आदमी उनके नज़दीक था। लोग कान्ग्रेच्यूलेशन्स कहते थे तो बीवी साहिबा के चेहरे पर की रोशनी बढ़ जाती थी।'

मैंने इस बार खड़े होकर पुकारा 'भई, सुनोगी या नहीं ?'

'आये ऽ ऽ ऽ।'

'क्या आये, मैं यहाँ बैठा-बैठा शोर मचा रहा हूँ।'

उसने अपनी बात जारी रखी 'बीवी साहिबा के वालिद के ज़माने के एक नौकर ने बीवी साहिबा के प्रिन्सपल-सेक्रेटरी को डाँट दिया। उसने गलती से पूछ लिया सीधे बीवी साहिबा के पास क्यों गये ? उसने फ़ौरन कहा आप जायें-न-जायें हम जायेंगे। हमने उन्हें गोद में खिलाया है।'

वह थोड़ा रुककर बोला 'लोग जाने क्या-क्या कहते हैं। दरअसल

हम तो उन्हें पास से जानते हैं। लोग तो अफ़वाह-जीवी होते हैं।'

उन लोगों को आते हुए देखा तो बिगड़ उठने का मन हुआ। लेकिन वे लोग नाराज़ होने का मौका दिये बिना बोले 'ऐसा इन्तज़ाम कर दिया है, कोई घुसेगा तो लहूलुहान हो जायेगा। लोग-बाग शराफ़त से मानते ही नहीं।'

मैंने नाराज़गी से कहा 'यह चाय ठंडी हो रही है।'

'अभी गरम करके लाई।'

उसने अपनी बात जारी रखी—'मैं तो वहीं था। राष्ट्रपतिजी आये, उन्हें भी उसी तरह रिसीव किया जिस तरह मुझे किया था। बस इतना फ़र्क हुआ, लड़का उन्हें खुद अन्दर ले गया। एम्बेसेडर्स के लिए ज़रूर कुछ कदम आगे बढ़ती थीं। एक-दो कदम साथ चलती भी थीं। उन लोगों को आधा घण्टे पहले का समय दिया था। दूसरे मुल्कों से हमारे तालुकात उन्हीं लोगों के ज़रिये होते हैं। हम उनको नाराज़ नहीं कर सकते।' जहाँ तक मुझे याद था, मैंने राजदूतों के स्वागत के खिलाफ़ कोई बात नहीं कही थी। यह बात कहते मैं रुक गया।

एकाएक ख़याल आया, केतली तक उठा ली गई। मेज़ खाली थी। यह स्थिति मुझे किरकिरी-सी लगी। मैंने उससे चाय के बारे में पूछा। उसने काफी 'जल्दी में कहा, पी लेंगे एक प्याला!' उसकी शक्ल से लगा वह अपनी बात में व्यवधान नहीं चाहता। उसने अपनी बात फिर जारी कर दी।

'बिना देखे तुम उस बात को नहीं समझोगे। जिस तरह लोग दाखिल हो रहे थे वह ठाठ ही अलग था। उस तरह न तो साधारण लोग दाखिल होते हैं और न साधारण लोगों के यहाँ दाखिल हुआ जाता है। कारों से उतरना, तपाक से अन्दर दाखिल होना, बीवी साहिबा द्वारा रिसीव किया जाना, कुछ लोगों को छोड़कर बाकी सबका उस लॉन में खो जाना, सब कुछ स्वतः था।' उसकी बात सुनकर मैंने सोचा लॉन में खो जाने के बाद उन लोगों के चेहरे गायब हो जाते होंगे और उनके धब्बे रह जाते

होंगे । लेकिन मैंने उस बारे में कुछ नहीं कहा । बल्कि 'स्वतः' शब्द दोहरा दिया । उसे लगा उस शब्द पर मैंने भी आश्चर्य प्रकट किया है।

उसने काफ़ी ज़ोर से कहा 'हाँ स्वतः !' फिर बोला 'वहाँ एक-से-एक लम्बा और नाटा, खूबसूरत-से-खूबसूरत, गोरे-से-गोरा और काले-से-काला ! अजीबो-गरीब पोशाकें ! सब कुछ था । लोगों का कार से उतरकर अन्दर घुसना तो महसूस होता था, फिर सब गड्ड-मड्ड हो जाता था । गड्ड-मड्ड हो जाने वाली बात ने मुझे भी आकर्षित किया । लेकिन मुझे झुँझलाहट आ रही थी । आखिर चाय का क्या हुआ ! पुकारने को हुआ तो वही केतली आती नज़र आई । मैं थोड़ा झुँझलाया 'फिर वही केतली, अरे दूसरी केतली में लाओ । इतनी देर से इसे देखते-देखते मुझे नफ़रत हो गई है ।'

उसने आश्चर्य के साथ मुझे देखा । फिर धीमे से बोला, 'शेख साहब भी वहीं थे । इतने लम्बे लोग दस-पाँच ही होंगे । एकदम लक़दक़ । जितने लोग उनसे मिलने आये, शायद ही किसी और व्यक्ति से मिले हों । उनका क़द मुझसे थोड़ा ही लम्बा होगा । सूट का रंग क़रीब-क़रीब मेरे सूट से मिल रहा था । चेहरे का रंग थोड़ा साफ़ था —हाँ, जितने विदेशी उनसे मिले, उन्हें देखकर मुझे आश्चर्य हुआ । दो-तीन एम्बेसेडर्स भी उनके पास गये थे । मिलकर लौटते हुए उनके चेहरे चमक रहे थे । शेख साहब बेंत का सहारा लिये शान से खड़े थे । जो लोग बाहर से आये थे वे इशारे करके कह रहे थे —'शेख साहब ! चेहरे से नहीं लगता वे ऐसे आदमी हैं ।'

केतली बदल गई थी । उससे मुझे राहत मिली थी । प्याले भी नये थे । एक प्याला ज़ोर से रखा गया । मुझे बीच ही में डाँटना पड़ा 'अरे भई सँभालकर । टूट जायेगा ।'

वह कहता जा रहा था —'सबसे ख़ास बात थी, अफ्रीकी देशों के लोग बिल्कुल विलायती ढंग से अंग्रेज़ी बोलते हैं । एक लोग अंग्रेज़ी के खिलाफ़ हैं; कोई ऐसा मुल्क नहीं जहाँ अंग्रेज़ी न बोली जाती हो।

बीवी साहिबा ने हरएक एम्बेसेडर से अंग्रेज़ी में ही बात की । शायद दो-चार के साथ ही इंटरप्रेटर होंगे । उन्हें देखकर लगता था, वे अपने ही मुल्क के हैं ।'

प्याले लग गये थे । दूध आने वाला था । मैंने कहा, 'अंग्रेज़ी अच्छी भाषा है ।'

'बीवी साहिबा का लड़का ज़्यादातर हिन्दी में बातें कर रहा था। अगले रोज़ लंच पर बीवी साहिबा की विलायती बहू हिन्दी के ही शब्द बोल रही थी । बिलकुल हिन्दुस्तानी तरह से खाना खिला रही थी ।' मैंने महसूस किया उसके चेहरे पर खाने का भाव आ गया है ।

मैंने अनायास ही कहा 'यह ठीक हुआ; इससे-तालुकात अच्छे होंगे ।' वह शायद समझा नहीं । मेज़ पर पूरी तरह चाय लग गई थी । चाय लग जाने से मुझे सकून-सा महसूस हो रहा था ।

चाय लगाते समय बच्चों ने बताया 'अब एक फूल का भी नुकसान नहीं होगा । हमने यही सोचा है, कली मोटी होते ही तोड़ लिया करेंगे गुलदस्ते में खिल जाया करेगी ।'

वह चाय पीता हुआ बोला, 'वहाँ इतनी तादाद में गुलाब के फूल खिले थे-कि अन्दाज़ लगाना मुश्किल था । ऐसे गुलाब मैंने कभी नहीं देखे । जो गुलाब बीवी साहिबा ने जूड़े में लगाया हुआ था, वैसा तो शायद ही कहीं देखने को मिले । दरअसल हिन्दुस्तान के बेस्ट माली इन लोगों के बग़ीचों में होते हैं ।'

'अंकल एक पौधा लेते आते ।' मुझे अपनी बच्ची का यह कहना अटपटा-सा लगा ।

लेकिन उसने कहा 'मैं कल ही बीवी साहिबा को लिख दूंगा । फ़ौरन आ जायेगा ।' इस आश्वासन से मुझे अन्दर-ही-अन्दर मज़ा आया । अगर आगया तो कहने को मिलेगा या गुलाब अमुक गार्डन्स का है । मैंने उससे यह सब-कुछ न कहकर कुछ खाने के लिए कहा । उसने एक बिस्कुट खाया, चाय का घूंट भरा ।

'शायद तुम्हें विश्वास न हो, मैंने ऐसी सादगी किसी में देखी ही नहीं। मिनिस्टर लोग आते थे, सामने से दाँत निपोरते हुए गुज़र जाते थे। बीवी साहिबा भी मुस्कुरा देती थीं। मिनिस्टरों की नज़र कहीं और पड़ती ही नहीं थी। वे उन्हें ही देख रहे थे। लोग ज़्यादातर फूलों के गुलदस्ते ला रहे थे। बीवी साहिबा ने प्रेजेंन्ट लाने को मना कर दिया था। फूलों का ढेर लग गया था।'

मुझे अपने गुलाब का ध्यान आगया। मैंने उसे बताना चाहा हमारा गुलाब चोरी हो गया। उसने मेरी बात पर ध्यान नहीं दिया। गुलाब की बात पर उसने कुछ इस तरह देखा कि मेरी बात उस समय के लिए गैर-मौजूद है।

उसने बात दूसरे ढंग से कही 'तुम तो मोरारजी भाई को स्ट्रांग आदमी मानते हो, उन्हें भी वहाँ घूमते हुए देखा। हालाँकि बीवी साहिबा ने उनका स्वागत बहुत अच्छी तरह किया। मुझे लगता है, अब वे दोस्त हैं। कामराज के चेहरे पर कुछ खामोशी नज़र आ रही थी। थके-थके थे, दौरे के बारे में दो-तीन मंत्रियों ने पूछा। शेख ने मोरारजी वग़ैरह को दूर से ही हाथ हिला दिया था। ज़्यादातर लोग मोरारजी, चव्हाण वगैरा को झुककर नमस्कार कर रहे थे।'

मुझे लगा चाय में क्लोरिन ज़्यादा है। कभी-कभी पानी में इतनी क्लोरिन पास कर दी जाती है, पीना मुश्किल हो जाता है। मैंने कहा, क्लोरिन की वजह से स्वाद बिगड़ गया। क्लोरिन की बात सुनकर उसका चेहरा थोड़ा सुस्त पड़ गया था।

थोड़ी देर हम दोनों चुप रहे। उसकी चुप्पी पहली बार थी। वह एकाएक बोला 'अब चलें।'

'एक प्याला और लें।'

'नहीं, अब चलेंगे।'

मैं उसे बाहर तक छोड़ने गया। उसने बाहर के कमरे पर नज़र डालकर कहा 'रहते तो वे लोग हैं।' मैं चुप रहा।

बाहर पहुँचकर वह ठिठका और पेड़-पौधों की तरफ़ देखकर कहा 'फूल तो उन्हीं लोगों के बगीचों में होते हैं।' फिर मेरे गुलाब के पास जाकर पूछा —'यही वह गुलाब है।'

मैंने गर्दन हिला दी।

उसने पत्तियाँ छूकर देखीं। फिर बोला 'वहाँ गुलाबों की पत्तियाँ बहुरंगी और चौड़ी थीं—गुलाब तो वे ही थे।' मैंने कुछ कहना चाहा। वह सीधा खड़ा हुआ, खँखारा और थूक दिया।

नायक

आँगन में वह बाँस की कुर्सी पर पाँव उठाये बैठा था । अगर कुरता-पाजामा न पहने होता तो सामने से आदिम नज़र आता । चूँकि शाम हो गई थी और धुँधलका उतर आया था। उसकी नज़र बार-बार आसमान पर जा रही थी। वक्त ऐसा था आसमान उससे ज़्यादा साफ़ नहीं हो सकता था । शायद उसे असुविधा हो रही थी । उसने पाँव कुर्सी से नीचे उतार लिये और एक पाँव दूसरे घुटने पर चढ़ा लिया। इतने ही से उसके आदिमपन में कमी आ गई और चेहरा संभ्रान्त निकल आया । उसने दोनों हाथों को पीछे झुकाकर अँगड़ाई ली और मुँह से आवाज़ निकाली । वह उठ जाना चाहता था। पर वह उठा नहीं बल्कि और [illegible]

शाम पूरी तरह हो आई। उसने

पत्नी को पुकारा। पुकारने के दौरान उसे जँभाई आ गई और आवाज़ छितरा गई। उसे फिर पुकारना पड़ा। लेकिन पत्नी के आने में बहुत उत्सुकता या दौड़ना शामिल नहीं था। ठंडापन था। वह आकर कुर्सी के पास खड़ी हो गई। उसने पत्नी की तरफ़ देखा और बोला 'अब तो काफ़ी अँधेरा हो गया।'

'हाँ, तुम भी काफ़ी देर से बैठे हो।'

'देर से ? हाँ बैठा तो हूँ।' वह चुपचाप उसे देखती रही।

'तुम बोली नहीं ?'

'आ रही थी।'

'शायद दोनों काम साथ न हो पाते ?'

'हो तो सकते थे, आने का काम ज़्यादा ज़रूरी था।'

'तो तुम आ रही थीं ?' कुछ देर खामोश रहकर कहा 'इसीलिए तुम नहीं बोलीं ? यह भी ठीक है। यह भी एक एप्रोच हो सकती है।' वह चुप रही।

उसने अपने-आप ही कहा 'शायद तुम बैठना चाहो, बैठो। कुर्सी पर इत्तफ़ाक से मैं बैठा हूँ।'

वह सीढ़ियों के नीचे पड़ी खटिया पर बैठ गई। उसने फिर आसमान की तरफ़ देखा और कहा 'इसका मज़ा तो दिन में है। रात चिपट-सी जाती है।' वह भी ऊपर देखने लगी चेहरे पर कोई खास बात नज़र नहीं आई। गर्दन नीचे करके बोली 'हूँ !'

'आजकल शाम वैसी नहीं गुज़रती।' वह खामोश रही।

'काम नहीं होता !' उसी ने फिर कहा।

'किया करो।'

'अब पहली वाली बात नहीं !'

'अब कौनसी बात है ?' उसने पत्नी के सवाल का कोई जवाब नहीं दिया।

'जब मैं आई-आई थी तब तो तुम करते थे।

'अब ऊबता रहता हूँ।' उसकी पत्नी के बैठने में उठना शामिल होने लगा था।

उसने ही पूछा 'तुम भी तो ऊबती होगी ?' पत्नी एकाएक नहीं बोल सकी। उसी ने सुझाव दिया 'तुम्हें इससे बचना चाहिये।'

'और तुम्हें ?'

'मेरे लिए मुश्किल है। मुझे लोग समझ नहीं पाते।'

'शायद मुझे भी लोग न समझते हों।'

'औरतों को समझने में कोई मुश्किल नहीं होती। सिर्फ असुविधा हो सकती है।'

'अच्छा मैं चलती हूँ, काम···।'

उसने बीच में ही कहा 'हाँ काम ऽ ऽ ऽ, काम तो अच्छी चीज़ है।' फिर रुककर बोला, 'मैंने रज्जु से कहा था, आ जाये। तुम्हारी थोड़ी बदल हो जायेगी। बदल करते रहना चाहिए।' वह उठकर जाने लगी।

'मुझे लड़का पसन्द है।' उसकी इस बात पर वह चुप लगा गई। वह खुद ही बोला, लड़कियों की पसन्द के लिए ऐसे लड़के मुनासिब होते हैं।'

'हाँ, वह इस तरह का है'।

'यह अच्छी बात है, तुम मेरी राय से सहमत हो। वह एक चुलबुला लड़का है। आँखें चमकती हैं। दरअसल उसमें एक ढंग भी है। फैलने वाली आँखें अच्छी होती हैं। लेकिन आवाज़···।

वह बोली 'खराब है।'

'नहीं, ऐसी कोई खराब नहीं, कुछ हो सकती है।' इस बात का कोई जवाब न देकर उसने पूछा 'तुम कहीं जाओगे ?'

'चाहता था।' वह 'हूँ' करके चुप हो गई। वह बोला 'जाना तुम्हें भी चाहिये।'

'कहाँ ?'

'यह सोचने की बात है।' वह कुछ देर बाद बोला 'लड़कियाँ दोस्ती

के बारे में शंकालु होती हैं। दोस्ती कोई मूल्य नहीं, वक्त गुज़ारने का तरीक़ा है। दूसरे मुल्कों में इससे शरीरिक ज़रूरतें भी पूरी हो जाती हैं। चेंज के लिए दोस्ती नायाब चीज़ है।'

'चेंज!' पत्नी ने दोहरा दिया।

'मैं समझता हूँ औरतों को इसकी ज़्यादा ज़रूरत होती है।'

'तुम ऊब की बात कर रहे थे। ऊब पैरों से चढ़नी शुरू होती है और दिमाग़ तक पहुँचती है।'

'हूँ ऽऽ!' करके वह रह गया। पत्नी उठकर जाने लगी। उसके जाने को वह देखता रहा। उसकी यह आदत बन गई थी। जाती हुई पत्नी की एक-एक चीज़ पर…निगाह गड़ाकर परखा करता था। उसके कूल्हों के बारे में वह ज़्यादा सोचना चाहता था। उनके बारे में उसका ख़याल कभी अच्छा नहीं रहा। उनका हल्कापन उसकी देह के प्रभाव को हल्का कर देता है। दरअसल जो अहसास होना चाहिये वह नहीं हो पाता।

उसने पुकारा 'सुनो!'

'क्या?' वह वहीं खड़ी हो गई। उसने नज़दीक आने का इशारा किया। नज़दीक आने पर उसने पूछा 'तुम कभी अपनी देह के बारे में सोचती हो?' वह जवाब नहीं दे पाई।

उसने फिर पूछा 'मैं यह जानना चाहता हूँ, कभी तुमने सोचा है, एक अच्छी किस्म की औरत के जिस्म में क्या-क्या होना चाहिये?'

'मुझे सोचने के लिए आदमी ज़्यादा मज़ेदार लगता है।'

'रज्जु के बारे में तुम क्या कहोगी?'

'अभी तक बड़े सिर का एक सुडौल लड़का है।'

'मैं तुम्हारे कूल्हों के बारे में जानना चाहता हूँ, तुम्हारी क्या राय है?'

'तुम मुझे अपनी राय बता चुके हो। तब भी मेरे हिप्स की वजह से तुम्हें परेशानी हुई थी। गोश्त ज़्यादा न होने की वजह से किसी

बीमारी का अहसास हुआ था। तुम्हारी राय से मैं सहमत हूँ। गोश्त एक महत्त्वपूर्ण चीज़ होती है। अब आता जा रहा है।'

'आदमियों के बारे में तुम्हारा क्या ख़याल है ?' पूछने के बाद वह मुस्कुराया।

'कोई ख़ास नहीं, वज़न कम होना चाहिये।' पत्नी ने जँभाई ली। वह कुछ हतप्रभ होकर बोला 'तुम मेरे बारे में अपनी राय साफ़ तौर से बता सकती हो।'

'मैं कई बार बता चुकी हूँ। तुम्हारे शरीर से कभी-कभी गन्ध आती है। वैसे तुम मज़बूत आदमी हो।'

'मजबूती के बारे में ज़्यादा जानना चाहूँगा।'

'मजबूती ऽ ऽ ऽ ? यानी स्ट्रांग !'

'अच्छा अब तुम जाओ, तुम्हें काम करना है।' लेकिन वह बैठ गई। उसके इस तरह बैठ जाने ने उसे थोड़ा डिस्टर्ब कर दिया। उसने फिर दोनों पाँव उठाकर कुर्सी पर रख लिये। वह बोली 'तुम इस तरह क्यों बैठते हो ? मेरा ख़याल है मर्दों में बुनियादी तौर पर बेपर्दगी होती है।'

उसने सिर्फ कहा 'मैं मानता हूँ।' और उसी तरह पाँव किये बैठा रहा। दोनों के बीच कुछ देर ख़ामोशी रही।

पत्नी ने अपना पाँव घुटने पर रख लिया। घुटने और टाँग के बीच एक साफ़-सुथरा कोण स्थित था। अगर उसकी साड़ी बहुत ज़्यादा बीच में आ गई होती तो शायद ऐसा न होता।

वह अचानक बोला 'मैं रज्जु के बारे में सोच रहा हूँ। तुम्हारा क्या ख़याल है ? तुम्हारे ख़याल पर मेरा सोचना काफ़ी निर्भर करता है।' वह चुप रही।

वह फिर बोला 'मेरा ख़याल है उसके पास औरतों के बारे में एक सहनशील और मुलायम दृष्टिकोण है।'

'औरतों के अलावा भी उसके पास दृष्टिकोण हो सकते हैं।'

'दरअसल औरतों के प्रति आदमी का दृष्टिकोण ही उसके और दृष्टिकोणों को बनाता है।'

उसने धीरे से कहा 'उसका दृष्टिकोण मुलायम है।'

पत्नी की बात से वह चौंका नहीं। थोड़े धीमे स्वर में कहा 'मेरा ख़याल है तुम उसे जान गई। फ्री होना अच्छा होता है।'

'तुम इसे जरूरी समझते हो?'

'दोनों के लिए। ज़िंदगी में सिर्फ एक आदमी को जान लेना काफ़ी नहीं होता। एक बहुत कम होता है। मैं इसीलिए एक से अधिक औरतों को जानना चाहता हूँ। हरएक का अनुभव और प्रतिक्रिया अलग होती है। मैंने तुम्हें कभी उतना एक्साइटेड नहीं देखा। तुममें बहुत ठंडापन है। वैसे लड़कियाँ काफ़ी पगला जाती हैं। तुम्हें देखकर लगता है पानी के टब में लेटी हो।'

उसने सिर्फ़ गर्दन हिला दी।

वह फिर बोला 'आदमी भी शायद अलग-अलग तरह बीहेव करते है। मसलन मैं और रज्जु ज़रूर अलग तरह बीहेव करेंगे। हो सकता है रज्जु पहले शर्माये तब आवेश में आये। तुम्हारा क्या ख़याल है?'

'मेरे ख़याल से वह काफ़ी फुर्तीला है।'

'तुम्हें उसे स्टडी करना चाहिये, ही इज़ ए कैरेक्टर।'

'उसे स्टडी करने का मेरा कोई इरादा नहीं।'

'यह मैं समझ सकता हूँ।'

वह कुछ देर खामोश रहा फिर बोला 'मैंने रज्जु से आने के लिए कहा था। क्योंकि मुझे जाना होगा। उसे यहीं रहना चाहिये। तुम्हें अकेलापन शायद अच्छा न लगे।'

'नहीं, मैं अधिक खुलेपन से सो सकती हूँ। हर बार किसी को छोड़कर जाना संभव नहीं हो सकता। ज़रूरत समझने पर मैं किसी को भी आमंत्रित कर सकती हूँ।'

'मैं आज पीकर सड़क पर चलते रहना चाहता हूँ। ऐसा करना

थ्रिल पैदा करता है। सड़क भूला मालूम पड़ती है। बत्तियों में दूरी बढ़ जाती है। सन्नाटा कानों तक खिंच जाता है, किसी तरह नहीं टूटता। तुम भी पी सकती हो।'

'मुझे तुमने पिलाई थी, कई दिन तक मुँह में कड़वापन घुला रहा।'

'सिवाय थोड़ी-सी उत्तेजना के और कोई परिवर्तन नहीं हुआ था।'

'वही काफ़ी था।'

'मैं अब चलना चाहूँगा। हो सकता है मेरे तैयार होने तक रज्जु आ जाये। इससे तुम्हारी मोनोट्नी भी टूटेगी।'

'मुझे लगता है तुम्हारे जाते ही मैं सो जाऊँगी, सोना भी मोनोट्नी को तोड़ता है। रज्जु के आ जाने पर मुझे कुछ और जागना पड़ सकता है।'

'मैं चाहूँगा सोने की तरफ़ तुम कम ध्यान दो।'

'कपड़े और रुपये आलमारी में हैं। इस बीच तुम थोड़ा-बहुत खा-पी भी सकते हो। वैसे पीने के साथ भी तुम्हें कुछ खाना होगा। शायद तुम सैन्डविचेज़ ज़्यादा पसन्द करते हो।'

वह अन्दर चला गया। उसकी पत्नी खाट से उठकर कुर्सी पर बैठ गई।



अन्दर से लौटने पर उसके चेहरे पर बाहर जाने की ताज़गी थी। बैठे-ही-बैठे पत्नी ने पूछा 'तुम कुछ खाओगे ?'

"नहीं, वहीं ठीक रहेगा। हो सकता है वह भूखा आये।"

'उसके लिए मेरे पास काफ़ी बचेगा।'

वह कुछ दूर तक जाकर लौट आया और बोला, 'अगर तुम चाहो तो मैं उसके घर की तरफ़ से निकल सकता हूँ।'

'तुम्हें सीधे जाना चाहिये। मैंने पहले ही कहा है उसके आने पर मुझे जगते रहना पड़ सकता है।'

'तुम शायद नहीं जानतीं ऊब कितनी अजीब चीज़ होती है। मैं भी इसलिए जा रहा हूँ। तुम्हें भी कोई रास्ता निकालना चाहिये।'

'रात में शायद तुम नहीं आ सकोगे।'

'पीने के बाद ऐसा करना मुश्किल होगा। पीने से ही समरसता खत्म नहीं होती। उसके बाद की और स्थितियों से भी गुज़रना ज़रूरी हो जाता है।'

'शायद दरवाज़ा बोल रहा है। दरवाज़ा खुलता है तो एक लकीर-सी खिंचती जाती है।' सिर्फ़ 'हूँ' करके उसने अपनी पत्नी की बात का जवाब दिया।

'रज्जु भी हो सकता है।' कहकर उसने पति की तरफ़ देखा। वह चुप रहा।

वह कुछ देर बाद फिर बोली 'शायद नहीं है!' उसने भी गर्दन हिला दी।

पत्नी ने बिना इधर-उधर देखे कहा 'अब तुम्हें जाना चाहिये। मैं दरवाज़ा बन्द करके लेट जाना चाहती हूँ।'

वह दो-चार क़दम जाकर लौट आया 'मैंने कुछ रुपये तुम्हारे लिए छोड़ दिये हैं।' उसकी आवाज़ दरवाज़े तक खिंचती चली गई। दरवाज़ा खुलने और बन्द होने के कारण दो लकीरें खिंचती मालूम हुईं। उसने अपने दोनों पाँव ज़मीन से रगड़े।



बाहर ठंड थी। इस तरह का ठंडापन मज़ेदार होता है; गरमाई बनाये रखता है। लेकिन वह उसे महसूस कर रहा था। मफ़लर उसके दिमाग़ में बराबर बना था। चौराहे के क़रीब उसे रुकना पड़ा। वहाँ भीड़ तो बहुत कम थी। लेकिन वह दिशा निर्धारित नहीं कर पाया था। उसने वहाँ खड़े होकर उबासी ली। चौराहा और भी ठंडा महसूस हुआ। पान वाले की [illegible] कुछ लोग वहाँ पान खाते हुए अभी भी मिल सकते हैं। पानवाला टाइम ऑफ़िस का

काम अच्छा करता है। यह सुविधा विलायतों को प्राप्त नहीं है।

चौराहे से आगे बढ़ते हुए उसे रज्जु का ख़याल आया। बायें घूमकर रज्जु के कमरे पर पहुँचा जा सकता था। वह मोड़पर रुका और कमरे के हर दरबे का अन्दाज़ लगाने लगा। लगभग पचास कदम पर उसका घर बिजली के खंभे की परछाईं से ढँका था। उस कमरे से उसे कोई बाहर आता हुआ महसूस हुआ। वह तेज़ी से आगे बढ़ गया।

रज्जु उसे पसन्द है। वह भी अच्छी है। बस उसमें एक वही कमी है। अगर वह न होती तो शायद उसकी पत्नी का जवाब न होता। वह हमेशा जवाब न होने की टर्म्स में ही सोचने का आदी है। जवाब हो भी तो क्या उखड़ता है।

वह पानवाले की दुकान पर पहुँचा। पानवाला व्यस्त था। इस मखलूख़ को कोई कभी खाली नहीं देखता था। ग्राहक हो या न हो। वैसे उसे पान लगाने की कला पसन्द है। जिन्दगी की ऊब हमेशा उसे पान की दुकान की तरफ़ खींचती है।

दो आदमियों के साथ एक औरत स्कार्फ़ बाँधे खड़ी थी। वे लोग ज़ोर-ज़ोर से हँस रहे थे। उस औरत का शरीर काफ़ी सुडौल लगा। चेहरा उतना अच्छा नहीं था। लेकिन अच्छा शरीर बिना अपनी तरफ़ खींचे बाज़ नहीं आता।

उनमें से एक आदमी ने कहा, 'एक्सचेंज इज नो रॉबरी।'

वह महिला तुरन्त बोली 'यह तो व्यवसाय का प्राचीनतम सिद्धान्त है।'

दूसरे ने हँसकर कहा 'ठीक है, मैं जल्दी-से-जल्दी इसका प्रबन्ध करूँगा। उसके बिना एक्सचेंज मुमकिन नहीं।' महिला ने दूसरे की तरफ़ देखकर आँख का कोना दबा दिया।

उन लोगों के पान तैयार थे। पानवाले ने उन लोगों के हाथ में थमाकर पैसे वसूल लिये। पैसों के गुल्लक से टकराने की आवाज़ उसे बहुत नज़दीक सुनाई पड़ी।

वह धीरे-से बुदबुदाया, 'इनमें से दूसरा आदमी क्वारा और चालू है।'

उन लोगों के चले जाने पर वह पानवाले के बिलकुल सामने जा खड़ा हुआ। बिना दुआ-सलाम के पानवाला बोला 'रज्जु भैया कई बार पूछ चुके हैं।'

वह एक मिनट रुका, फिर बोला 'उसे तो मैंने घर बुलाया था।'

'हो सकता है वहीं गये हों।' पानवाले की बात से वह चौंका तो नहीं लेकिन उसकी शक्ल की तरफ़ ज़रूर देखा। फिर कहा 'सुना है कत्था-चूना ठीक मिक़दार में मिल जाने पर खाने वाला पसीने से तरबतर नज़र आने लगता है। तुम्हारा पान लगाया तो देखकर पसीना आने लगता है।'

पानवाला हँस दिया। हँसी का प्रभाव उसके चेहरे पर काफ़ी देर तक बना रहा। उसने पान को तीन-चार जगह से झटका देकर मोड़ा और करारेपन को परखा, फिर बोला 'ज़रा खाकर देखो, ऐसा ही पान रज्जु बाबू को खिलाया है।' नसों में पानी उतर आया था। बाबू, पान मुँह रँगने के लिए नहीं खाया जाता। लोग आजकल अपनी औरतों को भी खिलाने लगे हैं। यह औरत खड़ी थी एक फुलपावर का पान लगा कर दे देता तो इन दोनों से भी काम न चलता।' वह हँस दिया।

उसे अपनी पत्नी का ख़याल आया। पान का उसे शौक है। उसका इरादा पूछने का हुआ कहीं रज्जु तो पान नहीं ले गया? लेकिन यह सोचकर टाल गया 'क्या फर्क पड़ता है।' वह अपने ही वाक्य से चौंक गया। हमेशा से उसका ख़याल है ऐसा कहने वाले को ही ज़्यादा फ़र्क पड़ता है। लेकिन उसके साथ ऐसी बात नहीं थी।

उसने दूसरा सवाल किया 'कोई और तो नहीं पूछ रहा था?'

पानवाले ने क्षण-भर सोचकर पूछा 'पहले जो लड़की तुम्हारे साथ आया करती थी, उसकी शादी हो गई?'

'क्यों?' उसने आवाज़ को काफी मोटी करके पूछा।

'वह आज आई थी, पान खाकर गई है। साथ में शायद उसका आदमी ही था।

हूँ ऽ ऽ! फिर बोला 'रायज़ादा के बारे में तो आज कोई नहीं होगा ?'

'नहीं, मंगल है न।'

'तो ऽ ऽ ?'

'रायज़ादा कृष्णा मेडिकल स्टोर में बैठा होगा। निकालकर दे देगा। मंगल वाले दिन दस बजे तक वहीं बैठकर ग्राहकों का इन्तज़ार करता है।'

उसने उसकी बात का जवाब न देकर कहा 'अच्छा, चार और बाँध दो। वैसे ही गरमा-गरम।'

पानवाले ने जल्दी-जल्दी चार पान घसीट दिये। उसने पानों को उलट-पुलटकर देखा और बोला 'वैसे नहीं लगे।'

'किसी लड़की को खिलाकर मज़ा देखो। पीछा छुड़ाते नहीं बनेगा। एक-एक पाँच-पाँच रुपये का है।'

उसके मुड़ते ही पानवाले ने रोज़नामचा उठाया, खोलकर देखा, फिर रख दिया।

●

कृष्णा मेडिकल स्टोर के पास उसने पैसे निकालकर गिने। रायज़ादा वहाँ नहीं था। उसे वहाँ चक्कर काटना अच्छा नहीं लगा। आगे बढ़ गया। वह कहीं बैठकर रायज़ादा का इन्तज़ार करना चाहता था। लेकिन बैठकर इन्तज़ार करने के लिए जगह नहीं थी। इसीलिए उसे चलते रहना पड़ा।

अगर रज्जु नहीं पहुँचा होगा तो वह सो गई होगी। यह स्वयं भी इस बात से सहमत था, सो जाना भी मोनोट्नी को खत्म करता है, बशर्ते आदमी अकेला हो। उसकी पत्नी के संदर्भ में यह शर्त पूरी हो सकती थी। यह बात दूसरी है रज्जु आ गया हो और वे लोग बातें करने लगे हों। अगर वह सो गई होगी तो उसे उठाना मुश्किल होगा। सोने पर उसका कई बार फ्रीशा हो जाता है। लेकिन वह ऐसा नहीं

करेगी ।

रज्जु आयेगा भी तो बात ही करेगा । जिस लड़की का पानवाला ज़िक्र कर रहा था, उसके साथ वह स्वयं भी शुरू में वह बातें ही किया करता था । शुरू की बातें कोई मायने नहीं रखतीं । रज्जु उसकी पत्नी से बात भी क्या कर सकता है । विवाहित लड़कियों से बात करने में कोई स्कोप नहीं रहता । वह लड़की अविवाहित थी तो भी उसका बाप बीच में बना रहता था । औरतों के साथ बात करने में यही परेशानी रहती है, कभी बाप कभी मियाँ, कोई-न-कोई बना ही रहता है । इस तरह की मौजूदगी थोड़ी परेशानी पैदा कर देती है । सब काम जल्दी-जल्दी करने पड़ते हैं ।

उनके साथ ऐसी कोई बात नहीं होगी । ज़्यादा इतमीनान से बात कर सकेंगे । रज्जु उतना डैशिंग नहीं । वह बात-पर-बात करता चला जायेगा । वह ज़्यादा लम्बी बातों और खामोशी दोनों से ही ऊबती है । वह ज़रूर ऊबने लगेगी । कहीं उबास दिया तो भाई का नशा काफ़ूर हो जायेगा । मर्द के साथ हमेशा ऐसा होता है । औरत का उबासना आदमी को कहीं का नहीं छोड़ता ।

वह काफ़ी दूर निकल आया था । पान उसकी मुट्ठी में दबे थे । जेब में रखने से शर्ट खराब हो सकती थी । उसे पानेवाले की बात पर हँसी आ गई । अगर वैसा ही फ़ुलपावर का पान रज्जु ने उसकी पत्नी को खिला दिया होगा । वह ज़रूर खा जायेगी । इससे पहले भी रज्जु पान कई बार ले गया है और खिलाया है । वह चबाकर खाती है और थूक देती है । कभी कोई असर नहीं हुआ । वह इस बात पर फिर हँस दिया । अगर उत्तेजित होना होता है तो उसके लिए पान-वान की ज़रूरत नहीं होती ।

वह खुद कम बात करता है । इसी वजह से वह ठंडी पड़ जाती है । उसके साथ वह दो-चार बार ही उत्तेजित हुई है । बातों का भी बहुत बड़ा हिस्सा होता है । रज्जु ज़्यादा-से-ज़्यादा ...

हाथ में ले सकता है। उसके मन में भय बना रहता है, कहीं नाराज़ न हो जाये। इस तरह का भय कुछ करने नहीं देता। जब तक आदमी खतरा उठाने को मूल्य नहीं मानता। उसे कुछ मिलता-मिलाता नहीं। नये लड़कों का यही हाल है। इन्तजार में बैठे रहते हैं टपके तो वे गुप लें।

लौटने पर रायज़ादा कृष्णा मैडिकल स्टोर के बाहर ही मिला। वह अपनी दुकान की तरफ़ जा रहा था। उसके चेहरे पर चौकन्नेपन के साथ-साथ तेज़ी भी थी। उसे देखकर वह ठिठक गया और बोला 'आपको भी चाहिए ?'

'वन क्वॉटर दे सकेंगे ?'

'दे देंगे।'

'कितना होगा ?'

'दो ज़्यादा, मंगल है न। पूरी खोलनी पड़ेगी।'

'ठीक है।'

उसने मुट्ठी-की-मुट्ठी उसकी हथेली पर खोल दी। उसने नजर से उन्हें गिना और हँसकर बोला 'इसके अलावा दो उबले अंडे भी हैं। वे तुम्हें दोस्ती में दे दूँगा।'

'हाँ, मैं यही सोच रहा था, सब तो आपको दे दिये। साथ में खाऊँगा क्या ?'

'मैं समझ गया था, समझ गया था…!' वह हँसता हुआ पीछे की तरफ़ से दुकान में घुस गया।

वह दुकान के बाहर बरान्डे में रह गया था। दोनों हाथ बगलों में दबा लिये थे। बायीं मुट्ठी पान दबा होने से दाहिनी बगल फूल आई थी।

उसे उस लड़की की याद आई। हालाँकि उसकी शादी हो गई है लेकिन उसकी मूल प्रवृत्ति में [illegible] अन्तर नहीं हुआ होगा। जल्दी उत्तेजित होती होगी। प्रेम-काल में उसे दो-चार घूँट पिला दी थी। वह

काफ़ी मज़े में आ गई थी। उसने कोई एतराज़ नहीं किया था। बल्कि बड़ी मज़ेदार बात कही थी—अपने शरीर के बारे में मैं खुदमुख्तार हूँ, किसी भी हिस्से का कुछ भी इस्तेमाल कर सकती हूँ। उस दिन मज़ा भी देखने में नहीं आया।'

लेकिन पत्नी को केवल उफान-सा आकर रह गया था। आँखें ज़रूर चमकने लगी थीं, लेकिन वह टुकुर-टुकुर उसकी तरफ़ देखती रही थी और फिर उसी के ऊपर लेट गई थी। उसे बड़ा गिलगिला लगा था। उसके साथ लिपटकर सो जाने के सिवाय कोई और रास्ता नहीं बचा था।

●

रायज़ादा ने कागज़ में लिपटी हुई बोतल उसे पकड़ा दी। उसने कागज़ हटाकर देखा—चौथाई से थोड़ी कम थी। रायज़ादा अपने-ही-आप हँसकर बोला 'कबाब रखा था। यह भी ले जाओ मज़ा देगा।' उसे कबाब पाना अच्छा लगा। उसके दोनों हाथ भर गये थे। इसलिए शीशी उसे जेब में सरका लेनी पड़ी। अंडे और कबाब दूसरे हाथ में पकड़ लिये।

रायज़ादा ने पूछा 'कहाँ पीओगे ? चाहो तो कहीं इन्तज़ाम कर दूँ।'

'आज अकेले ही मूड है।'

'ठीक है, बहुत ज़ोर की किक देगी। नायाब चीज़ है, एकदम सोलह साल की लड़की की तरह। आधी थी, चौथाई तुम्हें दे दी, बाकी मैं पी गया। किक दे गई साली। अब जा रहा हूँ। चाहो तो इन्तज़ाम तुम्हारा भी कर सकता हूँ।' वह कुछ नहीं बोला सिर्फ हँस दिया।

वह जेब में बोतल महसूस कर रहा था। हल्का-सा पसीना था। उसका ख़याल था वह एक ऐसी जगह बैठे जहाँ वह अकेला बना रहे। पार्क के बाहर पेड़ की दाईं तरफ़ बैंच पर बैठ गया। बैंच काफ़ी ठंडी थी। पतलून की तली पर भीगापन-सा लगा। उसने जेब से बोतल निकाल कर रोशनी में देखी। बोतल की रंगीनी के कारण वह आरपार नहीं

देख सका। चुपचाप बराबर में रखा अंडा तोड़ने लगा। वह खाते हुए बराबर सोचता रहा, कहीं किक न दे जाये और वह वहीं लौट जाये। रायज़ादा शायद उतना ईमानदार नहीं है।

रज्जु शायद अभी भी बैठा हो। हो सकता है पत्नी उसकी बातों से ऊबकर लेट गई हो। पलंग पर लेटी हुई बिलकुल खपटा-सी लगती है। उसकी एक बड़ी अजीब आदत है वह हाथ पकड़कर अपने कूल्हों पर रख लेती है। कई बार पूछ चुकी है कुछ इम्प्रूव्ड लगे। रज्जु से शायद ऐसा न कहे। वह कहा करती है विदेशों में मोटे हिप्स को ज़्यादा तरजीह दी जाती है। यह उसने रज्जु से ही सुना है। वह विदेशी पत्रिकाएँ पढ़ता रहता है। अगर वह पूछेगी भी तो भी रज्जु तारीफ़ ही करेगा। ग़लत तारीफ़ काफ़ी दिक़्क़त पैदा करती है।

उसे दूसरा अंडा अच्छा नहीं लगा। बिना नमक के बकबकापन महसूस हुआ। उसने बोतल मुँह से लगा ली। काफ़ी सर्द थी। मफ़लर का ध्यान आ गया। हालाँकि ध्यान आना एकदम बेतुका था। बोतल के मुँह पर मफ़लर लगाकर नहीं पिया जा सकता था। शायद कान ढँके जा सकते थे। उसकी पत्नी के कान ढँके नहीं रहते। रज्जु भी इस बात पर काफ़ी हँसता है। रज्जु ने कहा था औरतों को कान पर सर्दी नहीं लगती। इस पर वह बहुत हँसी थी। उसे उस बार काफ़ी आश्चर्य हुआ था। आश्चर्य की बात भी थी। लेकिन वह काफ़ी समय तक नहीं समझ पाया उसका संकेत किधर था। उसे कैसे पता औरतों को कहाँ ठंड लगती है।

दो-चार घूँट पी लेने पर भी उसे तल्खी महसूस नहीं हुई। मुँह का स्वाद वैसा ही सीठा-सीठा बना रहा। ऐसा स्वाद ऊब का होता है। यह वह बर्दाश्त नहीं करना चाहता था। एक साँस में वह कुल पी गया। कोई अन्तर न पड़ने के कारण वह उत्तेजित हो गया और बोतल फेंक दी। अंडे के छिलकों को उसने बुरी तरह कुचल दिया।

यह बात एकदम ग़लत थी कि वह [illegible] उत्तेजित हो जायेगी।

हो भी जायेगी तो रज्जु ज़्यादा देर नहीं रुक सकेगा। उसके शरीर में दम ज़रूर है लेकिन आदमी को पहली बार दहशत लगती है। उसी दहशत की वजह से वह कुछ नहीं कर पाता।

उसने हाथ का पान मुँह में रखकर उसे चबाया, दो-चार-बार में ही थूक दिया। पान जैसी चीज़ से उत्तेजित होना नामर्दी है। पान खाकर उत्तेजित रज्जु हो सकता है। अगर वह पान खाकर उत्तेजित हुआ होगा तो उस पर कुछ नहीं होगा।

उसकी पत्नी के उत्तेजित होने का तरीक़ा बिलकुल दूसरा है। स्टेजेज़ में उत्तेजित होती है। आँखों से बढ़नी शुरू होती है। कई जगह टटोलना पड़ता है। ऐसी बात औरत अपने-आप नहीं बताती। यह वही जानता है जो जानता रहता है।

●

सड़क पर आकर उसे उतनी सर्दी नहीं लगी, बल्कि कानों पर गरमाहट महसूस होने लगी। सड़क ख़ाली थी। वह ख़ालीपन उसे अपने साथ बने रहने में काफ़ी सहायता कर रहा था। सड़क के दूसरी तरफ़ गुज़रते हुए लोगों की हँसी ने उसे उखाड़ दिया। लोगों को घर से हँसकर चलना चाहिए या घर जाकर हँसना चाहिए। नाराज़गी के कारण उसके क़दम कुछ तेज़ हो गये। इस सबके बावजूद काफ़ी देर तक उन लोगों की हँसने की आवाज़ सुनाई पड़ती रही। अन्ततः वह खामोश हो गया और चाल ढीली कर दी।

पेशाब के कारण उसे चुनचुनाहट महसूस हो रही थी। रुककर एक चहारदीवारी के पास खड़े हो जाना पड़ा। उसका ख़याल था वह अपने घर के पास पहुँच गया है। रज्जु और पत्नी उसे एक साथ मिल सकेंगे। पत्नी ज़रूर सो गई होगी या सोने की तैयारी में होगी। हो सकता है रज्जु ने उसकी ग़ैरहाज़री में उसी के कपड़े पहन लिये हों और वह भी सोने की तैयारी में हो। वह कौन से कपड़े पहन सकता है? हो सकता है न भी पहने। ऐसे में पहनने की कोई बन्दिश नहीं होती। वह बिना

पेशाब किये लौट पड़ा। चुनचुनाहट के बारे में वह ज़्यादा सचेत नहीं रहा था।

उसे ख़याल हुआ रज्जु और पत्नी सड़क पर टहल रहे हैं। महिला का पिछला हिस्सा उसे लगभग सपाट लगा। चाल में भी वैसी ही लहक नज़र आई। आदमी की लंबाई रज्जु जैसी ही थी। थोड़ी दूर पीछे चलकर वह रुक गया। पीछे जाना निहायत बेवकूफ़ी है। वह लौट पड़ा और पीछे वाले चौराहे पर जाकर खड़ा हो गया।

पत्नी का शरीर काफ़ी गोरा है। रज्जु के शरीर के हिस्से स्याही लिये हुए हैं। अगर वह उसके शरीर के किसी हिस्से पर भी हाथ रखेगा तो कितना अन्तर मालूम पड़ेगा। ऐसे वक्त ज़रा-ज़रा-सी बातों की ओर कोई ध्यान नहीं देता। यह सब बेतुकापन और बकवास है।

अपनी प्रेमिका लड़की का ख़याल आया। उसका घर यहाँ से काफ़ी नज़दीक है। वह पुष्ट देह वाली मज़ेदार लड़की है। उसका पति निहायत बेवकूफ़ है। उस लड़की को मारे डाल रहा है। उसे यहाँ नहीं होना चाहिए था। यह उसका पीहर है। इस तरह का व्यवहार ज़बरदस्ती और निकम्मेपन की हद में आता है।

उस लड़की का घर दूर से दिख रहा था। खिड़कियाँ बन्द थीं और आँगन में बत्ती जल रही थीं। उसे अपने घर का ख़याल आया। घर में खिड़कियाँ और रोशनदान कम हैं। हो सकता है इस समय वे भी बन्द हों।

रिश्ता

मनकी ने गैरिज का दरवाज़ा खोला। टीन का था। काफ़ी आवाज़ हुई। दाहिने हाथ कूल्हा था। अधबुझे कोयले थे। चूल्हे के चारों ओर एक छोटा-सा बुझता हुआ 'प्रभा-मण्डल' बना था। अन्दर आकर मनकी ने कुण्डी चढ़ा ली। सामने की ओर देखते हुए बोली 'सो गया रे ?'

'ना ऽऽ हीं तो !' लेटा हुआ लड़का उठ बैठा।

'रोटी बना ली ?'

लड़के ने अलसाये स्वर में कहा 'बना ऽऽ ली।' आगे बढ़ते हुए मनकी का पाँव पतीली से टकरा गया। तुरन्त बोली 'तुझे कब अकल आयेगी रे, पतीली बीच ही में डाल रखी है!'

'दीया जला दूँ, माँ ?'

'जला देना, पूछ क्या रहा है !'

मनकी भच्च से ज़मीन पर बैठ गई।

लड़के ने दीया जला दिया। कमरा चौड़ा हो गया। मनकी ने बेटे की तरफ़ देखा। लम्बा बाँस-सा, पाहुँचा फटा जाँघिया पहने खड़ा था। मनकी ने उस पर नज़र डाली, मुस्कराकर बोली 'कम्बख़त, इसे ढँक तो लिया कर। बोतल-सी लटकाये घूमता रहता है।' उसने ज़मीन में पड़ी अपनी माँ की काली कीचट धोती उठाकर लपेट ली, बोला 'बस!'

मनकी हँस दी 'पूरा मरद हो गया। यह भी माँ को ही बताना पड़ेगा, कहाँ ढकना चाहिये, कहाँ उघाड़ना!'

लड़के ने धीरे से पूछा 'रोटी दे दूँ?'

'यह भी कोई पूछने की बात है, आँतें सुकड़ गईं। ला जल्दी।'

मैले कपड़े में लिपटी रोटियाँ रकाबी में रखकर माँ के सामने सरका दीं। ठोकर लग जाने से तिरछी पतीली भी सीधी करके सामने रख दी। माँ ने उस हल्की-सी रोशनी में पतीली के अन्दर झाँककर देखना चाहा। धीरे से बोली 'हल्दी कम डा ऽ ऽ ली दीखे!'

लड़का चुपचाप बैठा रहा। मनकी ने अपने पल्ले से मिठाई की दो-तीन डलियाँ निकालकर रोटियों पर रख लीं। रोटी को पीपी बनाकर कुतर-कुतरकर मिठाई के साथ खाती रही। कभी-कभी दाल से भी लगा लेती थी। लड़का बराबर उसके मुँह ओर देख रहा था। थोड़ी देर बाद बोला 'माँ, तूने दाल तो खाई नहीं। मैंने तो दाल तेरे मारे कम ली थी।'

मुँह का टुकड़ा निगलकर मनकी बोली 'क्या खाऊँ, इसमें हल्दी तक तो डाली नहीं। मुझे घास-पात अच्छा नहीं लगता। वो तो डाक्टराइन के नौकर ने दो लड्डू दे दिये थे, काम चल गया।' बचा हुआ लड्डू मुँह में रखते समय क्षण-भर को झिझकी, फिर रख गई। लोटे से गटर-गटर पानी पीकर हँसते हुए कहा 'डाक्टराइन बाहर गई है, वो साला खूब खिलाता-पिलाता है।'

उठते समय ज़ोर से डकार ली। बन्द दरवाज़े के पास बैठकर हाथ धोये। बैठे-बैठे वहीं पेशाब कर दिया। लड़का लेट गया था। मनकी ने

अपनी धोती निकालकर खूँटी पर टाँग दी। फटा हुआ-सा ढीला-ढाला ब्लाउज़ भी उतारकर धोती के ऊपर रख दिया। कुछ देर तक दोनों हाथों से अपनी छाती मलती रही। बाद में कपड़ा ओढ़कर लेट गई।

'अरे गिरधारी, दीया तो बुझाया ही नहीं। ज़रा बुझा दे।'

गिरधारी कुछ देर बाद उठा, फूंक मारकर दीया बुझा दिया। मनकी ने तुरन्त टोका 'अरे कम्बख्त फूंक मारकर दीया बुझाते हैं कहीं। कुछ तो अकल सीख ले, धक्के खाता फिरेगा।' गिरधारी बिना कुछ जवाब दिये चुपचाप जाकर लेट गया। चूल्हे के कोयले बुझने लगे थे। सामने बिजली का खंभा था। उसकी रोशनी किवाड़ों के नीचे से होकर अन्दर पहुँच रही थी। जिस स्थान पर मनकी ने हाथ धोकर पेशाब किया था अभी भी गीला था।

'माँ, क्या हुआ ?' गिरधारी ने हठात् पूछा। मनकी चौंक-सी गई, बोली 'कहो का ?'

'उसी रामतीरथ का ?'

मनकी हँस दी 'अरे उसका क्या होना था ! मैं ही तैयार नहीं। कहता है तेरे इतने बड़े लड़के को नहीं रखूँगा। गिरधारी चुप हो गया। कुछ देर बाद मनकी ने ही कहा 'मैंने तो कह दिया, तो जा मुझे और बहुत !'

'अब तू उसके साथ नहीं रहेगी ?' गिरधारी के स्वर में उत्सुकता थी।

'जायेगा कहाँ हरामी, फिर आयेगा।' मनकी ज़ोर-ज़ोर हँसने लगी। उजाला मिले अँधेरे में मनकी का हँसना टिकता-सा लगा। हँस-हँसाकर मनकी चुप हो गई।

गिरधारी ने फिर धीरे से पूछा 'कल तू चाँदी की तगड़ी का ज़िक्र कर रही थी न ?'

'रखेगा तो देगा। सवा सौ कमाता है हर महीने। कल को मर गया, अपना धन तो छाती-तले रहेगा। तेरा बाप ... बरतन मलती

घूम रही हूँ। सब खा-पीकर बराबर कर देता था।' हँसकर बोली 'चाँदी की तगड़ी तो बुड्ढा भी देने को तैयार है। पर रामतीरथ जवान है।' मनकी की हँसी रोके नहीं रुक रही थी। उसका इस तरह हँसना औचकता उत्पन्न कर रहा था।

'कौन बुड्ढा ?'

मनकी का हँसना फिर चालू हो गया। बड़ी मुश्किल से बता पाई 'अरे वही डाक्टराइन का नौकर बारू। कबर में पैर लटका रखे हैं। दुबारा विधवा करने के चक्कर में है, हरामी। उससे तो मैंने सोने की तगड़ी माँगी है।'

'दे दे तो अच्छा है।' गिरधारी के कहने में अर्थहीनता अधिक थी।

'बड़ा आया देने वाला ! पाँच तोले की भी बनवानी पड़ गई तो लिल्लाम हो जायेगा साला।' गिरधारी चुप हो गया। मनकी थोड़ी देर तो दाँत फाड़ती रही फिर वह भी चुप हो गई। दूसरी तरफ़ करवट बदली तो गिरधारी ने पूछा 'माँ, तू सो गई ?'

'नहीं।'

कुछ ठहरकर गिरधारी ने अपनी बात कही, 'वो रामतीरथ मुझे नहीं रखना चाहता ?'

मनकी उसकी ओर पलट गई। अँधेरे में अपने बेटे की शक्ल देखने की कोशिश की। वह चुपचाप लेटा था। समझाने के ढंग से बोली 'उस ससुरे के भी तो दो बच्चे हैं। कहता है तेरा बेटा इतना बड़ा तो हो गया कब तक उसकी सँभाल करती रहेगी। तू मर जायेगी तब कौन करने आयेगा ?'

गिरधारी ने धीरे से हूँ करके कहा 'तो माँ तू चली जा।'

मनकी काफ़ी देर तक ख़ामोश लेटी रही। फिर धीरे से पुकारा 'गिरधारी, ठंड लग रही होगी, पास को सरक आ बेटा !'

गिरधारी खिसक आया। नज़दीक खींचकर पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा 'उसके घर में बैठ जाने से तुझे कपड़ा-मिल में नौकरी मिल

जायेगी । ब्याह-काज भी हो जायेगा । मुझ कलमुँही के साथ तुझे कौन पूछेगा !' कुछ रुककर कहा 'कल दुपहरी में उससे तय कर लूँगी । बारू ने रोटी पै बुलाया है । रामतीरथ भी आयेगा । तू भी डाक्टराइन के घर आ जाना, वहीं खाना !'

गिरधारी ने भयभीत स्वर में पूछा 'डाक्टराइन ?'

'अरे वो तो चार-पाँच रोज़ से दौरे पर गई है ।'

गिरधारी पूछते हुए हिचक रहा था 'बुड्ढे ने रामतीरथ को भी बुलाया है ।'

'रामतीरथ बुड्ढे का ही दोस्त तो है । वह कहता है या तो मेरे घर रह या रामतीरथ के । दोनों की मिलीभगत है ।' मनकी हँसने लगी ।

गिरधारी सरककर अपनी जगह चला गया । मनकी ने करवट बदल ली ।

थोड़ी देर बाद उसकी नाक बजने लगी । गिरधारी चुपचाप उठा । दरवाज़े की कुंडी खोली । कुंडी टीन के किवाड़ से टकराकर टन्न से बोली । मनकी ने नींद में ही पूछा 'क्या है ?'

'कुछ नहीं, पिसाब करने जा रहा था ।'

'यहीं बठ के मूत ले न, बाहर कहाँ जायेगा ।'

गिरधारी ने कहा 'अच्छा ।' पहले वहीं बैठने को हुआ, फिर बाहर चला गया । खड़े होकर पेशाब करते समय वह एकटक आसमान की तरफ़ देख रहा था । बाद में भी कुछ देर वहीं खड़ा रहा । लौटते समय कुण्डी खड़कने पर भी मनकी नहीं जागी ।

●

गिरधारी डाक्टराइन के घर पहुँचा । घर चारों ओर से बन्द था । सब तरफ़ चक्कर लगाकर वह पिछले दरवाज़े के पास बैठ गया । अन्दर से मिली-जुली आवाज़ें आ रही थीं । उसने कान लगाकर सुनना चाहा । [illegible] की आवाज़ भी 'हट, सारा मज़ा लूटे ले रहा है—पहले करार कर !'

गिरधारी ने कान के बजाये आँख दरार में लगा दी। माँ नंगी लेटी थी। एक बार आँख हटाकर इधर-उधर देखा। दुबारा फिर अन्दर झाँकने लगा। कुछ देर तक गिरधारी का शरीर थरथराता रहा। एक हाथ टाँगों के बीच देकर वह उकड़ू बैठ गया।

रामतीरथ मनकी से चिपटा था। बूढ़ा खड़ा उन दोनों को गौर से देख रहा था। एकाएक मनकी ने रामतीरथ को ढकेल दिया। उसका कहना जारी था—'सरियत मंजूर हो तो आगे बढ़।'

लेटी हुई मनकी आधी उठ गई। मुस्कराकर बोली 'दोनों बातें होंगी।—तगड़ी तू अकेला दे या···' बारू की तरफ़ देखकर मुस्कराई 'तुम दोनों मिलकर, इस बेचारे बारू को क्यों हलाल करता है! इसके बस का क्या है? लुगाई तो तेरी ही रहूँगी।'

बारू एक झटके में सीधा होकर झपटता हुआ आया और नामरज़ाद नंगा हो गया 'क्या कहती है? मेरे बस का कुछ नहीं ले, देख!' वह मनकी से चिपट गया। बुरी तरह हाँफने लगा। मनकी बारू के सिर पर हाथ फेर-फेरकर हँसने लगी। गिरधारी के होंठ भी हल्के से फैल गये। रामतीरथ खड़ा था। नंगेपन ने उसे एकदम बदल दिया था। रामतीरथ ने बारू को हटाना चाहा। उसने मनकी को बच्चे की तरह कसकर पकड़ लिया। एक ज़ोर के झटके के साथ बारू दूसरी तरफ़ लुढ़क गया। ज़मीन पर गिरने से बारू की साँस उखड़ गई।

रामतीरथ मनकी से चिपटने की कोशिश कर रहा था। मनकी ने एक के ऊपर दूसरी टाँग रखकर कस ली।

मनकी ने उसी स्थिति में लेटे-लेटे कहा 'पहले बात तय कर। मुझे दूसरा आदमी मिल रहा है। डेढ़ सेर की तगड़ी देगा। तेरे से प्यार मोहब्बत है इसीलिए सेर-भर की माँग रही हूँ।' हँसकर बोली, 'मेरी बकरी को तो खून चाहिये। तू नहीं तेरा भाई-बन्द सही। मैं डाक्टराइन नहीं, दबाकर रखूँ।'

रामतीरथ उसकी बातों की ओर बिलकुल ध्यान नहीं दे रहा था।

घुटनों के बल बैठकर उसकी टाँगें अलग करने का प्रयत्न कर रहा था। कभी-कभी आँखों में खुशामद का भाव लाकर मनकी की ओर देख लेता था। तनाव धीरे-धीरे बढ़ रहा था। बारू उठकर खड़ा हो गया। उसका नंगापन उन दोनों के नंगेपन से बहुत भिन्न था।

रामतीरथ के काफ़ी ज़ोर-आज़मायश कर लेने पर मनकी हँस दी 'तूने क्या मुझे सहरी समझ रखा है? यही दो टाँगे हैं—ताला है न चाबी। बता, तैयार है ?' बारू उसी नंगी हालत में उन दोनों के पास आकर खड़ा हो गया। झुककर कुछ देखने लगा। रामतीरथ ने कहा 'तू जा यहाँ से। तेरे किये धरे तो कुछ हुआ नहीं।'

बारू बिगड़कर बोला 'साले नीच, उल्लू-खाड़ा मचा रखा है। तू तो जवान है, तेरे से ही क्या बाल टेढ़ा हो गया। निकलो यहाँ से नहीं तो मैं दरवाज़ा खोलता हूँ।' बारू एक-एक शब्द बड़ी मुश्किल से कह पा रहा था। धोती लपेटते हुए भी बकता जा रहा था 'किसी का तो कुछ बिगड़ेगा नहीं। मेरी नौकरी चली जायेगी। ये साली, हरामज़ादी, छिनाल!' बूढ़े के जबड़े कस गये।

मनकी ने बारू की तरफ़ देखकर झटके के साथ कहा 'चुप्प कर, बके जा रहा है।' फिर रामतीरथ से बोली 'जल्दी बोल, गिरधारी आता होगा। मैं कपड़े पहनूँ।' रामतीरथ के हाथ मनकी की जाँघ पर रखे-रखे ढीले पड़ गये थे। आँखें बुझने लगी थीं। वह ठंडा होता जा रहा था।

उसने धीरे से कहा 'गिरधारी को रख लूंगा।' गिरधारी दूसरी तरफ देखने लगा।

मनकी ने तुरन्त पूछा 'और तगड़ी ?'

रामतीरथ ने रुआँसा होकर कहा, 'ज़ालिम, कुछ तो सोच। छोटे-छोटे बच्चे हैं। घरवाली मरी थी उसी का कर्ज़ा नहीं उतरा।' रामतीरथ का शरीर लटकने लगा था।

'तू जान!' मनकी उठकर बैठ गई। उसका मुँह रामतीरथ के मुँह के पास आ गया। रामतीरथ ने एक बार उसकी ओर देखा, फिर

वैठी हुई मनकी के ऊपरी भाग कर दोनों बाँहों में कस लिया। मनकी ने पीठ पीछे टिके दोनों हाथों से रामतीरथ को पीछे ढकेलते हुए कहा 'मुफ़्ती-मुफ़्ती इज्ज़त लेना चाहता है। मेरा बच्चा नहीं, तेरे ही बच्चे हैं। हठ परे।'

रामतीरथ ने ज़ोर-ज़बरदस्ती करनी चाही। मनकी तुरन्त बोली, 'हटता है या शोर मचाऊँ ! मेरा बच्चा कमअकला है तो उसे जहर दे दूँ। उसके आगे-पीछे भी न सोचूँ ?'

गिरधारी बन्द दरवाज़े के अन्दर घुसा जा रहा था। उसका चेहरा खिच गया था। बराबर वाले घर की कुण्डी खुलने की आवाज़ सुनकर गिरधारी सकपका गया। दरार पर से नज़र हटाकर इधर-उधर देखने लगा। अपने-आपको एक कोने में इकट्ठा कर लिया। घर से एक महिला निकल रही थी। गिरधारी को कोने में सिकुड़ा देखकर पास चली आई। बिल्कुल सिर पर खड़े होकर पूछा, 'यहाँ क्यों बैठा है ?'

गिरधारी ने हकलाते हुए कहा 'मेरी माँ अन्दर है।'

'कौन माँ !'

'यहाँ बरतन माँजती है।'

'मनकी ?'

'जी।'

महिला नाराज़ हो गई 'तो यहाँ से क्या ताक-झाँक कर रहा है, दरवाज़ा क्यों नहीं खुलवाता ?' वह डरा हुआ-सा उसी तरह बैठा रहा।

महिला फिर बोली 'अरे बैठा क्या है, दरवाज़ा खटखटा। डाक्टर गई हुई हैं—घर में चोरी हो गई तो कौन ज़िम्मेदार होगा। वो बूढ़ा कहाँ गया ?'

गिरधारी ने चुप रहकर धीरे से कहा, 'अन्दर।' उसकी नज़रें ज़मीन में गड़ी हुई थीं। उस महिला को गुस्सा आ गया 'तू पागल है क्या रे, । चोरों की तरह यहाँ क्यों बैठा है ?'

उसी घर से एक आदमी और निकल आया। उसने वहीं से उस महिला को पुकारा 'चलो जी !' वह महिला उस आदमी के साथ चली गई। महिला के चले जाने के कुछ देर बाद तक वह उसी तरह भयभीत इधर-उधर देखता रहा। उस दरार पर फिर आँख लगाकर झाँका। बूढ़ा उन दोनों के ऊपर झुका हुआ था। अपने शरीर को झटका दे-देकर हुमक रहा था।

एकाएक बूढ़ा चिल्लाया 'निकलो यहाँ से, बदमासी फैला रखी है। बेसरम कहीं के !' रामतीरथ और मनकी ने जवाब नहीं दिया। बुड्ढे ने झुककर गौर से देखा। ज़ोर से चिल्लाया 'मैं दरवाज़ा खोलता हूँ।' वह मुँह से कह रहा था।

गिरधारी दरवाज़े से हट कर दूसरी ओर खड़ा हो गया। उसका चेहरा बहुत अधिक धूप में रहने के बाद थका-थका-सा हो गया था। उसके वहाँ से हटने के दो मिनट बाद दरवाज़ा खुल गया। मनकी धोती ठीक कर रही थी।

गिरधारी को दरवाज़े के सामने खड़े देखकर बारू ने कहा 'देखी अपनी माँ की करतूत।'

मनकी नाराज़ हो गई 'सरम नहीं बुड्ढे ! क्या करतूत दिखाता है मां की ? हरामज़ादा !' गिरधारी की तरफ़ देखकर पूछा 'कब आया रे तू ?'

'अभी।' गिरधारी के चेहरे पर टूटेपन का भाव था।

'उस चुड़ैल से जबान क्यों लड़ा रहा था ? साली पागल है।' रामतीरथ बाहर निकल आया। गिरधारी को गौर से देखने लगा। गिरधारी ने उन तीनों में से किसी की ओर नहीं देखा।

मनकी ने झिड़कते हुए कहा 'चल रोटी खा ! फिर बरतनों पर हाथ फेरना, सुबह सेथक गई हूँ।'

बारू तुरन्त बोला 'यहाँ नहीं है रोटी-बोटी बदमासों के वास्ते। सरम ना लिहाज़ !'

रामतीरथ बीच में बोला 'काहे टाँय-टाँय लगाई है ? इसमें किसी का क्या दोस ! तुझे मना तो नहीं किया था ।'

इस बार गिरधारी ने बारी-बारी से तीनों की तरफ़ देखा । माँ का चेहरा विकृत हो गया था । बारू की तरफ़ वह उसी तरह देख रही थी जैसे कुछ देर पहले गिरधारी की तरफ़ देखा था । मनकी ने गिरधारी से कहा 'चल अन्दर । यहाँ क्या टुकुर-टुकुर मुँह देख रहा है !'

गिरधारी अन्दर गया तो रामतीरथ ने कहा 'आज तूने ठौर मार डाला, अब चख़-चख़ कर रहा है ।'

मनकी के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट आ गई 'मैं नहीं मरी !'

बारू सनसना उठा 'मेरी तरफ़ से चाहे जो मरे, मेरे चालीस रुपये रख दो । रुपये चट करते बखत नहीं देखा था मैं बुड्ढा हूँ ।' बारू कमर सीधी करके मनकी की तरफ़ लपका । मनकी खिस्स से हँस दी । वह और नाराज़ हो गया । बुलन्द आवाज़ में बोला 'हँसती क्या है तेरा सौदा चाहे जैसा तय हो गया हो बिना चालीस धरवाये जाने नहीं दूँगा । अपने इस धग्गड़ से कह । तुझे तीन पाव की तगड़ी देगा मेरे चालीस नहीं दे सकता ।' बारू बार-बार नीचे के लटकते होंठ को ऊपर वाले होंठ से सँभालता जा रहा था ।

मनकी हँसकर बोली 'अकल के दुसमन शोर क्यों मचाता है ! तेरी ही नौकरी जायेगी ? वो तो बेचारी डाक्टराइन रखे हुए हैं, औरों के लिए तो तू कौड़ी को भी भारी ।'

गिरधारी अन्दर के आँगन में चुपचाप खड़ा इन्हीं लोगों की ओर देख रहा था । बारू की साँस फिर उखड़ने लगी । वह अन्दर चला गया । चुपचाप एक कोने में बैठकर साँस जमाने का प्रयत्न करने लगा । मनकी रसोई से थाली लगा लाई । गिरधारी के सामने थाली में खाना आता देखकर बारू चिल्लाकर कहा 'इस साले पगलैट को थाली में खाना देगी । हाथ पर दे, हाथ पर ।'

मनकी ने उसकी बात की ओर ध्यान नहीं दिया । अन्दर चली

गई। गिरधारी ने बूढ़े पर एक नज़र डाली और खाना शुरू कर दिया। मनकी ने एक कटोरी में बची-खुची खीर लाकर बूढ़े के हाथ पर रख दी। खीर लेते हुए बूढ़े ने मुस्कराकर रामतीरथ की ओर देखा। अपने वास्ते वह चावलों का भिगोना ले आई। उसमें कुछ चावल बच गये थे। बची-खुची दाल, सब्ज़ी सब एक साथ भिगोने में उलट ली और खाने लगी। रामतीरथ ने हँसते हुए कहा 'सबको देगी, मैं ही रह जाऊँगा तेरे राज में।'

मनकी हँस दी, 'तुम क्यों रह जाओगे।' फैली टाँगों के बीच रखे भिगोने की तरफ़ इशारा करके कहा 'तुम भी आ जाओ।' बूढ़ा खीर खा चुका था। हँसकर बोला 'जा, तू जा। तेरी जगह वहीं है, रामतीरथ!'

रामतीरथ हँसता रहा, जवाब नहीं दिया। उसी भगोने में वह भी खाने लगा।

गिरधारी खा चुका था और अब उन तीनों की ओर देख रहा था।

मनकी ने उसे खाली बैठे देख तुरन्त कहा, 'अरे बैठा क्या है, बरतनों पर हाथ फेर दे।'

वह बरतन इकट्ठे करने लगा।

मनकी हँसकर बोली 'देखा मेरा बेटा, कैसा राजाराम-सा है! कान हिलाना रहीं जानता।' रामतीरथ ने गिरधारी की तरफ़ देखा। गिरधारी गरदन नीची किए बरतन मल रहा था।

बारू उन दोनों के पास आकर बैठ गया। समझाते हुए कहा, 'देखो, अब तुम दोनों का मामला तय हो गया, मेरे चालीस रुपये दे दो।'

रामतीरथ ने मनकी से कहा 'बता तुझे तगड़ी दूँ, तेरा बेटा रखूँ या कर्ज़ा चुकाऊँ?

मनकी हँस दी 'तुम किसकी बातों में आते हो! मेरा क्या कसूर इस पर कुछ हुआ ही नहीं!'

बारू बिगड़ गया 'पैसा मैं दूँ, मजा और लें।'

मनकी ने बारू को झिड़क दिया 'चल हरामी, पास में कुछ है भी !'

'निकल यहाँ से नीच जात !' बारू मनकी का हाथ पकड़कर धक्का देने के लिए लपका। रामतीरथ ने भी बारू की ओर हाथ बढ़ाया। मनकी ने पहले ही उसे धकेल दिया। 'हट परे, कब्र में पैर लटका रखे हैं; औरतबाज़ी के चक्कर में घूमता है। मुँह से झाग निकलने लगते हैं।'

गिरधारी बरतन धो रहा था। रुककर उन लोगों की ओर देखने लगा। मनकी ने गिरधारी को डाँटते हुए कहा 'चल उठ यहाँ से, इस साले के साथ भलाई करो बुराई गले पड़ती है।'

'आने दे मेम साहब को ! साली जब बिमार पड़ी थी, कीड़े पड़ गये थे। मैंने ही मेम साहब से कहकर इलाज कराया था। अब हम बुराई करते हैं। आने दे, न झोंटा पकड़कर निकलवाया।'

'कर लेना जो हो। मैं नहीं कहूँगी, चालीस रुपये देकर अपनी माँ के साथ···हाँ ऽ ऽ !'

मनकी रामतीरथ का हाथ पकड़कर बाहर निकल गई। मनकी के हाथ पकड़ लेने से रामतीरथ का चेहरा गदगदायमान हो आया। वह उसके पीछे-पीछे चला गया। रामतीरथ को बाहर छोड़कर मनकी दुबारा आई। गिरधारी से बोली 'चल रे, उठ यहाँ से।' कहती हुई फिर बाहर निकल गई। गिरधारी बर्तन धोता-पोंछता रहा। बर्तनों को पूरी तरह से निपटाकर और बारू को 'काका राम-राम' कहकर बाहर निकला। मनकी और रामतीरथ चले गये थे।

गिरधारी के चले जाने पर बूढ़े ने दरवाज़ा बन्द कर लिया। दीवार से पीठ टिकाकर चुपचाप बैठ गया।

●

मनकी लौटी तो गिरधारी चूल्हे के सामने पलौथी लगाए बैठा था। वह प्यार से उसके बराबर बैठ गई।

उसकी ओर बिना देखे गिरधारी ने पूछा 'रोटी ?'

'ना ऽ ऽ हीं, भूख नहीं !' कहकर मनकी हँस दी। गिरधारी चुपचाप

बैठा रहा। थोड़ी देर बाद वहाँ से उठकर दीये के पास जा बैठा।

मनकी हँसकर बोली, 'अरे गिरधारी अच्छा हुआ आज डाक्टराइन हमारे जाने के बाद आई, नहीं तो कच्चा खा जाती। वो बुड्ढा तो गया था काम से।'

गिरधारी ने धीरे से 'हूँ ऽ ऽ' किया। मनकी ने उसकी ओर देखा; बोली, 'बुढ़ऊ ने उससे मेरी शिकायत कर दी, ये चालीस रुपसे नहीं देती। मैंने साफ़-साफ कह दिया—कैसे रुपये ?'

'माँ, तू दुपहर कहाँ चली गई थी ?'

मनकी क्षण-भर के लिए गंभीर हुई फिर हँसकर बोली 'वे बाज़ार ले गये थे।' कहकर उसने पुनः पहले वाली बात शुरू कर दी 'वो बात तो बीच ही में रह गई। मैंने उल्टे बुड्ढे की ऐसी-तैसी कर दी। सब साफ-साफ कह दिया···!'

'माँ, इस गठरी में क्या है ?'

'अरे मैं तो भूल ही गई, तेरे बाप ने कपड़े खरीदवाकर दिये हैं। मुझ पर बड़े नाराज़ थे, ऐसे सीधे लड़के को तूने ही बावला बना रखा है, फटे हुए कपड़े पहने घूमता है।' मनकी ने गिरधारी की तरफ़ देखा। गिरधारी अपना फटा हुआ जाँघिया ठीक करने में लगा था। मनकी गठरी खोलने लगी। उसमें जाँघिया, बनियाइन और कमीज़ थे।

हाथ में कपड़े उठाकर मनकी ने कहा 'देख, तेरे बाप ने कितने अच्छे कपड़े खरीदकर दिये हैं।'

गिरधारी ने कपड़ों को एक नज़र देखा, चुपचाप बैठा रहा।

'क्यों, पसन्द नहीं आये' मनकी की आवाज़ तेज़ हो गई थी।

गिरधारी ने उतनी ही धीमी आवाज़ में कहा 'ठीक तो हैं।'

'तो ले, पहनकर दिखा।'

गिरधारी पहले अपनी माँ की तरफ़देखता रहा, धीरे से बोला 'टाँगदे।'

मनकी ने कुछ बोलना चाहा पर बोली नहीं। चुपचाप उठकर चली गई। चूल्हे से कोयले निकालकर बुझाने लगी। कोयले बुझाकर बर्तन

माँजने बैठ गई। गिरधारी ने कहा 'सुबह माँज दूँगा।'

'नहीं, मैं ही हाथ फेरे देती हूँ।' रुककर बोली 'सुबह वे ताँगा लेकर आयेंगे, बखत नहीं रहेगा।'

'अच्छा ऽ ऽ।' कहकर गिरधारी उठा नहीं। कुछ देर बाद पूछा 'दे दी तगड़ी ?'

'कल देंगे।'

मनकी फिर हँसने लगी 'आज उस लड़की को खूब पिटवाया। देख रही थी मेरी बात मानते हैं या नहीं ? ज़रा-सी, पोतड़े सूखे नहीं, आँख लड़ाती है। मैंने उनसे कह दिया मेरे सामने आँख-नाक लड़ाई तो बोटी-बोटी काट दूँगी। कभी कहो सौतेली माँ है ! साली मुझसे पूछती थी हमारे घर क्यों आई ! लौंडा तो घुग्घू-सा बना बैठा रहा।'

गिरधारी लेट गया। बरतन मलने की आवाज़ आती रही। थोड़ी देर बाद उठकर जाँघियाँ सँभालता बाहर चल दिया। मनकी ने देखा कुछ बोली नहीं। पुलिया पर जाकर बैठ जाने पर मनकी ने उचककर देखा। एकदम सीधा बैठा था, खम्भे की रोशनी उसके बदन पर पड़ रही थी।

मनकी कुछ देर तक खड़ी देखती रही, फिर ज़ोर से पुकारा 'अरे गिरधारी, वहाँ क्यों बैठा है ? चल घर में आ' और बड़बड़ाती रही 'नंग-धड़ंग बैठा है सूअर, बैल का बैल हो गया।'

गिरधारी चुपचाप बैठा रहा। उसने दुबारा पुकारा। इस बार वह बिना इधर-उधर देखे उठा। सीधा घर की तरफ़ चल दिया और आकर दरवाज़े पर खड़ा हो गया। मनकी ने पूछा 'क्या हुआ, उठ कर क्यों चला गया था ?'

'वैसे ही।'

मनकी बड़बडाई 'अभी कौन गर्मी हो रही है ! इतना बड़ा हो गया, अपना भी ख़याल नहीं रख सकता।'

गिरधारी अन्दर जाकर लेट गया। मनकी ने पुनः कहा 'सो जा पड़

कर; सुबह सामान बाँधकर चलना है। वहाँ रहकर मकान-मालकिन की बेगार करनी पड़ती है। किराया नहीं लेती तो क्या ! अपना नौकर ही समझ लिया है। अपने घर में आराम से रहेंगे। मैंने डाक्टराइन को भी जवाब दे दिया। समझा न बूझा, डाँटने लगीं, जैसे मैं उसकी कंपो-टर हूँ।'

गिरधारी की ओर से किसी प्रकार का उत्तर न सुन पूछा 'सो गया ?'

'नहीं तो।'

'हाँ ना हूँ, मुर्दा-सा पड़ा है। अपने बाप के साथ ऐसा करेगा···।' बात बदलकर बोली 'उनके साथ ऐसा मत करना, मेरा तो कुछ नहीं।'

गिरधारी ने बिलकुल स्थिर भाव से पहली बात का अब जवाब दिया 'अच्छा तो है।' और करवट बदल ली।

काम-धाम निबटाकर मनकी भी लेट गई। काफ़ी देर तक दोनों के बीच खामोशी रही। मनकी ने समझा गिरधारी को नींद आ गई है। उसने दूसरी ओर करवट ले ली। गिरधारी ने आँखें खोलकर माँ की तरफ़ देखा। उसकी पीठ पूरी तरह नंगी थी। उसने हाथ बढ़ाया फिर पीछे हटा लिया।

'माँ···' गिरधारी के मुँह से एकाएक निकला। मनकी चौंक-सी गई। करवट बदलकर पूछा 'तू जगा है रे ? मैं तो समझी सो गया।'

गिरधारी चुप रहा।

'क्या बात थी, बोलता क्यों नहीं ?'

वह चुप रहा।

मनकी ने दुबारा पूछा 'अरे बोल, क्या बात थी ?'

'डाक्टराइन ने तो ब्याह नहीं किया ?' गिरधारी के पूछने पर मनकी क्षण-भर चुप रही। वह भी अपनी माँ के जवाब का इन्तजार करता रहा।

'इन लोगों का क्या ब्याह···।' कह कर मनकी भद्दी तरह हँस दी।

मनकी के हठात् हँस देने पर गिरधारी ने झुककर माँ को देखना चाहा। वह ज़ोर-ज़ोर से हँसी की आवाज़ पैदा कर रही थी। वह पुनः लेट गया।

'क्यों पूछ रहा है रे, तू करेगा उससे ब्याह ?' मनकी का हँसना फिर चालू हो गया।

'मोटर-कार में घुमाया करेगी। अब अकड़ती है। हमें भी तब सुख हो जायेगा ! सासजी-सासजी कहती घूमा करेगी।' सब-कुछ हँस-हँस-कर कहे जा रही थी। कुछ रुककर समझाने के अन्दाज़ में गिरधारी से फिर कहा 'ये लोग व्याह-व्याह में विश्वास नहीं करतीं।'

गिरधारी ने धीरे से पूछा 'माँ दरवाज़ा बन्द कर दूं ?'

मनकी हँसती-हँसती रुक गई' 'मैं किये देती हूँ।'

गिरधारी अपना जाँघिया संभालता हुआ उठा। दरवाज़ा बन्द कर आया। मनकी ने कहा 'अब सो जा, सुबह जल्दी उठना है।' गिरधारी चुपचाप लेटा रहा। थोड़ी देर बाद उसे लगा मनकी जाग रही है। उसने धीमी आवाज़ में कहा, 'सो गई, माँ ?'

'सो रही हूँ।'

'माँ, वे किस बखत आयेंगे ?'

'कौन ?'

'वे···'थोड़ा रुककर कहा 'रामतीरथ।'

'अब तू उन्हें बाबू कहा करना, समझा।'

गिरधारी ने जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर बाद मनकी स्वयं ही बोली 'सुबह सात-आठ बजे तक आ जायेंगे।' गिरधारी ने 'हूँ' कर दिया। उसके हुंकारा भर देने पर मनकी निश्चिन्त हो गई। थोड़ी देर बाद खर्राटे भरने लगी। गिरधारी धीरे-से उठा दरवाज़े तक गया। चुपचाप खड़ा रहकर लौट आया। सीधा अपनी जगह पर न जाकर माँ के ऊपर झुक गया। मनकी की छाती से कपड़ा सरक गया था। वह देखता रहा, फिर अपनी जगह आकर लेट गया। मनकी के खर्राटे बढ़ते जा रहे थे।

●

और दिनों की बनिस्बत मनकी ज़रा जल्दी उठी। गिरधारी पहले ही उठ गया था। माँ का सब सामान एक जगह इकट्ठा कर दिया था। निश्चिन्तता के साथ बैठा मनकी के उठने की प्रतीक्षा कर रहा था। अभी तक उसने नये कपड़े नहीं बदले थे। पुराना ही जाँघिया पहने था। लम्बा बनियान पहने होने से नंगापन कुछ ढँका हुआ था।

मनकी उठकर मिनटों में नहा-धो आई। गिरधारी उसी तरह बुत बना बैठा रहा। मनकी को कहना पड़ा 'अरे बेटा, बिना कहे क्या कोई काम ही नहीं होगा ! जा, नहा धो ले। तेरे बाबू आते होंगे।'

गिरधारी ने मनकी की तरफ़ देखा। वह बाल बाह रही थी। अभी तक रातवाला ही पेटीकोट पहने थी, झनेना। सब झाँक रहा था। गिरधारी ने नज़र हटा ली। ब्लाउज़ देखने लगा। ब्लाउज़ हमेशा की तरह ढीला नहीं था। आस्तीनों से निकली बाँहें उसे अच्छी लग रही थीं। बाल-बाल बना लेने के बाद मनकी ने गिरधारी से कहा 'जा, तू बाहर चला जा, कपड़े बदल लूं।'

गिरधारी बाहर चला गया। मनकी ने रातवाली पोटली से साड़ी-पेटीकोट निकालकर पहने। बिन्दी लगाकर माँग भरी। पुड़िया में छिपा-कर रखा पाउडर चेहरे पर लगाया। नई चप्पल पहनी। तैयार-वैयार होकर शीशा देखा और हल्का-सा मुस्करा दी।

गिरधारी आया तब भी वह मुस्करा रही थी। गिरधारी ने कनखी से उसे देखा। वह तुरन्त बोली, 'ओ गिरधारी, बता तो मैं कैसी लग रही हूँ ?'

गिरधारी ने सरसरी नज़र डाली, धीरे-से कहा 'अच्छी··· ।' मनकी हँस दी। गिरधारी साफ़ा उठाकर नहाने जाने लगा। मनकी ने तुरन्त टोका 'अपने कपड़े तो लेता जा, इन फटुल्ले कपड़ों को ही पहनेगा ?'

गिरधारी ने एक बार टँगे हुए कपड़ों को देखा। फिर खूँटी से उतार कर साथ लेता गया।

●

गिरधारी नहा-धोकर नये कपड़े पहने लौटा। रामतीरथ ताँगा लेकर आ गया था। लगभग सब सामान रामतीरथ और ताँगेवाले ने मिलकर चढ़ा लिया था। मनकी बहू की तरह धीमे-धीमे बोलकर सामान बताती जा रही थी।

गिरधारी को देखते ही रामतीरथ ने कहा 'अभी तक तैयार नहीं हुआ बे!'

गिरधारी चुपचाप खड़ा रहा। कुछ सामान अभी भी नीचे रह गया था। मनकी ने रामतीरथ को पास बुलाकर कहा 'तुम गिरधारी को रिक्शा के पैसे दे दो, बाकी सामान वह लेता आयेगा।'

रामतीरथ को बात अधिक पसन्द नहीं आई। समझाते हुए कहा 'अरे यह खुद ही आ जाये तो ग़नीमत है। सामान तो सब ताँगे पर ही लद जायेगा। घर इसने देखा ही है। पैदल चला आयेगा।'

मनकी ने गिरधारी की ओर देखा। वह गर्दन झुकाये चुपचाप खड़ा था।

रामतीरथ ने ताँगे वाले से कहा 'चलो जी···' ताँगा चल दिया। मनकी ने पुनः गिरधारी की तरफ़ देखा। उसकी नज़र ताँगे के पहिये पर थी।

ताँगा चले जाने के बाद गिरधारी ने एक चक्कर गैरिज का लगाया। नये कपड़े उतारे और पुराना जाँघिया पहनकर ज़मीन पर लेट गया।

